

UNIVERSAL  
LIBRARY

OU\_186237

UNIVERSAL  
LIBRARY

# रुसी लोक साहित्य

186237

वीर राजेन्द्र शशि



H392  
R95R

आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली-६



OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H.392/R95R Accession No. J.H. 1790

Author कृषि, राजेन्द्र ।

Title ~~कृषि~~ रूसी लोक-साहित्य । 1956

This book should be returned on or before the date  
last marked below.

---



## रूसी लोक-साहित्य

## हमारा अन्य लोक-साहित्य

| जिप्सी (रूस के महाकवि पुश्किन की अमर कृति का श्री ऋषि द्वारा परस अनुवाद) २) | प्रेस में                        |
|-----------------------------------------------------------------------------|----------------------------------|
| काश्मीर की लोक-कथाएँ (१) १)                                                 | ब्रज की लोक-कथाएँ (२)            |
| काश्मीर की लोक-कथाएँ (२) १॥)                                                | आसाम की लोक-कथाएँ                |
| विन्ध्य-भूमि की लोक-कथाएँ १)                                                | गुजरात की लोक-कथाएँ              |
| ब्रज की लोक-कथाएँ १॥)                                                       | महाराष्ट्र की लोक-कथाएँ (१), (२) |
| पंजाब की लोक-कथाएँ १)                                                       | चीन की लोक-कथाएँ (२)             |
| बंगाल की लोक-कथाएँ १॥)                                                      | ग्राम्य लोक-कथाएँ                |
| मालवा की लोक-कथाएँ १॥)                                                      | फारस की लोक-कथाएँ                |
| आंध्र की लोक-कथाएँ १॥)                                                      | पश्चिमी अवध की लोक-कथाएँ         |
| राजस्थान की लोक-कथाएँ १॥)                                                   | कुमाँचल की लोक-कथाएँ             |
| गढ़वाल की लोक-कथाएँ १॥)                                                     | आन्ध्र की लोक-कथाएँ (२)          |
| नेपाल की लोक-कथाएँ १॥)                                                      | काश्मीर की लोक-कथाएँ (३)         |
| हरियाना की लोक-कथाएँ १॥)                                                    | अवध की लोक-कथाएँ (३)             |
| मनोरंजक लोक-कथाएँ (१) १॥)                                                   | मैथिल की लोक-कथाएँ (१), (२)      |
| मनोरंजक लोक-कथाएँ (२) १॥)                                                   | भोजपुर की लोक-कथाएँ (१), (२)     |
| सौराष्ट्र की लोक-कथाएँ १॥)                                                  | गढ़वाल की लोक-कथाएँ (२)          |
| हिमाचल की लोक-कथाएँ १॥)                                                     | पंजाब की लोक-कथाएँ (२)           |
| उत्तर भारत की लोक-कथाएँ (१) १॥)                                             | मनोरंजक लोक-कथाएँ (३), (४)       |
| उत्तर भारत की लोक-कथाएँ (२) १॥)                                             | इण्डोनेशिया की लोक-कथाएँ         |
| उत्तर भारत की लोक-कथाएँ (३) १॥)                                             | सिन्ध की लोक-कथाएँ               |
| निमाड़ी की लोक-कथाएँ (१) १॥)                                                | विदर्भ की लोक-कथाएँ              |
| निमाड़ी की लोक-कथाएँ (२) १॥)                                                | राजनीतिक लोक-कथाएँ (१), (२)      |
| हमारी लोक-कथाएँ (१) १॥)                                                     | हँसाने वाली लोक-कथाएँ (१), (२)   |
| हमारी लोक-कथाएँ (२) १॥)                                                     | विचित्र लोक-कथाएँ                |
| छत्तीसगढ़ की लोक-कथाएँ १॥)                                                  | जापान की लोक-कथाएँ               |
| फ्रांस की लोक-कथाएँ १॥)                                                     | रूस की लोक-कथाएँ (२), (३), (४)   |
| रूस की लोक-कथाएँ १॥)                                                        | आदिवासियों की लोक-कथाएँ (१)      |
| चीन की लोक-कथाएँ १॥)                                                        | आदिवासियों की लोक-कथाएँ (२)      |
| अरब की लोक-कथाएँ १॥)                                                        |                                  |
| जर्मनी की लोक-कथाएँ १॥)                                                     |                                  |
| अवध की लोक-कथाएँ (१) १॥)                                                    |                                  |
| अवध की लोक-कथाएँ (२) १॥)                                                    |                                  |
| उज्जैन की लोक-कथाएँ १॥)                                                     |                                  |
| आदिवासियों की लोक-कथाएँ १॥)                                                 |                                  |
| महाराष्ट्र की लोक-कथाएँ १॥)                                                 |                                  |

# रूसी लोक-साहित्य

[सचित्र]

लेखक

वीर राजेन्द्र ऋषि, एम० ए०

प्रभाकर, रूसी भाषा और साहित्य में डिप्लोमा प्राप्त

प्रस्तावना

नित्यानन्द कानुनगो

केन्द्रीय उपभोक्ता-उद्योग मन्त्री

१९५६

आत्माराम एण्ड संस

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

काश्मीरी गेट

दिल्ली-६

**प्रकाशक**

**रामलाल पुरी**

**आत्माराम एण्ड संस**

**काश्मीरी गेट, दिल्ली-६.**

**[सर्वाधिकार सुरक्षित]**

**मूल्य चार रुपये**

**मुद्रक**

**युनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली-**

परम पूज्य  
भारत रत्न  
डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन  
के  
शुभ चरणों  
में  
समर्पित



## प्रस्तावना

संसार के सभी स्थानों के नर-नारियों की शारीरिक विशिष्टताओं, मानसिक व्यवहार के रूपों, आर्थिक उन्नति, धार्मिक विश्वास अथवा सामाजिक संगठनों आदि में अन्तर देखा जा सकता है किन्तु इन सभी में अभिव्यक्ति की भिन्नता के साथ-साथ कुछ समान या अनुरूप भाव होते हैं। अतः किसी मनुष्य या राष्ट्र को समझने का सर्वोत्तम उपाय यह है कि पहले उसकी भावाभिव्यक्ति को समझा जाय, और फिर उसके द्वारा उनके भावों की गहराई को। भावाभिव्यक्ति का सबसे सरल रूप है राष्ट्र का लोक-साहित्य। रूसी लोक-साहित्य पर यह पुस्तक लिखकर श्री वीर राजेन्द्र ऋषि ने भारत की भारी सेवा की है। मैं श्री ऋषि को भाषा के प्रतिभाशाली विद्यार्थी के रूप में जानता था। मैं उनके भावुक हृदय से भी परिचित हूँ किन्तु उनकी इस पुस्तक को पढ़कर मैं सहज ही उनकी उस भावुकता एवं सहृदयता से प्रभावित हो उठा हूँ जिसके कारण वह रूस की जनता को इस रूप में भारत के सम्मुख प्रस्तुत कर सके हैं कि हम परस्पर बन्धुत्व का अनुभव कर रहे हैं। मैंने रूसी साहित्य के कुछ अनुवाद और रूस पर कई पुस्तकें पढ़ी हैं किन्तु ऐसे सौहार्द का अनुभव मुझे कभी नहीं हुआ जितना श्री ऋषि की इस पुस्तक को पढ़कर हुआ है। अन्य राष्ट्रों की तरह रूस और इसके वासियों में भी परिवर्तन आ रहा है, और बड़े वेग से आ रहा है। सामाजिक संगठन एवं मनुष्यों के सम्बन्ध क्रमशः जटिल से जटिलतर होते जायँगे लेकिन लोक-साहित्य में भाव की सरल अभिव्यक्ति सारी मानव जाति के आधारभूत गुणों के रूप में वर्तमान रहेगी।

६ याकं रोड,

नई दिल्ली

२९ सितम्बर, १९५६

नित्यानन्द कानुनगो



## दो शब्द

१९५२ में रूस से लौटते समय में अपने साथ मूल रूसी भाषा में रूसी लोक-साहित्यविषयक सामग्री ले आया था। रूसी लोक-साहित्य पढ़ने से मुझे पता लगा कि भारत और रूस के रीति-रिवाज लगभग एक जैसे ही हैं। मुझे तो बल्कि ऐसा लगता है कि इस पुस्तक में रूस के पुरातन रीति-रिवाजों का वर्णन न होकर भारत के ही रीति-रिवाजों का वर्णन है। यह बात दोनों देशों की साधारण जनता की भावामिव्यक्ति की समानता और अनुरूपता सिद्ध करती है।

इस पुस्तक के लिये सामग्री मैंने रूसी की मूल पुस्तक “कनीगा ओ रुस्कोम फ़ोल्क्लोरे” (लेखिका : एन० कोल्पाकोवा) से ली है। इस पुस्तक में रूसी लोक-साहित्य के लगभग समस्त प्रकार देने की चेष्टा की गई है। आशा है कि भारत के लोक-साहित्य वैज्ञानिक और साधारण जनता इस पुस्तक को रुचिकर पायेंगे।

६७-ई, देवनगर,  
नई दिल्ली

२५ सितम्बर, १९५६

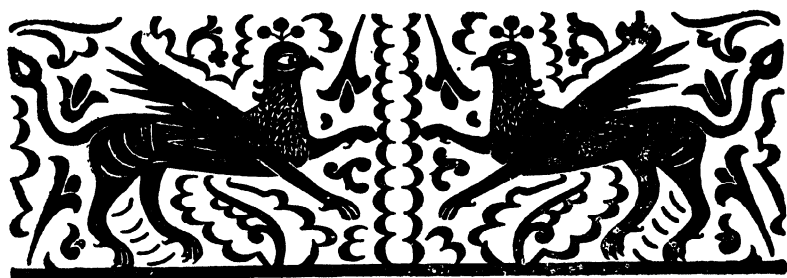
वीर राजेन्द्र ऋषि



## सूचो

|     |                  |      | पृष्ठ |
|-----|------------------|------|-------|
| १.  | जनता का खजाना    | .... | १     |
| २.  | 'जादू' और 'टोना' | .... | ६     |
| ३.  | प्रकृति-पूजन     | .... | १६    |
| ४.  | विवाह-गीत        | .... | ३२    |
| ५.  | विलाप-गीत        | .... | ५४    |
| ६.  | बिलीना           | .... | ६४    |
| ७.  | ऐतिहासिक गीत     | .... | ७८    |
| ८.  | लोक-कथाएँ        | .... | ८८    |
| ९.  | बिवालश्चाना      | .... | ९६    |
| १०. | खेल और नृत्य-गीत | .... | १०५   |
| ११. | चास्तूस्की       | .... | ११०   |
| १२. | बुभारत           | .... | १२२   |
| १३. | बाल लोक-साहित्य  | .... | १३६   |





9

## जनता का खज़ाना

संसार में न केवल सर्वप्रथम पुस्तक प्रकाशित होने से पहले बल्कि लिखाई के लक्षणों के प्रादुर्भाव से भी कई शताब्दियाँ पहले पृथ्वी पर बसनेवाले लोग गीत, कथाएँ तथा नृत्य जानते थे। यह गीत और कथाएँ आजकल के गीतों और कथाओं से सर्वथा भिन्न थे और उनकी अदायगी का ढंग भी अपना ही था।

मोटे और बिखरे बालोंवाले जंगली लोग, हाथों में तीर-कमान लिये आदिम-युग के जंगलों की सीमाओं पर अपने पड़ोसी शत्रु-कबीलों की ओर प्रस्थान करते हुए अपरिचित भाषा में युद्ध-गीत गाते थे। चीत्कारों की भाँति पद बहुत छोटे-छोटे होते थे, परन्तु ठीक उनके ही ताल पर योद्धागण अपने कदम उठाते थे।

बिखरे हुए बालोंवाली अधनंगी स्त्रियाँ, अपनी भोंपड़ियों के सामने एक घेरे में बैठकर, तालपूर्वक तालियाँ बजाया करती थीं। उनमें से एक खुले मैदान में उस ताल पर नाचा करती। एक ही स्वर में बार-बार दुहराये गये पद ही उस आदिम-युग के नृत्य के ताल का काम देते थे।

प्रस्थान के लिए एकत्रित हो, अपने तीरों की नोकों को तीखा कर, अपने कमानों की डोरों का ध्यानपूर्वक निरीक्षण कर, आदिम पुरुष प्रकृति की शक्तियों और जंगल के भूत-प्रेतों से अपने शत्रुओं का अधिक संख्या में वध करने तथा अपने आपको जीवित और सुरक्षित रखने के लिए सहायता माँगता था।

जंगलों में शिकार खेलने तथा जंगली नदियों में मछलियाँ पकड़कर लौटने पर लोग अपनी-अपनी वीरता का बखान करते और शाम को अलाव के सामने बैठकर अपने युद्धों और अपनी अनुभूत विपत्तियों का एक दूसरे से वर्णन करते ।

मौखिक शब्द और प्राचीन कथाएँ, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी पिता के मुख से पुत्र तक पहुँचती गईं, वस्तुतः एक आरम्भ था जिनसे सहस्र वर्ष पश्चात् देवताविषयक कल्पित कथाओं, किस्सों, कहानियों और तत्पश्चात् विज्ञान और साहित्य का जन्म हुआ । शताब्दियाँ बीतने के साथ-साथ यह मौखिक शब्द और लोक-गीतों की तालें आदिम-युग के जंगलों से निकलकर समस्त पृथ्वी पर बिखर गईं और भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का निर्माण करके मौखिक तथा संगीत लोक-रचनाओं का आधार बन गईं ।

जिन भौतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों और प्रकृति के अनुकूल उनका जीवन-प्रवाह बढ़ रहा था, लोगों ने भिन्न संस्कृतियों का निर्माण किया । परन्तु उस समय भी जबकि उस बृहत् तथा जटिल मानव-संस्कृति का प्रादुर्भाव तथा विकास हुआ जिसका अध्ययन हम आज करते हैं और प्रयोग में लाते हैं, दूर भूतकाल की मौखिक कथाओं और प्राचीन गीतों की तानों का इस संस्कृति से सर्वथा लोप नहीं हुआ ।

प्रत्येक जाति ने अपने इतिहास के दौरान में मौखिक रचनाओं के अपने खजाने की भिन्न-भिन्न रीति से रक्षा की है । कोई उसकी अधिक रक्षा कर पाए हैं और कोई बहुत कम । कोई अपने प्राचीन लोक-गीतों और कथाओं को सर्वथा खो बैठे हैं, उनके बदले किताबी साहित्य को अपना चुके हैं और आजकल भी बहुत कम नवीन रचनाओं का निर्माण करते हैं । दूसरे अपने प्राचीन गीतों और कथाओं तथा अपने सजीव और विकासोन्मुखी जीवन के प्रभाव में नये लोक-गीतों की रचना-शक्ति की एक बहुमूल्य वस्तु की तरह शताब्दियों से रक्षा करते आये हैं ।

इन लोक-गीतों, कथाओं तथा लोक-साहित्य के अन्य प्रकारों की, उस समय ही नहीं जबकि लिखाई का अभी प्रादुर्भाव नहीं हुआ था, परन्तु हमारे बहुत ही निकटवर्ती समय में भी, क्या शब्द-ध्वनि होगी यह अनुमान करना अत्यन्त कठिन है । उदाहरणार्थ, रूसी लोक-साहित्य पुस्तक रूप में आज से केवल लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व लिखा जाने लगा और अधिकांश गीत, कथाएँ, कहावतें और बुझारतें जो आज उपलब्ध हैं, केवल उन्नीसवीं शताब्दी में लिपिबद्ध हुईं ।

लोक-रचनाएँ बिना किसी रचयिता के अपने आप ही नहीं बन गईं । रूसी लोक-साहित्य के प्रत्येक स्मारक को उसके अपने ही आधार पर किसी एक व्यक्ति

ने रचा है जिसका नाम प्रायः किसी को भी याद नहीं रहा है। परन्तु जहाँ अज्ञात कवि की रचनाएँ सफ़ा हुईं और उनमें उस समय के किसानों और मजदूरों की प्रवृत्तियों और भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई, तो वे तुरन्त अपनाती गईं, याद रखी जाने लगीं और रोटी के कौर की भाँति एक मुँह से दूसरे मुँह तक पहुँचती-पहुँचती अपने रचयिता से दूर खिसकती गईं। इस क्रम में उन गीतों और कथाओं में जहाँ-तहाँ परिवर्तन आ गये। गानेवाले को कोई न कोई शब्द भूल जाते थे, कहानी कहनेवाले को ऐसा लगता था कि कथा अमुक स्थान पर अधिक व्योरे में कही जानी चाहिए। इसके विपरीत कोई व्यक्ति उसको संक्षिप्त कर देता। प्रत्येक व्यक्ति गीत को अपने ही ढंग से गाता और अपने ही ढंग से कहानी सुनाता। बस गीत, कहानी और बिलीना इसी तरह दूर होता गया और असंख्य कलाकारों की निजी रुचि के अनुसार परिवर्तित और परिष्कृत होता गया। ऐसे क्रम में से गुजरे बिलीने या गीत को हम 'लोक-कृति' कह सकते हैं, क्योंकि ऐसी रचना को असंख्य लोगों के मुँह ने ग्रहण किया और दुहराया है। अज्ञात कलाकारों ने उनमें अपनी ओर से कुछ न कुछ जोड़ दिया है और उसे प्रिय समझकर अपनाया है।

यह निर्धारित करने के लिए कि अमुक रचना 'लोक-कृति' है या नहीं वैज्ञानिकों ने यह परख रखी है, उस रचना का जन्म जनता के बीच हुआ हो तथा जीवन भी जनता के बीच ही बीता हो, वह लोगों के दृष्टिकोण का प्रतिबिम्ब हों, वह अपने रचयिता को सर्वथा भूल चुकी हों और जनता के मुँह द्वारा बहुत बार दुहराई गई हों। जिस रचना पर यह सब बातें घटती हों केवल उस रचना को ही 'लोक-कृति' कहा जा सकता है।

×

×

×

ग्यारहवीं शताब्दी से आरम्भ हुए रूस के प्राचीन इतिहास में रूसी लोक-साहित्य के कुछ नमूने मिलते हैं। उदाहरणार्थ, ग्यारहवीं शताब्दी के इतिहास में ही हमें कहावतों, मौखिक रचनाओं, कहानियों और गाथाओं के उद्धरण मिलते हैं।

ग्यारहवीं शताब्दी से लेकर चौदहवीं शताब्दी तक उस समय के लोक-साहित्य के विषय में केवल पृथक्-पृथक् तथा अधूरे प्रमाण उपलब्ध हैं। इनसे अनुमान लगाया जा सकता है कि इन शताब्दियों में रूसी जनता बिलीने (वीर गीत), गीत, कहानियाँ, बुझारतें और विवाह की रस्में जानते थे। परन्तु उनको कैसे प्रयोग में लाते थे और उनके असली शब्द क्या थे—इस बारे में कुछ भी पता नहीं चलता। यह सब रचनाएँ लिपिबद्ध हुए बिना ही लुप्त हो गईं।

इसी दौरान में रूस में लिखाई तथा शिक्षा का आविष्कार और प्रसार हुआ। इच्छा होने पर उस समय के अधिकांश रूसी लोक-साहित्य को लिपिबद्ध किया जा सकता था। परन्तु उस समय रूस में लिखाई प्रधानतः चर्च के हाथ में थी। चर्च लोक-गीतों, खेलों और रीति-रिवाजों को उपेक्षा की दृष्टि से देखता था और उनकी निन्दा करता था। ये गीत और खेल जो मुख्यतः विधर्मियों (Pagans) द्वारा रचे गये थे, चर्चवालों को पैशाची और पापजनक दिखाई पड़ते थे। इसके अलावा लोक-कथाओं, गीतों, चुटकुलों और कहावतों में प्रायः पादरियों की मक्कारी, लोभ और दूसरे अवगुणों का मजाक उड़ाया जाता था इसलिए यह स्वाभाविक था कि चर्चवाले इस सामग्री को लोक-व्यवहार से बाहर निकाल फेंकने का भरसक प्रयत्न करते थे।

एक कारण और भी था कि क्यों किसी ने भी रूसी लोक-साहित्य के स्मारकों को लिपिबद्ध नहीं किया। स्पष्ट रूप से उन शताब्दियों में प्राचीन रूस की सब जातियों का जीवन एक अत्यन्त व्यवहारिक वस्तु की भाँति लोक-साहित्य से पूर्णतः ओत-प्रोत था। न ही गाँवों में, न ही शहरों में (जो उस समय बड़े-बड़े गाँवों के ही समान थे) गीत, कहानियों और लोक-तमाशों के अतिरिक्त मनोविनोद की कोई सामग्री थी। किसी के भी मस्तिष्क में यह नहीं आया कि वे लोक-साहित्य की ओर उचित ध्यान देते और उन लोक-गीतों और कहानियों को लिपिबद्ध करना आरम्भ कर देते जिनको वे जीवित रूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे से आगे देते जा रहे थे और जो अलिखित होते हुए भी सब को याद थे।

सर्दों की लम्बी-लम्बी रातों को मशाल की रोशनी में गाँववाले, तकली पर सूत कातती हुई, बूढ़ी अम्मा के चारों ओर बैठकर वासीलिस परिमुद्री, काधी और इवानत्सारेविच के बारे में शताब्दियों से कहानियाँ सुनते आये हैं। वसंत के दिनों में नदी-किनारे की पहाड़ियों पर चमकदार चीड़ के पेड़ों के नीचे, घर में बुने साराफान पहने, गाँव की लड़कियाँ सामूहिक गान गातीं और गीतों की ताल पर 'मशाल' के और 'बाजरा बोना' के खेल खेलतीं।

पतझड़ में सूर्यास्त की लाली में जंगली झीलों के किनारे बूढ़े मछुए अपने जालों की मरम्मत किया करते और वीरों के विषय में बिलीने गाते। अपने बाबा के चारों ओर बैठे, अपनी चमकदार आँखों से एक दूसरे की ओर ताकते हुए उनके पोते उनको बड़े ध्यान और चाव से सुनते।

काल्पनिक चरित्रों का निर्माण हुआ। वीरों के अनुपम तथा असाधारण कारनामों को सुनकर श्रोतागण मंत्रमुग्ध और प्रोत्साहित हो उठते। चिरकाल तक,

प्रायः जीवन-पर्यन्त उन बिलीनों और गीतों की तानें याद रहतीं। इन चरित्रों और तानों में कलाकारों ने बहुत कुछ भर दिया था—वह सब कुछ जिसका स्वर जीवन में सुनाई पड़ता था, जो उनके मस्तिष्क में आया था और जिस पर जीवन में वे विलाप करते थे, वह सब कुछ जिसकी कल्पना करते थे, आशा करते थे तथा जिससे वे प्रसन्न होते थे वह गीत और कहानियाँ प्राचीन रूस में चारों ओर घूमीं। बर्फ से ढंके गाँव में भी उनकी ध्वनि सुनाई पड़ती थी और मास्को के हरमों में भी उनकी झंकार थी। खूब पेट भरकर खाना खाने के उपरान्त, गरमाई देनेवाले बिस्तर पर लेटे हुए 'बोयारों' (रईसों) के पास गाँव से पकड़कर लाये गये कहानी कहनेवाले बैठा करते थे। वसंत में जारों और कन्याजों (राजों) के 'वोतचीनों' (विरासत में मिली रियासतें) में रूस की रानियाँ और पटरानियाँ भी अपनी बाँदियों के साथ अधिकांश वही सामूहिक गान तथा अन्य गीत गाती थीं जो गाँव की गलियों में गाये जाते थे। जारों के हरमों तथा गाँव की टूटी-फूटी भागावट में एक ही प्रकार के जादू-टोने पर विश्वास किया जाता था, एक ही प्रकार की लोरियों से बच्चों को भूला भुलाया जाता था। 'बपतस्मे' की रात और 'सव्यात्काओं' (एक त्योहार) में एक ही प्रकार के गीत गाये जाते थे। भाग्य भाखने का ढंग भी एक ही था।

रूस के सत्रहवीं शताब्दी तक के लोक-साहित्य के अस्तित्व के बारे में बहुत कम लिखित प्रमाण मिलते हैं। परन्तु सत्रहवीं शताब्दी के पश्चात् लोक-साहित्य विषयक बहुत से लेख सुरक्षित हो गये, भले ही वे प्रायः फुटकर तथा अपूर्ण थे। उदाहरणार्थ, तत्कालीन शिक्षित लोगों के पास कहावतों के हस्तलिखित संग्रह थे। अधिकांश बिलीने और गीत भी लिपिबद्ध हो चुके थे। तत्पश्चात् सत्रहवीं शताब्दी के कानून सम्बन्धी प्राचीन ग्रन्थ रक्षा-गृहों में जादू-टोने विषयक पत्रक जिनके आधार पर प्रायः लोगों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जाती थी, सुरक्षित हो गये। किसी 'चिकित्सा' करनेवाली बुढ़िया के विषय में शिकायत दर्ज की जाती थी कि वह 'जादुई' शब्दों द्वारा चिकित्सा करती है। बुढ़िया को पकड़ लिया जाता था और उसको तरह-तरह के दुख दिये जाते थे। उसका अपराध सिद्ध करने के लिए प्रमाण-रूप में अभियोग-पत्र के साथ जादू-टोने के शब्दों की प्रति जोड़ दी जाती थी। अभियुक्त को डरा-धमकाकर जज के सामने उनको दुहराने पर विवश किया जाता था। उन 'कौलदूनों' (जादूगरों) 'कौलदूनियों' को बहुत ही पीड़ा दी जाती थी जिन पर जार या उसके बन्धु-बान्धवों के प्रति बुरी भावनाएँ होने का सन्देह किया जाता था। मास्को के जार 'टोने' से गाँव के बूढ़ों से भी अधिक डरते थे। उनका विश्वास था कि जार के कुटुम्ब के 'नाश' तथा 'बरबाद' करने के लिए जादू के

विशेष शब्द हैं। इन शब्दों को जानने के लिए जादूगरों का बुरी तरह से पीछा किया जाता था।

१६४५ से १६७६ तक रूस में अलेक्सेई मिखाइलेविच का राज्य था। वह कट्टर धार्मिक और चर्च के सब उसूलों को माननेवाला था। उसके राज्य-काल में धार्मिक और चर्च-सत्ता तथा लोक-रचना में संघर्ष बहुत तीव्र हो उठा। ज़ार ने एक फरमान जारी किया—

“लोगों के समस्त वाद्य-यंत्रों को मास्को नदी तट पर इकट्ठा करके बड़ी धूम-धाम से जलाया जाने और लोक-रचना के कलाकारों—विदूषकों, गानेवालों और कहानी कहनेवालों को मास्को से बहुत दूर देश की सीमा तक भगा दिया जाय।”

ज़ार को प्रसन्न करने के लिए बोयारों (रईसों) ने भी हथियार उठा लिये। सत्रहवीं शताब्दी के एक दिलचस्प लेख-पत्र से उस समय के बोयारों के लोक-साहित्य और संगीत से सम्बन्ध का पता चलता है। वह फस्येवोलगा के एक बोयार का फरमान है जिसमें उसने अपनी जायदाद के प्रबन्ध-कर्ता को निम्नलिखित हुक्म दिया था—

“जहाँ भी तुम्हें डोमरी (एक प्रकार की सारंगी), सुरनी (घोड़े के सिर के आकार का एक बाजा), गुदकी (धूत), गुसली (बेंजो की किस्म का एक बाजा), खारी (बनावटी चेहरे) और बाजों का काम देनेवाले पैशाची बर्तन मिलें उन सबको तोड़ डालने और जला देने का हुक्म दिया जाता है।”

ऐसे हुक्म का उल्लंघन करनेवाले को कड़ा दण्ड दिया जाता था। इसलिए यह समझना कठिन नहीं कि इसी कारण उस समय बहुत से प्रतिभाशाली लोक-गायक, अभिनेता और कहानी कहनेवाले शहरों से उत्तर में पामोर के जंगलों की ओर भाग गये। वह अपने साथ अपनी ‘गुदकी, डोमरी, गुसली और खारी’ अर्थात् बनावटी चेहरे भी लेते गये जिनको पहनकर विदूषक सव्यात्काओं और मासलेनित्सी के त्योहारों पर लोगों के सम्मुख अपनी कला का प्रदर्शन किया करते थे।

अठारहवीं शताब्दी में लोक-साहित्य के प्रति धारणा कुछ बदल गई। अब सरकार ने उस पर से बंदिशें उठा ली थीं। इसलिए अठारहवीं शताब्दी के लोक-साहित्य के बारे में बहुत कुछ ज्ञान है। लेख-पत्रों में लोक-साहित्य विषयक पर्याप्त सामग्री तथा उसके अस्तित्व के बारे में बहुत से प्रमाण सुरक्षित हो गये।

अठारहवीं शताब्दी में लोक-रचना जीवित हो उठी और रूसी समाज के सभी क्षेत्रों में खूब फली-फूली। अठारहवीं शताब्दी के रईसों के विवाहों पर तथा रूसी ज़ारों और मल्काओं के दरबार में भी कहानी कहनेवालों और गानेवालों को देखा

जा सकता था। लोक-गीत और कहानियों के कलाकार मत्का एनिज़बैथ को घेरे रहते थे। कैथेराइन द्वितीया के दरबार में शाही नृत्यों पर 'गुथ जा कोडे' की खेलें खेली जाती थीं और सामूहिक गान गाये जाते थे। तत्कालीन प्रमुख रईसों के पास सामूहिक गान करनेवालों की बड़ी-बड़ी मंडलियाँ रहती थीं और वे प्रायः लोक-गीत, नृत्य और किस्से-कहानियाँ सुनकर मन बहलाया करते थे। पीतर प्रथम द्वारा व्यवस्थित सांस्कृतिक रीति-रिवाजों और मनबहलाव के साधनों के बावजूद भी अठारहवीं शताब्दी के रूसी रईसों ने अपने जीवन में अपने पूर्वजों के बहुत से रीति-रिवाजों तथा आदेशों को और साथ-साथ मनबहलाव के साधनों को सुट्टा बनाए रखा।

उस समय उच्च-शिक्षित लोगों में लोक-रचना के प्रति गम्भीर और लगभग वैज्ञानिक दिनचस्पी पैदा हो चुकी थी। अठारहवीं शताब्दी में बहुत से लोग लोक-साहित्य-संग्रह तथा उसको लिपिबद्ध करने के कार्य में लग गये थे। लोक-गीत छोटी-छोटी पुस्तकों के रूप में प्रकाशित होने लगे। यह बहुधा रईसों के पढ़ने के लिए होते थे। लोक-गीतों और कहानियों के संग्रह प्रथम बार प्रकाशित होने लगे।

उन्नीसवीं शताब्दी के तीसवें वर्ष के पश्चात् वैज्ञानिक रूप से रूसी लोक-साहित्य-संग्रह तथा अनुशीलन का कार्य पूर्ण रूप से आरम्भ हुआ। रूसी संस्कृति के प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा महाकवि पुश्किन के नेतृत्व में सुविख्यात लेखकों ने लोक-रचना के स्मारकों का बड़ा भारी मूल्यांकन किया। वे समझते थे कि एक सुलक्षित लोक-शब्द तथा लोक-रचना के चित्रों में कितनी बुद्धिमत्ता, सुन्दरता और ऐतिहासिक महत्ता भरी है। बहुत से रूसी लेखक स्वयं लोक-साहित्य के संग्रहकर्ता थे। उन्होंने गाँवों में जाकर लोक-गीतों, कहावतों, किस्से-कहानियों और अन्य प्रकार की लोक-साहित्य विषयक सामग्री को लिपिबद्ध किया, किसानों के पास बैठकर जीवित लोक-भाषा का अनुशीलन किया और गाँव के धर्म, रीति-रिवाजों से परिपूर्ण जीवन और धर्म के ऐसे बहुत से वर्णन रूसी साहित्यिक पुस्तकों में प्रकाशित हो गये। विशेषकर पुश्किन, गोगोल, नेक्रासोव, तालस्ताय, लेसकोव और गोर्की द्वारा बहुत सी लोक-साहित्य विषयक सामग्री साहित्य में आ गई।

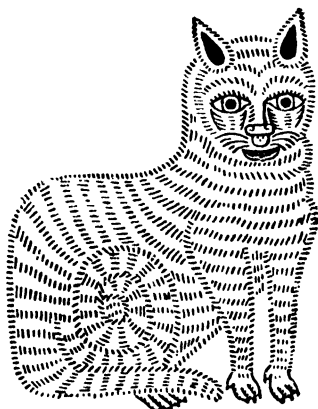
“नवलेखको ! साधारण लोक-कथाओं को पढ़ो, ताकि रूसी भाषा की विलक्षणता को समझ सको।”—पुश्किन ने लिखा है। मिखाइलोवस्की में नज़रबन्दी के दौरान में उन्होंने ही अपने भाई को एक पत्र में बड़ी भावुकता से लिखा था—

“कहानियाँ सुनता हूँ और अपने पालन-पोषण में रह गई कमियों को पूरा करता हूँ। क्या ही आनन्द है इन कहानियों में ! प्रत्येक कहानी कविता है !”

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में बिलीनों, गीतों, कहानियों, बुझारतों और अन्य लोक-साहित्य सामग्री के संग्रह प्रकाशित हुए। बहुत सी वैज्ञानिक संस्थाओं

ने लोक-साहित्य के अध्ययन विषयक प्रश्नों पर महत्वपूर्ण अन्वेषण-कार्य आरम्भ किया।

आजकल रूस में लोक-साहित्य की ओर उचित ध्यान दिया जाता है। लोक-रचनाओं के संग्रह तथा अध्ययन का कार्य सुव्यवस्थित ढंग से होने लगा है। लोक-साहित्य वैज्ञानिक लोक-साहित्य सम्बन्धी सामग्री एकत्र करने के निमित्त प्रतिवर्ष एकस्पीडीशनें बनाकर तथा व्यक्तिगत रूप से यात्राओं की व्यवस्था करते हैं। मास्को आदि बड़े-बड़े शहरों में लोक-साहित्य विषयक केन्द्रीय अजायबघर होने के अलावा प्रादेशिक कार्य भी बड़ी व्यापकता से किया जाता है। लगभग प्रत्येक प्रदेश और ज़िले में स्थानीय अजायबघर हैं जहाँ उस प्रदेश या ज़िले की प्राकृतिक सुन्दरता, व्यापार, आर्थिक व्यवस्था, इतिहास और कला सम्बन्धी सामग्री एकत्रित की जाती है। यह सामग्री जहाँ अजायबघर के पक्के कर्मचारियों द्वारा इकट्ठी की जाती है वहाँ कस्बों और गाँवों में काम करने वाले अवैतनिक कार्यकर्ता भी इस क्षेत्र में सहायनीय काम करते हैं।





२

## ‘जादू’ और ‘टोना’

‘टोना’—यह लोक-साहित्य का एक मौखिक प्रकार है, जो एक अशिक्षित व्यक्ति की आँखों में एक प्रकार की जादुई शक्ति का संचार कर देता है।

रूस में इन गुप्त और जादुई शब्दों में विश्वास का अंकुर उस समय ही हो चुका था जब आदिकालिक प्रकृति में वास करनेवाले लोग केवल उस पर काबू ही नहीं पा सकते थे, अपितु उसके विभिन्न रूपों को समझने तक में भी असमर्थ थे। बिजली की कड़क, तूफ़ान और जंगली पशुओं का भय और अदृष्ट खतरों के सम्मुख विवशता आदिकालिक मनुष्य को चारों ओर से दबाये रखती थी। प्रकृति उसे प्राणयुक्त, डरावनी और शत्रु रूप में दिखाई पड़ती थी। ऐसा प्रतीत होता था कि जिस प्रकार पड़ोसी को किसी बात के लिए मनाया जा सकता है या प्रार्थना की जा सकती है, उसी प्रकार प्रकृति को भी, जिसमें उन्हें जीवन के पूर्ण चिह्न दिखाई पड़ते थे, (जैसे बिजली कड़कड़ाती है, वायु चलती है, पेड़ों के पत्ते झूलते हैं और खड़खड़ करते हैं, पानी भागता है और शोर मचाता है) प्रार्थना करके उसमें अपने प्रति दया-भाव उत्पन्न किया जा सकता है। यदि मनुष्य को शब्दों द्वारा मनाया जा सकता है, तो उसी प्रकार प्रकृति को मनाने के तथा उससे बातचीत करने के लिए किसी न किसी प्रकार के शब्द अवश्य होने चाहिएँ। परन्तु ऐसे शब्द कोई साधारण शब्द न होकर किसी प्रकार के ‘जादुई’ तथा विशेष शब्द हो सकते थे।

ऐसे शब्द साधारण व्यक्ति नहीं जानता था। प्रकृति के साथ बातचीत करने तथा उनके लिए उससे आराधना का कार्य आदिकालिक कबीला अपने बूढ़े सरदारों

को सौंप देता था, जो धीरे-धीरे पुरोहित तथा जनता और प्राकृतिक शक्तियों के बीच-बचौले बन गये। इन बूढ़े, बुद्धिमान् और अनुभवी पुरोहितों के लिए वे शब्द जानना आवश्यक हो गया, जिनसे बादलों की गर्ज, बिजली की कड़क, सूर्य की किरणों, अग्नि तथा वायु से प्रार्थना की जा सकती थी।

ऐसे विचार थे प्राचीन रूसी पूर्वजों के।

## जादू-टोने का प्रारम्भ

शब्द की जादुई शक्ति और टोने में विश्वास का जन्म उस समय हुआ जब मनुष्य आदिकालिक जंगलों से बाहर निकल आया था, जब जातिवर्गीय समाज और धर्म के विभिन्न सिद्धान्तों का विकास होना आरम्भ हुआ था। प्राचीन रूस में गाँव का तो कहना ही क्या है क्योंकि वहाँ तो टोने का सर्वथा लोप केवल हाल ही में हुआ है, परन्तु टोने में विश्वास शहरों में भी काफी देर तक चलता रहा।

प्राचीन रूसियों के विश्वासानुसार बहुत सी बातों के लिए टोने की आवश्यकता थी। गृहस्थी के कल्याण की वस्तुएँ—गाँव, फसल और शिकार आदि रक्षित रखनी होती थीं। अपना तथा अपने घरेलू पशुओं का बीमारी और किसी जादूगर द्वारा किये गये 'टोने' से बचाव करना था। सफल घरेलू जीवन का निर्माण करना था। अपने सरदार और जार का कृपापात्र बनना था। इन सब के लिए तथा अन्य बातों के लिए प्राचीन रूस में अपने-अपने 'शब्द' और अपनी-अपनी जादू की सरल रस्में थीं।

यदि आप आज भी किसी दूरवर्ती प्रदेश, उदाहरणार्थ उत्तरी बेलोमोर्य, तेरस्की तट तथा कौलस्की द्वीप के दक्षिणी किनारे पर जायें और वहाँ के वूढ़ों से जादू-टोने के बारे में बात-चीत करें तो आपको विश्वास आ जायगा कि इस जानेवाली पीढ़ी के मस्तिष्क में आदिकालिक मनुष्य की याद दिलानेवाली रूढ़ियाँ और अंध-विश्वास अभी तक जीवित हैं।

तेरस्की तट की जातियों का प्रधान पेशा मछलियाँ पकड़ना है। इस पेशे से सम्बन्ध रखनेवाली सब वस्तुएँ प्राचीन शब्दों तथा अन्य शब्दों से भरी हुई हैं। पोमोर्य की समृद्धता है सामन मछली जो सागर में तथा उसके समीपवर्ती नदियों में पकड़ी जाती है। नदियों पर मछली पकड़ने की देख-भाल का काम पहले साधारणतः स्थानीय जादूगर किया करते थे। वे बूढ़े अनुभवी माहीगीर हुआ करते थे जो अपने गाँववालों के मतानुसार अलौकिक अनुभव और अज्ञात शक्ति से सम्पन्न माने जाते थे। यदि नदी में देर तक मछलियाँ न आतीं तो समझ लिया जाता था कि किसी दूसरे जादूगर

ने नदी को ‘खराब’ कर दिया है और अपने ‘शब्दों’ द्वारा चुपके से मछलियों को अपने गाँव की ओर घसीट ले गया है। तब उनका अपना स्थानीय जादूगर पानी में जाकर गुप्त शब्दों से दूसरे जादूगर द्वारा छोड़े गये दानवों को भगा देता। उनके विश्वासानुसार दानव मछलियों को वहाँ के जालों में फँसने नहीं देते थे। ईर्ष्या के वशीभूत होकर अपने पड़ोसियों को हानि पहुँचाने के लिए भी मछली पकड़ने के स्थान को कोई दुष्ट मनुष्य ‘खराब’ कर देता। हाँ, यदि रात्रि के समय अँधेरे में अपने पड़ोसी के मछली पकड़ने के स्थान पर जाकर उसकी खिड़की के नीचे की रेत की एक मुट्ठी उठा लाये या लटकते हुए उसके मछली पकड़ने के जाल से जल की गहराई नापने का लङ्गर काट लाये तो गाँव के विश्वासानुसार सारी की सारी मछलियाँ तुम्हारे पास आ जायँगी। मर्नों मुट्ठी भर रेत के साथ-साथ उस तरह से दूसरे का सारा कारोबार समेट लाना था। ऐसा करते समय धीरे-धीरे जादू के विशेष शब्दों का पाठ करना पड़ता था।

ऐसे कुकर्माँ से बचाव भी ‘शब्द’-शक्ति द्वारा ही किया जा सकता था। इसी कारण से प्राचीन काल से मछली पकड़ने का समय आने पर माहीगीर अँधेरे में अपनी भोंपड़ी के चारों ओर तीन बार घूमते और साथ-साथ यह मंत्र पढ़ते—

“ब्लागोसलोवी, गोस्पोदी बोभ्ये। वो ईम्या ओत्सा ई सीना ई सव्यातोवो दूखा। आमीन। काक ने लूनलो उरेकी, नी प्रिजोरी, नी लीखीये ग्लाजा, नी स्वोया दूमा, नी वस्त्रेच्नोय ओग्वोरी नी भेलेजनी ज़ोल बुलात, ताक-भ्ने को म्ये राबू बोभ्येयू, ने लूनली-बी, नी उरेकी, नी प्रिजोरी, नी लीखीये स्लोवा-ओग्वोरी, नी स्वोया दूमा। स वोस्तोका, स जापादा, च़तोबी सो फ़्स्येख़ चेतोरयेख़ स्तोरोन ने प्रीवेज़ली बी ज़लीये ल्यूदी ई ज़लीये कौलदूनी नेनाविस्तनकी। बूद्येत मोय मोलोदेत्स्कीये स्लोवा नेबो क्ल्युच, ज़ेमल्या ज़ामोक, ना खोद साभ्नेन, ना वोस्क क्रमेन।”

अर्थात्—“कृपा करो हे देव ! पिता, पुत्र तथा पवित्र आत्मा के नाम पर। जिस प्रकार लोहे के टुकड़े पर न ही बुरी वाणी, न ही कुदृष्टि, न ही बुरी आँखें, न ही अपने विचार, न ही टोना असर करता है, उसी प्रकार मुझ देवों के दास पर भी बुरी वाणी, कुदृष्टि, बुरी आँख, जादुई शब्द तथा अपने विचार असर न करें। पूर्व से, पश्चिम से, ताकि चारों ओर से दुष्ट लोग और घृणा के पात्र दुष्ट जादूगर नुकसान न पहुँचावें। मेरे जवान शब्दों, तुम आकाश की चाबी, पृथ्वी का ताला, दरवाज़े की अरली, मोम पर चकमक पत्थर बन जाओ।”

यदि कारोबार के स्थान को किसी ने 'खराब' नहीं किया प्रत्युत वह प्रकृति से ही 'नेत्रोपाभनी' (जहाँ मछलियाँ न पकड़ी जा सकें) हो, तो मालिक तुरन्त शब्द-शक्ति द्वारा अपनी सहायता करता। वह फिर ऐसे ही रात को अपनी भोंपड़ी के इर्द-गिर्द तीन बार घूमकर जादू के शब्दों का पाठ करता—

“स्तान् या, राब बोभीई, ग्लागोस्लोव्यास् वीईदू पेरेक्रैस्त्यास्, इज द्वेरयेय व द्वेरी, इज वरोत व वरोता, वीईदू व बालेचे चिस्तो पोल्थे। ताम येस्त्य मोय बुलातनी कोन्। स्काचेय, प्यायेय पो पेन्यू, पो कोरोन्य, पो बालूचेमू काम्न्ये। ने इमात नाद सोबोय नी उरेकू, नी प्रीज़ोरू, नी लीखोवो, चेलोवेका ओग्वोरू, नी स्वोयेय खुदोय दूमी। ई ताकभेबी ऊ मोन्या राबा बोभीया, ई स्काकाला बी, ई पत्यासाला बी पो तोनी सेमगा, कोरोय स्वेतीला रीबा क्रास्ना, ई ने जनाला बी नाद सोबाये नी लीखोवो चेलोवेका ओग्वोरू, नी स्वोयेय ग्लूपोय दूमी। ना तेभ्या ई बुलात्येन नोभू तोचू, खोचू पोकोलोत् ई देरजात्य, बोगा ने बोयूस्, ल्युद्येय ने स्तार-शूस्, बुद्य मोय मोलोवेत्स्कीय स्लोवा नेबो क्ल्युच।”

अर्थात्—“खड़ा हूँ मैं देव का दास, आशीर्वाद पाकर बाहर जाऊँगा। कील कर, एक द्वार से दूसरे द्वार पर, एक दरवाजे से दूसरे दरवाजे पर, मैं दूर खुले मैदान में बाहर जाऊँगा। वहाँ मेरा लोहे का घोड़ा है। वह फुदकता है, नाचता है, पेड़ों के टूटों पर से, जड़ों पर से, पत्थरों पर से। उसको न ही बुरी वाणी, न ही बुरी नज़र, न ही दुष्ट की कुदृष्टि और न ही अपने बुरे विचार लगते हैं। और इसी प्रकार मेरे, देव के दास के, पास भी टन भर सामन मछलियाँ फुदकें, नाचें; लाल मछली चमके और उस पर दुष्ट की बुरी नज़र न लगे और न ही अपने बुरे विचार। तेरे पर मैं अपना लोहे का चाकू तेज करता हूँ, तोड़ डालूँगा, काट डालूँगा, देव से नहीं डरता, लोगों से भय नहीं खाता। मेरे जवान शब्दों, तुम आकाश की ताली बन जाओ।”

कारेलिन जंगल के गाँवों में, जहाँ चिरकाल से लोगों का पेशा पशु पालना रहा है, कुछ समय पहले तक भी पशुओं की देख-भाल सम्बन्धी जादू के रीति-रिवाज थे।

कारेलिन के प्राचीन गाँव में वसंत में पहली बार पशु चरागाह में एक बड़ी शानदार रस्म के साथ हाँके जाते थे। खुले चौपाट द्वार से मालिक पशुओं को विशेषकर इस अवसर के लिए ईसा की मूर्ति के पीछे से लाई गई तरई की पवित्र टहनी से हाँकते थे। बन्ने (गाँव की सीमा) पर इकट्ठे होते हुए पशुओं को पादरी मिलता और उन पर 'पवित्र' पानी छिड़कता। उसके पश्चात् पशुओं को खेतों में

हाँक दिया जाता था। पशुओं को घर से बाहर हाँकने से पहले उनके सहन में इकट्ठा कर लिया जाता था और मालिक उन पर ‘ओत्पुस्क’ (छुटकारा) अथवा ‘रक्षा’ के विशेष शब्द पढ़ता—

“सव्यातीय चेस्तनीय ई स्लावनीय प्रोरोकी ई वेलीकीये मुचेनिकी व्लासी, मेदोसी ई पात्रोआखँ आफांसी, सोखरानीये नाशू स्कोतीनूशक् पो गोराम्, पो द्वोराम, ज़ा त्रावूशकू स्पेदायूची, ना मेसत्ये पोचीवायूची, ओत वेत्त्रा, ओत वेखोर्या, ओत नेचिस्तोवो दूखा, ओत ज़वेरया लेस्नोवो ई ओत ज़लोवो चेलोवेका, वो ईम्या ओत्सा ई सीना। आमीन !”

अर्थात्—“हे पवित्र, सम्माननीय और सुविख्यात पैगम्बरों तथा महान् व्लासी, मेदोसी और आफांसी के शहीदों, पहाड़ों पर, बाहर खेत में, घास चरते हुए, रात काटने के स्थान पर, हमारे पशुओं की पलीत-आत्माओं से, खूँखार जंगली जानवरों से और दुष्ट मनुष्यों से रक्षा करो। पिता और पुत्र के नाम पर। आमीन !”

पशुओं को पैगम्बरों और शहीदों की रक्षा में सौंपकर मालिक उनका कुशलता के बारे में अपेक्षाकृत निश्चिन्त हो जाता था। परन्तु व्लासी और मेदोसी पर रखी गई आशाएँ प्रायः फलीभूत न होती थीं और जंगल में पशु-हानि ही होती थी। मालिक के विश्वासानुसार गाय को केवल जंगल की दुष्ट शक्ति ‘लेसोविक’ ही ले जा सकता था। बस, खेतों में, चौराहों पर, और जंगल के सब रास्तों पर खड़े होकर मालिक धमकियाँ देकर लेसोविक से अपने पशु लौटाने को कहते—

“लेसोविक, लेसोविक, ओतदाई मोयू नेतेल्, बूदी येस्म् उ तेव्या। नेतेल् मोया बेलया, स च्योरनीमी ऊशाभी। ने ओतदाश, ताक जाकेश्च फ्स्ये पूती ई बोरोगी, ने प्रोइत्ती तेव्ये, ने प्रोयेख्वाय्।”

अर्थात्—“लेसोविक, लेसोविक, दे दो मेरी नेतेल् (गाय) तेरे पास है। नेतेल् मेरी सफेद, काले कानोंवाली। यदि नहीं देगा तो तेरे सारे रास्तों को क्रास से कील दूंगा। फिर तुम बाहर नहीं निकल सकोगे, कहीं नहीं जा सकोगे।”

यह छोटा-सा टोना प्राचीन रूसी अन्धविश्वासों की सरलता को भली प्रकार प्रतिबिम्बित करता है। लेसोविक को मानो इनकी बातें समझने वाला जीवित व्यक्ति समझकर सम्बोधित किया जाता था। वे अपने पशु की ठीक-ठीक निशानियाँ तक बता देते थे—“नेतेल् मेरी सफेद, काले कानोंवाली” ताकि वह भूल से किसी दूसरे की गाय को न लौटा दे। और साथ-साथ गाँव के विश्वासानुसार उस दुष्ट शक्ति को

बहुत बुरी डरावनी घमकी दी जाती थी—“क्रास से कील दूंगा।”

इन सब जादू-टोनों में एक प्रकार के कौतूहल का होना असम्भव न था। उनमें ईसाई सन्तों के साथ-साथ जंगली और जादुई पशुओं का वर्णन मिलता है। ईसाइयों के ईश्वर को सम्बोधन करने के पश्चात् आकाश, पृथ्वी, लोहे और पत्थरों पर टोना करने की ध्वनि सुनाई पड़ती थी।

प्राचीन गाँव में टोने को प्रायः इलाज करने के साधन रूप में भी प्रयोग में लाया जाता था।

### बीमारी का मूल कारण

रूसी पूर्वजों का विश्वास था कि मनुष्य स्वयं ही बीमार नहीं होता। बीमारी एक दुष्ट शक्ति की भाँति उसके पास आती है और उसको शब्द-शक्ति द्वारा दूर किया जा सकता है। कदाचित् कोई अज्ञात शक्ति शत्रु पर बीमारी उसके किसी ऐसे पाप का दण्ड देने के लिए छोड़ देती है जिसकी उसको स्वयं याद नहीं होती। बस, इसी विचार के आधार पर प्राचीन रूस में मनुष्य अपनी भोंपड़ी के बाहर निकलता और खुली हवा में आकर प्रकृति को सम्बोधन करके इस प्रकार क्षमा-याचना करता—

“प्रोस्ती मात्य सीरा जेमल्या, राबा बोभिया त्बोयेवो इवाना। ने वोज़ब्रानिल ली या तेव्या, ने पोदुमाल ली चेवो, ने पोमीसलिल ली चेवो— प्रोस्ती मोन्या, ग्रेशनोवो राबा त्बोयेवो इवाना। प्रोस्तीत्ये, बूईनीये वेतरी इ वेखोरी, राबा बोभिया, मोन्या, इवाना। बोवात, या वास ओब्रुगाल, इली मीसलयामी पोमीसलिल, इली दूमोय पोदुमाल, प्रोस्तीत्ये मोन्या, राबा बोभिया इवाना। प्रोस्ती, लेस्नोय खोजयाइन, बीवात, या तेव्या ओब्रुगाल इली मीसलयामी पोदुमाल—प्रोस्ती मोन्या, राबा बोभिया इवाना।”

अर्थात्—“क्षमा करो, माता सीली पृथ्वी, अपने दास इवान को, क्या मैंने तुम्हें गाली दी है; क्या मैं कोई बुरा विचार अपने मन में लाया हूँ? मुझे क्षमा करो, अपने अपराधी इवान को। क्षमा करो, हे तेज हवाओ और आँधियो, अपने दास इवान को। हो सकता है कि मैंने आपको कुछ बुरा-भला कहा हो या मेरे मन में कोई बुरा विचार आया हो। मुझे क्षमा करो, अपने दास इवान को। क्षमा करो हे जंगलों के मालिक, हो सकता है कि मैंने तुम्हें कुछ बुरा-भला कहा हो या मेरे मन में कोई बुरा विचार आया हो। क्षमा करो अपने दास इवान को।”

ऐसे मंत्र-पाठों के साथ-साथ प्रायः विभिन्न प्रकार की कार्रवाई की जाती थी। उदाहरणार्थ, एक मंत्र-पाठ के साथ-साथ बीमार को खुली हवा में लाया जाता था, चाहे बीमार को टाइफाइड ही क्यों न हो। बीमारी के मंत्र प्रायः इस प्रकार के बनाये जाते थे—प्रकृति की शक्तियों अथवा कल्पित साँपों, पक्षियों और लोगों को बीमार की बीमारी उठा ले जाने और उसे दूसरे लोक में छोड़ आने का काम सौंपा जाता था।

एक बार सर्दी के मौसम में एक गाँव में एक पंचवर्षीय बालिका बीमार पड़ गई। स्पष्ट रूप से उसे ठण्ड लग गई थी। उसका माँ डाक्टर को बुलाने हस्पताल गई हुई थी। परन्तु बूढ़ी दादी उसकी प्रतीक्षा न कर सकी। जब भोंपड़ी में बीमार बालिका के सिवा कोई और नहीं था तो अवसर पाकर उसने टब में से पानी लिया जिसमें तुषार के कारण बर्फ की छोटी-छोटी टुकड़ियाँ तैर रही थीं और ऊँचे-ऊँचे बुडबुडाने लगी—

“स्तान्, ग्लागोस्लोवयास्, पोईदू, पेरेक्रैस्त्यास्, इज् द्वेरेयेय व द्वेरी, इज् बोरोत व बोरोता। वीईदू या व च्येरनोय मोर्ये। व च्योरनोम मोर्ये तेच्योत रेका च्योरनाया। न रेक्ये च्योरनोय सीदित चेलोवेक च्योरनी। व प्रावोय रुक्ये देरभीत ज़ोलोत्यू प्लेतकू। सविश्च्यौत, ओतस्वीस्तीवायेत ओत कात्यूशी फ़स्ये उरेकी, फ़स्ये प्रिज़ोरी, लीखी ओग्वोरी” जावीदूश्चेमू सोली व ग्लाज़ा, कुपोरोसू व नोस, पेपेल् ना याज़ोकि।”

अर्थात्—“खड़ी हूँ, आशीर्वाद लेकर जाऊँगी, ईसा की मूर्ति के सामने पूजा करके, एक घर से दूसरे घर, एक द्वार से दूसरे द्वार। मैं काले सागर जाऊँगी। काले सागर में काली नदी बहती है। काली नदी पर काला मनुष्य बैठा है। एक हाथ में उसके सुनहरी कोड़ा है। फूँक मारकर कात्यूशा (बालिका का नाम) की सब बुरी बाणी, नज़र और जादू दूर कर देगा। ईर्ष्या करने वालों की आँखों में नमक, नाक में तेज़ाब और जबान पर राख।”

बुढ़िया ठण्डा पानी जिस पर उसने जादू के मंत्र पढ़े थे बालिका को पिलाने ही लगी थी कि बालिका की माँ डाक्टर को लेकर आ पहुँची। मंत्रवाला पानी बुढ़िया ने चुपके से टब में उड़ेल दिया।

प्राचीनकालिक रूसी गाँवों में कितने ही ऐसे अवसर आते थे जब गाँव में स्त्रियाँ बच्चों का तथा बड़ों का स्वयं ही इलाज करती थीं। ऐसे मूढ़ और अन्धविश्वासों के कारण पता नहीं कितनी जानें गई होंगी। परन्तु आज के नये रूस में ऐसे शब्द अब केवल बूढ़ों और वूढ़ियों के मस्तिष्क मात्र में हैं। उन पर अब कोई विश्वास नहीं करता।

आज रूस के लोक-साहित्य के वैज्ञानिक इन 'लोक-रचित' दोनों, अन्धविश्वासों और शकुनों का संग्रह करते हैं। लोक-साहित्य के अन्य प्रकारों की भाँति ये भी ऐतिहासिक स्मारक हैं। इनका ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से बहुत सी बातों का पता चलता है, साधारण ध्यौरा जो पहले मालूम नहीं था और जो प्रायः तुच्छ मालूम पड़ता था, इन वैज्ञानिकों की खोज से दिलचस्प बातों का पता देता है।

उदाहरण के लिए एक लोक-साहित्य संग्रहकर्ता एक बार भोंपड़ी में एक बुढ़िया के पास बैठा बात-चीत कर रहा था। अचानक किसी ने किवाड़ खटखटाये। किवाड़ खुला और बुढ़िया की सत्रहवर्षीय खुशमिजाज पोती देहली पर खड़ी-खड़ी बोली—

“दादी अम्मा, मिक्त्का का पत्र आया है, तुझे प्रणाम लिखा है।”

मिक्त्का उस युवति का भोगेतर था और अब फ़ौज में नौकरी करता था।

“धन्यवाद ! उसको मेरा आशीर्वाद लिख भेजना।”—बुढ़िया ने गर्व से कहा और फिर सहसा बोल उठी—“बेटी, तू देहली पर क्यों खड़ी है ? अन्दर आ जाओ न।”

“क्यों दादी अम्मा, क्या देहली पर खड़े होना वर्जित है ?”—युवति ने पूछा।

“यह शकुन ऐसा ही है। यदि कुंवारी कन्या देहली पर खड़ी होती है, तो उसका भोगेतर इधर-उधर भाग जाता है और फिर उस कन्या का विवाह चिरकाल तक नहीं हो पाता।”—बुढ़िया ने उत्तर दिया।

“कोई डर की बात नहीं, दादी अम्मा, मिक्त्का शीघ्र ही लौट आयेगा।”—युवति यह कहकर ठहाका मार चली गई।

लोक-साहित्य के संग्रहकर्ता के इस शकुन के बारे में प्रश्न करने पर बुढ़िया ने उत्तर दिया—

“कुछ पता नहीं ! इस बात की व्याख्या तो मैं नहीं कर सकती, परन्तु हमारे पूर्वज ऐसा ही करते आये हैं। शकुन विश्वसनीय है।”

निःसन्देह उस बुढ़िया को पता नहीं था कि रूसी पूर्वज मुर्दों को द्वार पर ही दफनाया करते थे। उनका विश्वास था कि मृतक की आत्मा परिवार की रक्षा करने वाला फरिश्ता बन जाती है। पूर्वजों के दफन-स्थान देहली पर पाँव रखकर खड़े होने का अर्थ था उसका अपमान करना और उनके असन्तोष का भागी बनना। और फिर क्रुद्ध बूढ़ा जवान पोती को क्या दण्ड दे सकता था। स्पष्टतः वह उसको विवाहित जीवन के सुख के लिए अपने आशीर्वाद से वंचित रख सकता था, उसके वर ढूँढ़ने और अपना पारिवारिक जीवन आरम्भ करने में रुकावट डाल सकता था। कट्टर

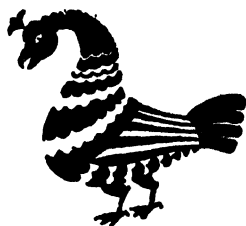
विधियों का ऐसा विश्वास शताब्दियों तक चलता रहा। आज गाँववाले अपने अन्धविश्वासों और शकुनों की व्याख्या करने में सर्वथा असमर्थ हैं। वह चिरकाल से उनके आरम्भिक कारणों को भूल चुके हैं। वैज्ञानिक गाँव में रहकर उनके जीवन की ऐसी साधारण बातों के आधार पर रूसी पूर्वजों के दिलचस्प आचार-व्यवहार को विवरणपूर्वक हमारे सामने रखते हैं।

इन शकुनों, अन्धविश्वासों और टोनों आदि से हमें पता चलता है कि रूसी पूर्वज किन से डरते थे और अपनी रक्षा किससे करते थे। ऐसी समस्त सामग्री प्रधानतः मौखिक कथाओं में जीवित है परन्तु उनमें से बहुत सी लेख-पत्रों में भी सुरक्षित हैं। उदाहरणार्थ, प्राचीन हस्तलेखों द्वारा हमें पता चलता है कि बहुत से टोने अपनी शास्त्रीय (Classical) महत्ता के कारण बहुत दिलचस्प हैं। प्राचीन रूस सफल व्यापार के लिए, अन्यायी जजों और जारों के अत्याचारों के विरुद्ध जादू-टोना जानता था। प्राचीन रूस में समाज के विभिन्न वर्ग—व्यापारी, सौदागर और लड़ाके—सब अपनी रक्षार्थ जादू-टोने का प्रयोग करते थे। उन टोनों में उनके तत्कालीन विचारों तथा विश्वासों का प्रतिबिम्ब है।

प्राचीन रूस के ‘जादुई’ शब्द तथा शकुन साधारणतः बूढ़े लोग जानते थे। परन्तु युवकों के मन में भी गुप्त जादू पर एक नजर दौड़ाने तथा जादुई ढंग से अपने भाग्य भाखने की इच्छा चिरकाल से रही है। युवक भाग्य भाखने को बहुत पसन्द करते थे।

कुंवारी कन्याएँ प्रायः अपना भाग्य भाखतीं। भाग्य भाखने के कई ढंग थे। सव्यात्काएँ, नव-वर्ष पूर्वीय रात्रि, बपतस्मे की रात्रि (५ जनवरी की रात) साधारणतः इसके लिए उपयुक्त समझी जाती थीं। कन्याएँ एक भोंपड़ी में इकट्ठी होतीं और अपने भाग्य भाखने के नाना प्रकार के ढंग सोचतीं। कभी वह जलती आग में छोटी-छोटी गीली लकड़ियाँ फेंकतीं और देखतीं—जिसकी लकड़ी पहले जलने लगती, उनकी धारणा के अनुसार उसका विवाह पहले होने का पता चलता। कभी वह गिलास की तह में एक अँगूठी रखतीं और पानी में से देखतीं—मंगेतर अँगूठी में से दिखाई देना चाहिए था। आधी रात को चौराहे पर जातीं, बर्फ पर एक घेरा निकालतीं और उसमें बैठकर कान लगाकर शब्द सुनतीं। घंटियों का शब्द विवाह का प्रतीक था; कुत्ते का भौंकना मृत्यु का, और खड़ी फसल की खड़खड़ाहट समृद्धि का, इत्यादि। भोंपड़ी में लौटकर मोम पिघलातीं और पानी में गिरते पिघले मोम को देखतीं; कागज जलातीं और उसकी राख की शकल को देखकर भाग्य भाखतीं। ऐसे ही बहुत से अन्य ढंगों से अपने भावी विवाहित जीवन के बारे में कन्याएँ पहले से ही रमल

लगातीं। बहुत से ऐसे रमल अभी तक मिलते हैं। परन्तु आज उनका विश्वास कोई नहीं करता। वे अब मनोरंजन और खेल का साधन मात्र रह गये हैं जिसका आनन्द बड़ी-बड़ी कन्याएँ ही नहीं प्रत्युत् बालक भी उठाते हैं।





३

## प्रकृति-पूजन

प्राचीन रूस में भाग्य भाखने का बड़ा रिवाज था। इवान कुपाल (सेंट जोन्स डे-२७ दिसम्बर) से एक दिन पूर्व रात को गाँव की लड़कियाँ घर में खूब मल-मलकर नहाने के पश्चात् नदी पर पहुँच जातीं। वहाँ जाकर वे भोजपत्र की टहनियों से बनाए हारों को दूर-से-दूर फेंकने की चेष्टा करतीं। यदि हार पानी में तैरने लगता तो यह अच्छा शकुन माना जाता। यदि हार डूब जाता तो इसका अर्थ था कि लड़की को मँगैतर की प्रतीक्षा एक वर्ष और करनी पड़ेगी।

इन तैरते हुए हारों द्वारा भाग्य भाखने का रिवाज रूस में प्राचीन काल से चला आ रहा है। यह रिवाज रूस के 'पागन' (विधर्मी) पूर्वजों के अन्य विश्वासों और रस्म-रिवाजों के साथ-साथ चलता आ रहा है। ये पूर्वज न केवल भाग्य भाखने, शकुन निकालने और भविष्य की बातें जानने में ही विश्वास करते थे, अपितु उनके लिए समस्त प्रकृति अज्ञात शक्तियों से परिपूर्ण थी और वह शक्ति अपनी इच्छा के अनुसार शाप अथवा वरदान दे सकती थी।

इन कट्टर विधर्मियों की धारणा के अनुसार अग्नि, वायु, वर्षा तथा कृषि आदि के अनेक देवता थे। इन देवताओं के अपने-अपने नाम थे और उनके सम्मान में त्योहारों का आयोजन किया जाता था।

क्योंकि ये देवगण प्रकृति की ही भिन्न-भिन्न शक्तियाँ थे और कट्टर जमींदारों को खेती मौसम की स्थिति पर निर्भर थी, इसलिए इन विधर्मी देवताओं के सम्मान

में मनाए जानेवाले त्योहार भी भिन्न-भिन्न ऋतुओं और तारीखों से सम्बन्धित थे। इन त्योहारों का उद्देश्य देवताओं की स्तुति करना था और उनसे खेती-बाड़ी की देखभाल करने तथा अन्न-उत्पादन एवं पशु-पालन के पथ से अशुभ बाधाओं को दूर करने के लिए प्रार्थना करना था।

रूस में जब ईसाई-मत का प्रचार-प्रसार हुआ, तब विधर्मि और ईसाई त्योहार एक ही तारीख पर मनाए जाने लगे। दिसम्बर के अन्त में 'सूर्य-संक्रान्ति' के त्योहार पर 'क्रिस्मस' भी मनाया जाने लगा। विधर्मियों के वसंत-त्योहार 'मास्लेनिस्ता' के बाद ईसाइयों के 'लेंट' का आरम्भ होता था। वसंत में ईसाइयों के त्योहार 'त्रोइत्सा' (ट्रिनिटी) के साथ-साथ विधर्मियों का 'सूर्य-संक्रान्ति' के सम्बन्ध में मनाए जाने वाला त्योहार पड़ता था...आदि आदि।

कैलेण्डर के त्योहार रूसी पूर्वजों द्वारा प्रचलित रस्मों से भिन्न थे। अधिकांश ऐसी रस्में अपने आप ही लुप्त हो गईं, परन्तु वे एक समृद्ध और दिलचस्प लोक-साहित्य का खजाना पीछे छोड़ गईं, जो आजकल भी कहीं-कहीं बूढ़ों के मस्तिष्क में सुरक्षित मिलता है।

### दानव-पूजा

प्राचीन रूसी साहित्य के देवताओं की गणना-सम्बन्धी एक स्मारक में विधर्मियों के 'कौल्यादा' नामक दानव का उल्लेख आता है। इसके नाम पर २४ दिसम्बर को गीत गा-गाकर एक त्योहार मनाया जाता है। स्पष्ट रूप से इस दानव से लोग फसल और खेती में सहायता की आशा रखते थे। इसलिए लोग रात्रि के समय गाँव-गाँव में गीत गाकर 'कौल्यादा' की उदारता और उसके दया-भाव का बखान करते थे और उसके प्रति श्रद्धा प्रकट करते थे।

प्राचीन रूसियों का विश्वास था कि शब्द में एक गुप्त शक्ति होती है। उनकी मान्यता थी कि यदि स्वामी के द्वार पर खड़े होकर उसके सौभाग्य तथा अच्छी फसल के लिए गीत गाए जायें तो अवश्य ही सौभाग्य तथा अच्छी फसल उनके पास आ जायगी।

उत्तरी प्रदेशों में—जहाँ लोगों ने अपने प्राचीन विश्वासों के अवशेषों को अपने मस्तिष्क में सुरक्षित रखने तथा अपने त्योहारों को चिरकाल तक अक्षुण्ण बनाए रखने की चेष्टा की—वहाँ आज से बीस वर्ष पूर्व तक भी 'कौल्यादा' के त्योहार तथा अन्य प्राचीनतम रस्में प्रचलित थीं। क्या जवान, क्या बच्चे, सब 'कौल्यादा' गीत गाते

हुए घूमा करते थे । वे कागजों के तारे बनाते और उनको रंग-बिरंगे फीतों तथा झालरों से सजाकर एक डंडे पर उठाए हुए झोंपड़ी-झोंपड़ी घूमते ।

लड़के डंडे पर जो तारे चिपकाते थे, वे ईसाई मत की उस कल्पित कथा से ही लिये गये थे, जिसमें ईसा का जन्म एक चमकदार तारे के नीचे हुआ लिखा है ।

लड़के आकर मालिक के द्वार पर खड़े होकर गाते—

“कौल्यादा, कौल्यादा,  
ओतवोरयाय वोरोता  
स्नेगी ना जेमल्यू पादाली,  
पेरेपादीवाली ।  
काक प्रीशलो रोभ्रुदेस्वो  
कं गोस्पोदीनू पीद ओबनो ।  
तो वस्तावाय गोस्पोदीन,  
राजबुभाय गोस्पोभ्रु ।  
खलेबीम-सोल्यू नास कोर्मी,  
पुत्य-दोरोभ्रुकू अकाभो ।  
काक ऊ नाशेय तो मात्की  
तेल्यात्की-तो ग्लादकी,  
स्काचुत चेरज गर्यावकू,  
कौपीत्सामी श्वेलकायूत;  
जैमल्यू ने ख्वातायूत  
शतो ऊ नाशेय तो खोजयायकी  
उस्तोई-तो तोलत्ती,  
स्म्येतानी-तो गुस्ती,  
मास्ला-तो भ्रूयोलती.....  
मी बेर्योम ने रूप, ने प्लोतीन्,  
ओवनू चैत्वेरतीन्,  
पीरोग दा शान्गू,  
जोलोतू वेन्गू.....”

अर्थात्—“कौल्यादा, कौल्यादा,  
खोल किवाड़,  
बरफ भूमि पर पड़ गई ।

बार-बार पड़ गई ।  
 कैसे आया क्रिस्मस  
 मालिक की ओर खिड़की के नीचे ।  
 तू उठ मालिक,  
 उठा मालकिन को ।  
 रोटी नमक हमें खिला,  
 रास्ता दिखा ।  
 कैसे हमारी गैया के पास  
 सुन्दर बछड़े हैं ।  
 बाड़ पर से कूदते हैं,  
 खुरों से खड़-खड़ करते हैं,  
 भूमि का घाटा नहीं ।  
 कि हमारी मालकिन के पास तो,  
 मलाई तो मोटी है,  
 दही तो गाढ़ा है,  
 घी तो पीला है,  
 हम रुबल नहीं लेंगे, न पचास कोपे  
 एक चौथाई (पचीस कोपे)  
 कचौड़ी और गुलगुले  
 सुनहरी नकदी.....

लोगों का मुख्य कारोबार दूध से सम्बन्धित था । यही कारण है कि दूध और दही के विषय में गीत गाये जाते थे । जैसा कि उपर्युक्त 'कौल्यादा' गीत के अन्त में आता है, मालकिन कचौड़ियाँ, गुलगुले या पनीर के साथ रोटी या कभी-कभी कोपे भी—जहाँ जैसा रिवाज हो—देती थी ।

अधिकतर लड़के ही कौल्यादा के गीत गाते घूमते थे । इन गीतों में उन सब चीजों का वर्णन किया जाता था, जिनकी मालिकों को अधिकाधिक आवश्यकता हो सकती थी । उदाहरणार्थ, ग्राम के मैदानों में, जहाँ लोगों की जीविका का मुख्य साधन पशु-पालन था, इस प्रकार के 'कौल्यादा' गीत गाये जाते थे—

“प्रोशला कौल्यादा  
 बपेर्योद रोभदेस्त्वा,  
 बपेर्योद मास्तेनिरसी ।

कौल्यादा स्वेतलाया  
 जाशला कौल्यादा  
 कबारदीनीम न द्वोर्ये  
 स्तोईत तीन भूलेजनोय,  
 आ ऊ तोबो तीना  
 “बेरेयूइकी तोचेनीये,  
 स्तोल्बी पोजोलोचेनीये ।  
 दाई वाम गोस्पोदी  
 स्कोता, भिबोता,  
 कौरोवू स तेलेनोचकौम्  
 प्रोवूस्सु स याग्नेनोचकौम्  
 लोशाव स भेरेबेनोचकौम्,  
 स्विन्यू स पारोसेनोचकौम्”  
 प्रोतक्कीवायत्ये सुन्दूचोक,  
 दोस्तावायत्ये प्यातोचोक  
 प्रोतक्कीवायत्ये कोरोबेयकी  
 दोस्तावायत्ये नाम कौपेईकी ।”

अर्थात्—‘कौल्यादा आया  
 ‘क्रिस्मस’ से पहले,  
 ‘मास्लेनित्सा’ से पहले ।  
 ‘कौल्यादा’ उज्ज्वल,  
 आ गया कौल्यादा ।  
 बारदीना-परिवार के द्वार पर,  
 खड़ी है लोहे की बाड़,  
 और इस बाड़ के पास  
 तीखी तारें हैं ।  
 खम्भे सुनहरे हैं ।  
 वे आपको ईश्वर  
 डंगर, पशु,  
 गाय बछड़वाली,  
 भेड़ भेमनेवाली,

घोड़ी बछेरेवाली ..  
 सूअरी बच्चेवाली ।  
 खोलिए सन्दूक,  
 दिलवाइए पाँच कोपे,  
 खोलिए डिब्बा,  
 दिलवाइए हमें कोपे ।”

आजकल कौल्यादा-गीत गाने का रिवाज लुप्त हो चुका है । इसका कारण यह है कि आधुनिक रूसी जीवन इन प्राचीन रीति-रिवाजों के बिल्कुल विपरीत है ।

### सूर्य-पूजा

ईसाइयों के ‘लैंत’ से पहले अर्थात् फरवरी के अन्त में ‘मास्लेनित्सा’ का त्योहार आता था । इस त्योहार को मनाने का उद्देश्य सूर्य का सम्मान करना था, जो सरदी के पश्चात् कट्टरपंथी जमींदारों के खेतों पर फिर से उदित होता था ।

अपने साथ फसल उर्वरता और समृद्धि लानेवाले सूर्य का यथोचित स्वागत करना आवश्यक था । यह भी आवश्यक था कि वसंत में वह पृथ्वी के हर्द-गिर्द कुशलतापूर्वक चक्कर लगा सके । इस परिभ्रमण को सुरक्षित बनाने के लिए मनुष्य अपने जादुई शब्दों द्वारा आकाश के तारागण की सहायता करने की चेष्टा करता था । वह चाहता था कि वसंत में सूर्य अपना प्रकाशमय चक्कर सफलतापूर्वक समाप्त कर सके । इसीलिए भूमि पर उसके गोल और प्रकाशमय रेखाचित्र बनाकर मानो वे सूर्य को उत्तेजना देते थे । मालिक पूड़े पकाते, युवक और युवतियाँ एक डंडे पर गोल-गोल पहिये-से ढाँगते, उन पर राल छिड़ककर आग लगाते तथा फिर उसे उठाए-उठाए गाँव भर में घूमते । गाँव के विभिन्न स्थानों पर भभूकेवाली आग जलाई जाती थी ।

‘मास्लेनित्सा’ का गीतों द्वारा स्वागत किया जाता था—

“ओ मास्लेनित्सू सोस्त्रेचाली,  
 ल्यूली, ल्यूली, सोस्त्रेचाली,  
 गोगोलेच्योकू, गोगोलेच्योक ।  
 ना गोरूइक्ये ने बीवाली ।  
 सीरोम गोहू नाबीवाली ।  
 नाशी गोइशकी कातलीबी,

नाशी देवूशकी इग्रीबी,  
मोलोदूशकी बेस्योलीये,  
स्तारी बाबूशकी बोरकोतलीबी,  
अनी ना पेचक्ये सीद्यात,  
ना नास बोरकोत्यात ।  
बी, बाबूशकी, ने बोरचीत्ये,  
दायत्ये मास्लेनित्सू नाम पोगुल्यात् ।  
स रेब्यातामी पोईग्रात् ।  
स रेब्यातामी स खोलोस्तीमी,  
स खोलोस्तीमी, नेभ्नेनातीमी,  
ल्यूली, ल्यूली, नेभ्नेनातीमी,  
गोगोलेच्योक, गोगोलेच्योक.....”

अर्थात्—“हमने ‘मास्लेनित्सा’ का स्वागत किया,  
\*ल्यूली, \*ल्यूली, स्वागत किया  
\*गोगोलेच्योक, \*गोगोलेच्योक,  
छोटी पहाड़ी पर नहीं गये,  
सीले पहाड़ पर भीड़ कर दी ।  
हमारी पहाड़ियाँ ढलुग्राँ हैं,  
हमारी लड़कियाँ खुशमिजाज हैं,  
युवतियाँ प्रसन्न-चित्त हैं,  
बुढ़िँएँ बुड़बुड़ करनेवाली हैं,  
वे अँगोठी पर बैठती हैं,  
हम पर बुड़-बुड़ करती हैं । तुम बुढ़ियो, मत  
बुड़-बुड़ करो,  
हमें मास्लेनित्सा मनाने दो ।  
लड़कों के साथ खेलने दो ।  
लड़कों से, कुँवारों से,  
कुँवारों से, अविवाहितों से,  
ल्यूली, ल्यूली, अविवाहितों से,  
गोगोलेच्योक, गोगोलेच्योक.....”

\* निरर्थक शब्द—केवल ताल पूरा रखने के लिए है ।

पूरे सप्ताह भर गाँव में रंगरेलियाँ मनाई जाती थीं। गीत गाये जाते थे, ठट्ठा-मखौल होता था, मेजों पर से स्वादिष्ट पदार्थों की प्लेटें नहीं उतरती थीं। सूर्य को यह दिखाना था कि गाँव उससे आगामी वर्ष भी ऐसी ही फसल तथा समृद्धि प्रदान करने की प्रार्थना करता है। कुँवारे लड़के और लड़कियाँ तथा विवाहित दम्पति बढ़िया से बढ़िया कपड़े पहने 'स्लेजों' (बर्फ पर चलनेवाली बिना पहियों की गाड़ी) पर सारे गाँव में चक्कर लगाते। घोड़ों के पंजालों पर फूल-मालाएँ और झालरें बाँधी जातीं। घुड़सवार अपने घुटने दरियों और खूबसूरत रूमालों से ढाँपते थे। 'मास्लेनित्सा' मनानेवालों की स्लेजें गाँव के सुसज्जित रास्तों पर से गुजरतीं— सूर्य की चाल की नकल करती हुई ठीक उसी प्रकार एक दायरे में। मनोरंजक प्रतियोगिताओं, बर्फ पर लड़ाई आदि की व्यवस्था की जाती। युवकों और युवतियों की टोलियाँ दो मंडलियों में बँट जातीं और बर्फ के बने 'शहर' (किले) पर विजय प्राप्त करने की कोशिश करतीं। यह लड़ाई 'शहर' पर विजय प्राप्त कर चुकने के पश्चात् समाप्त हो जाती थी। इसका अर्थ यह था कि वसंत और शरद ऋतु में लड़ाई हुई, जिसमें शरद ऋतु हार गई।

'मास्लेनित्सा' की मौज-बहार एक सप्ताह तक चलती रहती थी। उसके बाद 'प्रोश्चेनोय' (विदाई) का रविवार आता था। यह 'मास्लेनित्सा' को विदाई देने का दिन था।

'मास्लेनित्सा' को एक बड़ी विनोदपूर्ण प्रथा के साथ दफनाया जाता था। युवक और युवतियाँ सरकण्डे की एक स्त्री बनाते। युवतियाँ उसको कपड़े पहनातीं और सिर पर रूमाल बाँधतीं। इस सरकण्डे की स्त्री को गीत गाते हुए सारे गाँव में घुमाया जाता था। अन्त में उसे बर्फ में खोदे गये गढ़े में दबा देते या आग में जला देते। कभी-कभी उसको वैसे ही तोड़-फोड़कर कहीं दूर खाई में फेंक देते।

“आ भी स्वोयू मास्लेनित्सू प्रोबोभायम्,  
त्याभ्लेन्को पो न्येय दा बज़दीखायम्.....”

अर्थात्—“और हम अपनी 'मास्लेनित्सा' को विदा करते हैं, उसके विरह में सरद आहें भरते हैं.....”

यह गीत लड़के और लड़कियाँ गातीं और 'मास्लेनित्सा' को आगामी वर्ष तक विदा करतीं। 'मास्लेनित्सा' मनाने और उसको विदा करने की प्रथा सड़कों से दूर गाँवों में चिरकाल तक चलती रही, परन्तु वहाँ भी तीस वर्ष हुए 'मास्लेनित्सा' को अन्तिम बार दफनाया गया था। आजकल 'मास्लेनित्सा' से सम्बन्धित प्रथाएँ और

गीत लगभग समस्त रूस में भुलाए जा चुके हैं। अब ये केवल लोक-साहित्य के ही विषय रह गये हैं।

## वसंत

‘मास्लेनित्सा’ की प्रथा के पश्चात् गाँवों में वसंत के स्वागत की प्रथा आती थी। गाँववालों के विश्वासानुसार ६ मार्च का दिन वसंत के सर्वप्रथम पक्षी ‘भ्रावोरोनकों’ (लवा) के आगमन का दिन गिना जाता था। लड़के-लड़कियाँ इकट्ठे होते। वे अपने साथ आटे के बने हुए कुलोक नामक पक्षी लाते और उसको एक ऊँचे ढण्डे पर बाँधते, ताकि वह हवा में भूम सके। इसके साथ-साथ वे वसंत के गीत गाते—

“—वेस्ना क्रास्ना,  
ना च्येम प्रीशला ?  
—ना भोरदोच्ये,  
ना थोरोज्जदोच्ये,  
ना ओवस्यान्नोम कोलोसोच्ये,  
ना पश्येनीचनोम पीरोभोच्ये ।  
आ मी वेस्नू भृदाली  
बलोचकी दोप्रयादाली ।  
लेतेल कुलोक  
इज जा मोर्या,  
प्रोन्योस कुलोक  
वेवयात् जामकोव ।  
कुलोक, कुलोक,  
जामीकाई जीमू,  
जामीकाई जीमू,  
ओतपीराई वेस्नू,  
तेपलोये लेतो ।”

अर्थात्—‘ वसंत लाल,  
किस पर आई ?  
—बन्ने की निशानी पर,

—हल से जुते खेत पर,  
 भूसे के गट्टरों पर,  
 गेहूँ की बालियों पर ।  
 और हम वसंत की प्रतीक्षा करते थे  
 भूसे के गट्टर बाँधे ।  
 उड़ा कुलीक  
 सागर से,  
 लाया कुलीक  
 नौ ताले ।  
 कुलीक, कुलीक,  
 ताले में बन्द कर दे शरद ऋतु को  
 ताले में बन्द कर दे शरद ऋतु को,  
 वसंत को खुला छोड़ दे  
 गरम गरमी को ।”

और बड़ी बहिनें और माताएँ सूर्य की धूप में नदी या पहाड़ी पर जातीं,  
 घास पर सफ़ेद कपड़े बिछातीं और वसंत का स्वागत करती हुई जातीं—

“ओख, इ, दाय बौभुये, दोब्रोये गोदी,  
 गोदी दोब्रोये, ख्लेवौरीदनीय,  
 जारौदी, बीभुये, भूतो गुस्तोय,  
 भूतो गुस्तोये, कोलोसिस्तोय,  
 कोलोसिस्तोये, याव्रेविस्तोये,  
 चतोबी बिलो ‘स चेवो पीवो’ वारितो,  
 पिबो वारितो, रेब्यात भूनीती ।  
 रेब्यात भूनीती, देवोक ओतदावाती”

अर्थात्—“ओह ! दो परमात्मा अच्छे वर्ष,  
 अच्छे वर्ष, अन्न-उपजाऊ,  
 पैदा करो परमात्मा, खूब फसल, खूब फसल,  
 खूब फसल बालियोंदार,  
 बालियोंदार, खूब भरी हुई,  
 ताकि उससे पीवा (जौ की शराब) निकालें,

पीवा निकालें, विवाहित लड़के।

विवाहित लड़के, लड़कियों को दें।”

इन सब गीतों में भी जादुई का विचार निहित था। गाँववालों का विश्वास था कि शब्द-शक्ति से प्रकृति पर भी प्रभाव डाला जा सकता है और आगामी वर्ष की फसल के लिए लाभदायक गरमी प्राप्त की जा सकती है।

वसंत का स्वागत करके गाँव उसके आगमन को कई सप्ताह तक मनाता रहता था। युवक और युवतियाँ मिलकर सामूहिक गान गाते और भूला भूलते। यह कोई साधारण मनोरंजन नहीं था। इसमें भी विशेष जादुई विचार निहित था। उदाहरणार्थ, गाँव में सामूहिक गान शरद्-ऋतु में नहीं गाये जाते थे। वसंत के सामूहिक गानों का उद्देश्य था सूर्य का स्वागत करना। घेरे में घूमना आकाश में सूर्य के घूमने की नकल करना था। भूला भूलना और ऊँची-ऊँची पैरों लेकर गेहूँ को यह जतलाना था कि उसे कितना बढ़ना और पकना चाहिए।

वसंत-ऋतु का गरम मौसम आगया। पेड़ों में पत्ते निकल आये हैं। नई घास फूट निकली है। समस्त प्रकृति ने मानो एक नया जीवन धारण कर लिया है। अपने पूर्वजों की पूजा करने वाले कट्टर विधर्मियों का विश्वास था कि उनके पूर्वज परलोक में अपने वंशजों के जीवन की देख-भाल करते थे। फलतः वसंत में वे अपने पूर्वजों को उपहार भेंट करते। उस समय जब फसल का होना अच्छे या बुरे वसंत पर ही निर्भर था, ज़मींदार को एक अदृष्ट शक्ति की सहायता तथा कृपा-विशेष की आवश्यकता महसूस होती थी। वसंत में पेड़ों और घास में जीवन का फिर से संचार हो उठता था। शायद इन्हीं के रूप में ही ‘पितरों’ की आत्मा भी जीवित हो उठती थी, ऐसा कट्टर विधर्मियों का विचार था। मृतकों के प्रति अपना प्रेम तथा सम्मान जताने के लिए वे वसंत-ऋतु के पेड़ों और पौधों की पूजा करते थे।

ईसाइयों के त्योहार ‘त्रोइत्सा’ (ट्रिनिटी) के दिन प्राचीन रूस में फूलों और भोजपत्र की हरी-हरी टहनियों से अपने घरों को सजाने की प्रथा थी। छोटे-छोटे भोजपत्र के पेड़ों को काटकर फूलों और भालरों से सजाते थे और उन्हें सारे गाँव में घुमाते थे। उनका विश्वास था कि यदि भोजपत्र के पेड़ के रूप में पितरों की आत्मा सचमुच ही जीवित हो उठती थी, तो उसे इससे प्रसन्न होना चाहिए और कृतज्ञता के रूप में अपने वंशजों की खेती-बाड़ी के काम में सहायता करनी चाहिए।

वसंत-उत्सव के साथ-साथ और रस्में भी अदा की जाती थीं। ईवान-रात्रि (२४ जून) को युवक और युवतियाँ अलाव जलाते, युवतियाँ नदी में हार फेंककर

भाग भाखतीं, और वे एक जादुई फूल को ढूँढ़ते। कहा जाता है कि यह जादुई फूल वर्ष में केवल एक बार ही ईवान-रात्रि को खिलता है। जो इस फूल को तोड़ने में सफल हो जाता है उसको घरती में गढ़े हुए सब खजाने मिल जाते हैं, इन प्रथाओं पर भी बहुत से गीत गाये जाते हैं।

जून के अन्तिम सप्ताह में वसंत की विदाई का त्योहार मनाया जाता था। युवक और युवतियों की टोलियाँ अच्छे-अच्छे कपड़े पहनकर गीत गाती हुई गाँव के बन्ने पर जातीं। जब सूर्य छिपने लगता, सब घुटने टेककर नमस्कार करते।

“विदाई, वसंत; विदाई, लाल वसंत। हमारे यहाँ शीघ्र ही लौटकर आना।” डूबते सूर्य की ओर देखते हुए ये टोलियाँ बार-बार दुहरातीं। और फिर गाती-गाती गाँव लौट आतीं।

## गरमी

वसंत आगामी वर्ष तक चला गया। उसका स्थान गरमी ने ले लिया।

गरमी के गीत प्राचीन काल में रूस के मूल व्यवसाय खेती-बाड़ी से घना सम्बन्ध रखते थे। उन गीतों की भी जादुई महत्ता होती थी। वे फसल काटने के समय गाये जाते थे, इसीलिए उनको ‘दोभीनोचनी’ (कटाई) के गीत कहा जाता था। जिस प्रथा के सिलसिले में गाये जाते थे उसका नाम ‘दोभीनोच’ (कटाई का अन्त) था।

‘दोभीनोच’ की प्रथा में सारा गाँव अनाज के पूले काटने जाता था। सारी फसल काट चुकने के पश्चात् लोग उस कटे खेत में भूमि पर लोट-पोट होते और गाते—

“यारोवाया नीवूश्का  
आतेदाय मोयू सीलूश्कू,  
ना दोल्गूयू जीमूश्कू”

अर्थात्—“ओ वसंत के खेत  
लोटा दे मेरी शक्ति  
लम्बी शरद-ऋतु के लिए”

या

“नीवका, नीवका,  
आतेदाय मोयू सीलूश्कू।  
या तेब्या भाला,  
सीलूश्कू स्वोयू पोतेरयाला।”

अर्थात्—“खेत रे खेत,

लीटा दे मेरी शक्ति ।

मैंने तुझे काटा है,

अपनी शक्ति को खोया है ।”

फसल काटनेवालों का विश्वास था कि भूमि पर लोटकर वे अपनी उस शक्ति को फिर से प्राप्त कर लेते हैं जो उन्होंने खेत काटने में खर्च की है ।

अन्तिम पूले को भालरों और फूलों से सजाया जाता था । फिर उसे बड़ी धूम-धाम से गाँव में लाया जाता था ।

“उभू मी व्योम्, व्योम् बोरोदू

ऊ वासील्या-तो ना पोली,

जावीवायेम बोरोदू

ना नीछे बेलीकोयेय,

दा ना पोलीरये शिरोकोयेय”

अर्थात्—“हम गूँथते हैं, गूँथते हैं दाढ़ी

बासली के खेत में,

गूँथते हैं दाढ़ी

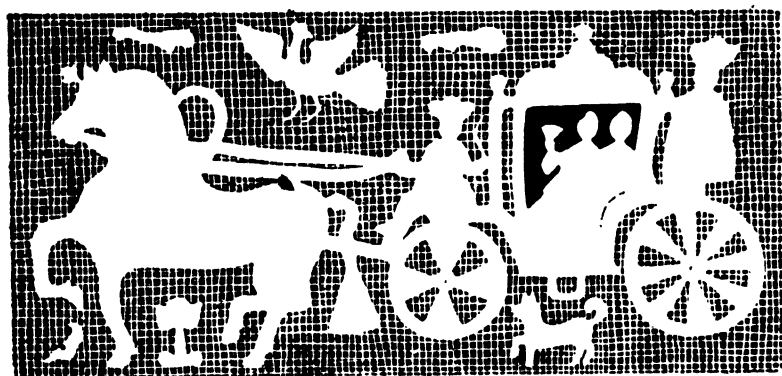
विशाल खेत में

चौड़े भूखण्ड पर ।”

इस गीत में उस मालिक का नाम वर्णित है जिसके खेत से पूला लाया जाता था । सजा हुआ पूला (गुँथी हुई दाढ़ी) सारे गाँव में घुमाया जाता था—मानो ऐसा करते-करते सारे गाँव में उर्वरता बिखेरी जाती हो । फिर उस पूले को खेत के मालिक के घर ले जाकर एक कोने में रख दिया जाता था । उस पूले की कुछ बालियाँ जो सौभाग्य और बाहुल्य का प्रतीक थीं, आगामी फसल तक वहीं पड़ी रहती थीं ।

आजकल इन सब प्रथाओं का लोप हो चुका है । ये अब केवल लोक-साहित्य का ही विषय रह गई हैं । अब वहाँ के लोग इन बातों पर विश्वास नहीं करते और खेती-बाड़ी आदि के कामों में केवल विज्ञान का सहारा लेते हैं ।





४

## विवाह-गीत

प्राचीन रूस में विवाह की रस्म प्रायः एक सप्ताह तक और कभी-कभी इससे भी अधिक समय तक चलती रहती थी। प्रत्येक दिन के तथा रस्म के विभिन्न पलों के अपने-अपने गीत, अपने-अपने विलाप और क्रियाएँ होती थीं। अन्य देशों की भाँति प्राचीन रूस में भी विवाह को घर-गृहस्थी के लिए अनिवार्य समझा जाता था। घर-गृहस्थी चलाना, उसके लिए एक समझदार और बुद्धिमान मालकिन को प्राप्त करना तथा भविष्य के एकमात्र सहारे बच्चों को पैदा करना—यह सब-कुछ भौतिक समृद्धि तथा पारिवारिक सौभाग्य के लिए अनिवार्य तथा अत्यन्त आवश्यक था। फलतः विवाह बड़ी धूम-धाम से रचाया जाता था। उसमें बहुत-सी रस्में और टोने होते थे, जिनकी जादुई महत्ता होती थी।

प्राचीन रूस के भिन्न-भिन्न भागों में विवाह भिन्न-भिन्न ढंग से रचाए जाते थे। यह उनके सामान्य जीवन की विशेषताओं और स्थानीय रीति-रिवाजों पर निर्भर था। हाँ, मूल प्रथाएँ सर्वत्र लगभग एक ही जैसी थीं और लगभग एक ही क्रम से चलती थीं। आरम्भ 'स्वातोवस्तवो' (वर और वधू के माता-पिता में सर्वप्रथम बातचीत) से होता था। तत्पश्चात् 'परोस्वातानिया' (अर्थात् दोनों परिवारों में बातचीत का पक्का होना) की रस्म आती थी। फिर कुछ दिन लड़कियों का रात को मिलकर

बैठने, दहेज के लिए कपड़े सीने तथा वर और वधू के उपहारों के लेन-देन में गुज़र जाते थे। इसके पश्चात् 'देवीशनिक' (अर्थात् वधू की अपने रिश्तेदारों और सहेलियों से विदाई), नहाई-धोई की प्रथा (जो विवाह से पहले होती थी), और अन्त में स्वयं विवाह की अपनी रस्म अदा की जाती थी। विवाह के पश्चात् वर और वधू वर के घर आते थे, जहाँ एक बड़े भारी भोज की व्यवस्था की जाती थी और विवाह के पश्चात् प्राथमिक दिनों के रीति-रिवाजों को बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता था।

प्राचीन समय में जब कन्या का विवाह प्रायः उसकी इच्छा के अनुसार नहीं, प्रत्युत् माता-पिता द्वारा होता था, तो समस्त प्रथा दुःख और विलापों से भरी होती थी। लड़की रोती थी। उसकी बहनें और सहेलियाँ रोती थीं और प्रायः उसकी माँ भी बहुत आँसू बहाती थी, इन कष्टपूर्ण अनुभूतियों ने रूसी विवाह की रस्म पर समृद्ध लोक-साहित्य का निर्माण किया। यह साहित्य अपनी सुन्दरता तथा सहृदयता के कारण अद्भुत है। इसमें मुख्यतः 'परिचीता' (विवाह-रोदन) और गीत हैं। इसका प्राचीन विवाह की रस्म से घना सम्बन्ध है। भिन्न-भिन्न स्थानों पर उनकी ध्वनि भी भिन्न-भिन्न है, परन्तु उनमें एक ही भाव की अभिव्यक्ति है। इसलिए किसी एक स्थान की विवाह की रस्म से परिचय प्राप्त करके प्राचीन काल के विवाह की मूल रस्मों के साधारण स्वरूप का अनुमान लगाया जा सकता है।

जब लड़का अपने लिए लड़की पसन्द कर लेता, तो वह अपने माता-पिता से आशीर्वाद माँगता। उसके बाद लड़कीवालों के घर 'स्वाता' (मध्यस्थ, घटक अथवा बीच-बचौले) को भेजा जाता। लड़के के दो या तीन रिश्तेदार, आमतौर पर लड़के का धार्मिक पिता, चाचा या चचेरा भाई लड़कीवालों के घर जाते और भोंपड़ी के द्वार पर खड़े होकर मालिक से कहते—

“नमस्कार, निकोलाय मात्वेयिच, नमस्कार मारिया स्तेपानोवना ! हम आपकी सेवा में एक भले काम के लिए उपस्थित हुए हैं—विवाह-निमित्त प्रार्थना के लिए। हमारे यहाँ लड़का है पेत्रोवान मिखाइलोविच, और आपके यहाँ लड़की है अन्ना निकोलाइवना। क्या उनके एक स्थान पर इकट्ठे करने तथा एक नया परिवार बसाने की सम्भावना नहीं ?”

लड़की के माता-पिता आमतौर पर इसके लिए पहले से ही तैयार कर दिए जाते थे। परन्तु वे ऐसी मुद्रा बनाकर मानो उनको अकस्मात् ही आ पकड़ा हो, सोच-विचार करने के लिए कुछ समय माँगते। मध्यस्थ चले जाते। एक घण्टे के पश्चात् वे फिर लौट आते और आकर वही प्रश्न करते। यदि लड़कीवालों को लड़का पसन्द नहीं होता, तो वे इस बार झुककर नमस्कार करते और कहते—

“सम्मान के लिए धन्यवाद ! परन्तु हमारी लड़की अभी छोटी है अतः हमारे साथ कुछ देर और रहेगी ।”

इसका अर्थ था इनकार । इस पर मध्यस्थ खाली वापस लौट जाते । और यदि लड़कीवाले सहमत होते, तो वे मध्यस्थ को शाम को तीसरी बार फिर आने को कहते । तीसरी बार बुलाने का अर्थ था कि लड़कीवाले विवाह के लिए सहमत हैं ।

शाम को लड़कीवालों के घर खूब तैयारियाँ की जातीं । निकट सम्बन्धियों को बुलाया जाता, वोदका तथा अन्य खाने की चीजें मंगाई जातीं और मूर्ति के सामने रोशनी करने की तैयारी की जाती । लड़के और उसके रिश्तेदारों के आने के समय लड़की एक बड़ी चादर ओढ़े कोठरी में बैठती । बाहरवाले कमरे में आना उसके लिए वर्जित था । नियत समय पर मध्यस्थ लड़के को लेकर आते और पूछते—

“फिर हमारा काम कैसा है, निकोलाय मात्वेयिच, मारिया स्तोपानोवना ?”

लड़की के माता-पिता इस पर सीधे उत्तर देते कि वे अपनी लड़की देने पर सहमत हैं । इस पर मध्यस्थ हाथ बढ़ाकर कहते—“तो दीजिए हाथ !”

लड़की कोठरी में रोना और विलाप करना आरम्भ कर देती । अपने मुख को हाथों से ढाँपकर वह हृदय-विदारक ध्वनि से रुदन करती—

“ओख-तो म्ग्ये-तीन्को गोरये तोइनेखोन्को,

काक मोयेमू-तो रेतीबू सेर्ब्त्सू,

रेतीबू सेर्ब्त्सू ज़ाप्लीवचातू...

या पोब्यू ली नीज़को पोक्लान्यायूस्

या क्रूतोय गौरी वोसोकोयेय ।

या क्रोपकोय स्तेनी गोरोवोवोयेय,

या वीकातून् दा स्वेत्लू मेस्यात्सू,

या वोसखोभून् दा क्रास्नू सोलनीश्कू,

या रोदीतेल्यू दा सूदार-बात्यूश्कू...

ने खोदी-का ती, क्रास्नो सोलनीश्को,

क दकोमोयेच्च्ये को मेदनोयेय ।

ती ने मोय-का दा क्रास्नो सोलनीश्को,

ती स्वोई ती दा रुकी बेलीये ।

ती ने त्री-को-स्या, दा क्रास्नो सोलनीश्को,

शीतीम ब्रानीम दा पोलोतेनूश्कोम्...

ने खोदी-का दा क्रास्नो सोलनीश्को,

को पेरेदनीमू दा बोलसू उगलू,  
 ने बोबोवाय-को-स्या भोगनया रुम्यानीये,  
 ने जाभीगाय-को-स्या शनूरी बुमाभनीये,  
 ने जस्वेचीवाय दा स्वेचकी बोभीयेय  
 ने भोलीस्-का, दा क्रास्नो सोलनीइको  
 ने ब्लादी-का क्रेस्त्य दा पो-पिसानोमू,  
 ने खेली पोवलोन दा पो-उचयीनोमू,  
 ने त्वोरी मोलीत्वू इसूसोवू...  
 ने मोलीस् बा ने प्रोमोलीवाई  
 ती मीन्या-तो दा क्रास्नू लेबेवेइकू,  
 गोर्यूशीत्सू दा गोर्येगोरकूयू ।  
 ती कूकूशीत्सू दा सीरोबोर्नूयू,  
 वो चुभी-तो दा ल्यूदी बीबीये,  
 ल्यूदी दीबीय दा नेज्नाकोमीये,  
 को चुभीमू दा स्वेकू बात्यूइकू,  
 को चुभीय दा स्वेकोवबये मातूइबये...”

अर्थात्—“ओह, मुझ बेचारी को घोर दुःख है । कैसे मेरे धड़कते हुए हृदय को,  
 धड़कते हुए हृदय को, रोते हुए को...  
 मैं तोड़ डालूंगी या दीन होकर नमस्कार करूंगी ।  
 मैं ढलवान ऊँचे पहाड़ से,  
 मैं नगर की मजबूत दीवारों से,  
 मैं फाँद जाऊँगी उज्ज्वल चाँद को,  
 मैं माता-पिता को, हाँ श्रीमान पिता को...।  
 तू मत जा, लाल सूर्य,  
 हाथ धोने के ताँबे के बर्तन की ओर;  
 तू मत धो, हाँ लाल सूर्य,  
 तू अपने, हाँ, तू अपने गोरे हाथ ।  
 तू मत पोंछ, हाँ, लाल सूर्य,  
 इस कढ़े हुए चँकदार तौलिये से... ।  
 तू मत जा लाल सूर्य,  
 अगले, हाँ, बड़े कोने की ओर;

मत प्राप्त कर अग्नि लाल,  
 मत जला सूत की डोर को,  
 मत जला पवित्र ज्योति को,  
 मत पूजा कर, लाल सूर्य,  
 मूर्ति को शास्त्रानुकूल मत रख,  
 मत पूजा कर शिक्षितों की भाँति,  
 मत पूजा कर ईसा की... ।  
 परन्तु पूजा कर !  
 हाँ, मत पीस मुझ बेचारी को,  
 लाल सुन्दरी को;  
 दुखिया को, पीड़िता को,  
 तू कोयलिया को, आँसुओं से गीली को,  
 पराये हाँ, भले लोगों में,  
 लोग भले और अपरिचित, पराये हाँ,  
 ससुर-पिता की ओर, पराए हाँ, सास-माता की ओर... ।”

परन्तु यह सब आँसू व्यर्थ थे । पिता हाथ धोता, मोमबत्ती जलाता और फिर सब उपस्थितगण मूर्ति के सामने खड़े होकर प्रार्थना करते । फिर लड़की का पिता लड़के और मध्यस्थों से हाथ मिलाता । सौदा पक्का हो जाता ।

लड़का और उसके रिश्तेदार मेज़ पर बैठकर चाय पीते और खाते । साथ-ही-साथ लड़की के पिता से दहेज के बारे में भी बातचीत करते जाते । आखिरकार लड़का पूछता—

“क्या लड़की को देख सकते हैं ?”

हाथ का सहारा देकर लड़की को कोठरी से लाया जाता । वह बेचारी दुपट्टा ओढ़े लड़खड़ाती हुई आती और पिता को सम्बोधन करके अपना रुदन जारी रखती—

“फस्ये प्रीशली, दा ह्यूबी बीन्नीये,  
 फस्ये प्रीशली ओनी, प्रीयेखाली  
 फस्ये को म्ग्ये-तो दा क्लास्नोय देवूश्क्ये,  
 बूयनोय गोलोबी दा पोबेदीतेली,  
 रेतीबू सेरदस्सू दा ओग्नेबीतेली ।  
 ब्रुबचातोय कोसी दा रासप्लातेली,

बोलनोय बोल्यूइकी दा राज़ोरीतेली,  
देव्येय कासोती दा ओतगोनीतेली  
ओख-ती म्न्पेशेःको, गोर्ये तोइनेखोःको ।”

अर्थात्—“सब आ गये, हाँ, भले लोग;

वे सब आ गप्पे, आ गये ।

सब मेरे पास, हाँ, लाल लड़की के पास,  
तूफ़ानी सिर को हाँ, जीतनेवाले,  
घड़के हुए दिल को हाँ, आग लगानेवाले,  
नलाकार लम्बी खोटी को खोलनेवाले,  
स्वच्छन्द इच्छा को बरबाद करनेवाले,  
कुंवारी सुन्दरता को भगानेवाले,  
ओह, मुझ बेचारी को, घोर दुःख ।”

हाथ का सहारा देकर रुदन करती हुई लड़की को वापस कोठरी में ले जाया जाता । वहाँ बेंच पर गिरकर वह अपना रुदन जारी रखती—

“फस्यो प्रोशलो दा प्रोकातिलोस्या,  
फस्यो चासोम् दा मिनोवालोस्या  
चेस्तनो, खोरोशो देवीचेस्तवो ।  
सोकोलीम् ओनो प्रोलेतेलो,  
सोलोव्योम ओनो प्रोस्विस्तालो,  
व्योरनीम वोरोनीम प्रोकरकालो,  
सेरीम बोलकोम् ओनो प्रोवोयालो,  
सेरीम जायूशकोम् प्रोस्काकालो,  
गोरनोस्तायूशकोय प्रोप्रयादालो,  
जोलोतीम् कोलत्तोम् प्रोब्रयाकालो,  
सेरोय उतत्सेय प्रोप्लाबालो  
शतोय-पो तीखीम-तो पो जाबोल्याम्  
क्रास्नोय देवित्सेय प्रोप्लाकालो  
वो बीसोकोम् नोवोम् तेरेम्ये....”

अर्थात्—“सब गुजर गया, हाँ, चला गया,  
सब घण्टा-घण्टा करके बीत गया—

सम्मानित, अच्छा कुँवारापन ।  
 वह बाज की भाँति उड़ गया,  
 वह कोयल की भाँति कू-कू कर गया,  
 काले कौए की भाँति काँय-काँय कर गया,  
 भूरे भेड़िए की भाँति गुर्रा गया,  
 भूरे खरगोश की भाँति छलाँगें मार गया,  
 गोरनोस्ता (एक प्रकार का जंगली जन्तु) की भाँति कूद गया,  
 सोने की अँगूठी की भाँति छन-छन कर गया,  
 भूरी बत्तख की भाँति तैर गया,  
 क्या शान्त पानी की भील में,  
 लाल सुन्दरी के लिए फूट-फूट कर रोए,  
 ऊँचे नये हरम में……”

विवाह का दिन निश्चित करके लड़का अपने रिश्तेदारों समेत वापस लौट जाता। उसी दिन से लड़कीवालों के घर दहेज के कपड़ों की सिलाई का काम आरम्भ हो जाता। विवाह की अन्तिम तैयारियाँ होने लगतीं। साधारणतः दहेज लड़की के बचपन से ही तैयार किया जाने लगता था। रात को प्रतिदिन लड़की के पास कढ़ाई तथा सिलाई का काम लेकर उसकी सहेलियाँ इकट्ठी होतीं तथा उदास लड़की के चारों ओर बैठकर व्यथा-भरे गीतों और भविष्यवाणियों द्वारा उसके हृदय को और भी ठेस पहुँचातीं—

“शतो ती, शतो ती, बरेज्जीन्का,  
 ती स्तोईश, ने शातायशस्या ।  
 शतो ती, शतो ती, क्न्यागोन्यूइका,  
 ती सीदोश, ने उसमेखन्योशस्या,  
 ती ना नास ने ओग्ल्यान्योशस्या,  
 ना नास, मीलीख पोदूभ्नेन्योक,  
 ना नास, मीलीख, ल्यूबीमीख ।  
 —या ओब चयोम बूहू स्मेयातीस्या,  
 या ओब चयोम रादोवातीस्या ।  
 म्न्ये नौचेस् मालो स्पालोस्या,  
 वा म्न्ये वो स्नाख म्नोगो विदेलोस् ।  
 म्न्ये प्रिविदेलस्या स्त्राइयेन सोन,

दा बेबीई बेक कोरोतायतस्या,  
बाब्या भीसत्य् प्रिब्लीभायतस्या...

अर्थात्—“तुझे क्या हुआ, तुझे क्या हुआ बेरेजीन्का,  
तू खड़ी है, हिलती नहीं ?  
तुझे क्या हुआ, तुझे क्या हुआ, रानी,  
तू बैठी है, हँसती नहीं ?  
तू हमारी ओर ताकती भी नहीं ।  
हमारी ओर, प्यारी सहेलियों की ओर ।  
—मैं किस बात पर हँसूँ ?  
किस बात की खुशी मनाऊँ ?  
मुझे रात को कम नींद आई  
और मुझे स्वप्न में बहुत कुछ दिखाई दिया ।  
मुझे एक डरावना सपना आया—  
डरावना सपना—बुरा ।  
हाँ, कुँवारेपन का समय समाप्त हो रहा है,  
स्त्री-जीवन समीप आ रहा है...”

इसी प्रकार आँसू बहाने में एक सप्ताह बीत जाता । शनिवार के दिन प्रातःकाल से ही लड़की रोती-रोती सारे गाँव में घूमकर अपने सब रिश्तेदारों को विवाह पर आने के लिए निमंत्रित करती । हर घर में, उसके चाचा और चाचियाँ, उसका स्वागत करते, उसे खिलाते-पिलाते और सान्त्वना देते । इधर उसके पिता के घर उसकी सहेलियाँ अन्तिम नहाई-धोई का प्रबन्ध करतीं । लड़की के घर लौटने तक वहाँ उसकी बहनें, स्त्रियाँ और गाँव की लगभग सारी युवतियाँ इकट्ठी होतीं । अब इस प्रथा का सबसे अधिक करुणापूर्ण पल आता । यह था लड़की के सिर पर बँधी ‘कुँवारी सुन्दरता’ की झालर को उतारना और कुँवारी चोटी का खोलना । प्राचीन गाँव में कुँवारी लड़कियाँ साधारणतः अपने बालों को एक ही चोटी में गूँथती थीं और विवाहित स्त्रियाँ दो चोटियों में । कुँवारी की चोटी को खोलने का अर्थ था उसके बीते जीवन, पिता के घर और कुँवारेपन की स्वतन्त्रता तथा इच्छाओं को बिदाई देना । यह सब कुछ बड़ी धूम-धाम से होता था । लड़की रुदन करती हुई अपनी सहेलियों को सम्बोधन करती—

१. ‘बेरचोज़ा’, रूसी भाषा में भोजपत्र के पेड़ को कहते हैं और लड़की को प्यार में ‘बेरेजीन्का’ कहकर बुलाया जाता था ।

“वी पोइलूशाइत्ये, दा बेली लेबेदी,  
मीली लास्कोवी मोई मोलोदूकी,  
या नाकोनू दा ना वास स्लूभू ।  
स्लूभू-दूभू दा नेत्याभोल—  
वी सोईमीत्ये, दा बेली लेबेदी,  
सो मोयेय-तो दा बूयनोय गोलोवी,  
दोरोगू दा खाज—पोव्याजोचू ।  
ओतव्याभीत्ये उजली नेमेत्कीये,  
वी पोवीव्याभूत्ये दा लेन्ती आलीये,  
वी पोवीप्लेतीत्ये दा कोसोप्लेतोचू,  
रासप्लेतीत्ये वा रूसी बोलोसी,  
पो मोइम-तो प्लेचाम् मोगूचीइम …”

अर्थात्—“तुम सुनो, हाँ, घबल हंसिनियो,  
प्यार और स्नेह-भरी मेरी सहेलियो !  
मैं तुम्हें एक काम सौंपती हूँ  
काम मित्रता का, पर कठिन नहीं;  
तुम उतार लो, हाँ, घबल हंसिनियो,  
मेरे इस तूफानी सिर से  
अमूल्य और जरीदार झालर को;  
छोटे-छोटे मनकों और फीते को ।  
खोल दो गाँठें उलभी हुई,  
तुम खोल दो फीते सुर्ख रंग के,  
तुम खोल दो चोटी की डोरियों को,  
और खोल दो मेरी नल-जैसी लम्बी चोटी को,  
खोलकर फैला दो हलके गोरे रंग के बालों को,  
मेरे मजबूत कंधों पर ।”

सहेलियाँ जरीदार झालर, उलझे हुए बालों और चोटी की डोरियाँ खोलने के लिए पास आतीं । लड़की बल खाती हुई चोटी पकड़कर कशमकश करती । परन्तु यह सब कुछ व्यर्थ होता । आखिर चोटी खोली जाती और लड़की के बाल उसके कंधों पर बिखर जाते । फिर एक नया रुदन करके वह अपनी सहेलियों से कहती—

“इसतोपीत्ये म्न्हे भ्रारकू बायेन्कू  
 ब्येज दीमू-तो दा ब्येज कुद्रयावोवो,  
 म्न्हे ब्येज चादू-तो दा ब्येज येदूच्येवो...  
 नानोसीत्ये-का, दा बेली लेबेदी,  
 क्ल्यूचेवोय वीदी खोसोदनोर्यय  
 म्न्हे इजं उग्रोख क्ल्यूचंय दा पोदजं मेलनीख...”

अर्थात्—“मेरे लिए हमाम में आग जलाओ,  
 बिना धुएँ, हाँ बिना घेरे बनाते हुए धुएँ से ।  
 मुझे बिना टोने, हाँ, बिना तीखे टोने से,  
 लाओ हाँ, धवल हंसिनियो,  
 चश्मे का ठण्डा पानी,  
 मुझे तीन चश्मों का पाताल से.....।”

हमाम पहले से ही गरम कर दिया जाता था । भीड़ छँट जाती । सहेलियाँ हाथ का सहारा लेकर लड़की को गुसलखाने में ले जातीं । लड़की रास्ते में भी रुदन करती जाती थी और नहाने के पूर्व अपने कुँवारे जीवन तथा अपने पैतृक जीवन से बिदाई माँगकर विलाप करती । गुसलखाने में लड़की की नहाई-धोई दो घनिष्ठतम सहेलियाँ करवाती थीं । बाकी बाहर खड़ी प्रतीक्षा करतीं और इस बारे में गीत गातीं कि लड़की अपने नये परिवार में तथा रिश्तेदारों में कैसे रहेगी, फिर पूर्ववत् हाथ का सहारा देकर सब बड़ी धूम-धाम से लड़की को वापस घर लातीं ।

लड़कीवाले घर ‘देवीशानिक’ (अर्थात् अन्तिम कुँवारे भोज) की तैयारी होती । लड़की की सहेलियाँ और उससे आग्र्य में बड़े रिश्तेदार—विवाहित बहनें और चाचियाँ आदि—सब उपहार लिये इकट्ठी होतीं । लड़की मेज के पास खड़ी होकर अन्तिम बार अपनी सहेलियों से अपनी ‘कुँवारी सुन्दरता’—जिसको वह गुसलखाने में भूल आई थी—को वापस लाने के लिए प्रार्थना करती—

“वो सखोदीत्ये, बेली लेबेदी,  
 व भ्रारकू पारन्यू बायेन्कू  
 पो मोयू पो देव्यू क्रासोतू ।  
 ताम या मीलास; उमीवालास्या,  
 पोजाबोला देव्यू क्रासोतू  
 या वो भ्रारकोय पारनोय बायेन्क्ये  
 ना तोचेनोम ना स्तोल्बीक्ये.....”

अर्थात्—“तुम जाग्रो, घबल हंसिनियो,  
 उबलते हुए पानी वाले गुसलखाने में,  
 मेरी कुंवारी सुन्दरता लाने के लिए ।  
 वहाँ मैं नहाई-घोई,  
 भूल आई कुंवारी सुन्दरता,  
 मैं उबलते हुए पानी वाले गुसलखाने में बढ़िया छोटी-सी चौकी पर....”

परन्तु प्रथा के अनुसार सहेलियाँ, जो इस प्रार्थना की प्रतीक्षा में होती थीं,  
 सुनते ही उत्तर देतीं—

“मी पोशली बेलीये लेबेदी,  
 व भ्रारकू पारनूय बायेकू  
 पो त्वोयू दा देव्यू क्रासोत् ।  
 ओत्वोरीली द्वेर् उजे शेको,  
 जाखोदीली पोतिखोशेको,  
 वज्याली त्वोयू देव्यू क्रासोत्  
 जावेरनुली व पोलोतेनीश्को....  
 मी पोशली दा बेली लेबेदी,  
 पो शिरोकोय स्लावनोय उलीस्ये,  
 पो प्रोयेज़्भयय पो दोरोभ्चेक्ये ।  
 काक जाइली वेतरी बईनीये,  
 राजमाखनुलोस् पोलोतेनूश्को,  
 उलेतेला देव्या क्रासोता  
 जा गौरी जा बीसोकीये ।  
 जा लेसा-तो जा ब्रेमूचीये,  
 जा बोलोता जा दीबूचीये....  
 उभ् काक सेला त्वोया देव्या क्रासोता  
 ना प्रोयेज़्भू-तो दोरोभ्चेकू,  
 ना शापोबिस्तूय बेरेजीकू,  
 ना शापोबिस्तू, ना कुद्रयाबूयू,  
 ना सामूयू-तो बेरशीनोचकू ।  
 न वेरनुयू त्वोयेय देव्येय क्रासोती ।”

अर्थात्—“हम गईं धवल हंसिनियाँ,  
 उबलते हुए गर्म पानी के गुसलखाने में,  
 तुम्हारी कुंवारी सुन्दरता लाने के लिए ।  
 खोले तंग क़िवाड़,  
 धीरे-धीरे भीतर गईं,  
 ले आईं तुम्हारी सुन्दरता,  
 बाँध लिया उसे तोलिये में ...।  
 हम आ रही थीं, धवल हंसिनियाँ,  
 चौड़ी प्रसिद्ध गली से,  
 चलते रास्ते से ।  
 कैसे तेज़ हवा चली,  
 तोलिया खुल गया,  
 उड़ गई कुंवारी सुन्दरता  
 ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों की ओर,  
 घने जंगलों की ओर  
 गहरी दलदलों की ओर ...।  
 ओर कैसे जा बैठी तुम्हारी कुंवारी सुन्दरता,  
 चलते रास्ते पर,  
 छतरी-आकारवाले भोजपत्र के पेड़ पर—  
 छतरी-आकारवाले कोपलदार—  
 ठीक चोटी पर ।  
 तुम्हारी कुंवारी सुन्दरता अब लौटकर नहीं आयेगी ।”

इसके बाद अपने-अपने उपहार लिये सब रिश्तेदार बारी-बारी लड़की के पास आते । लड़की सबको झुककर नमस्कार करती, उनका धन्यवाद करती और उनसे गले मिलती । आसू बहाती हुई वह अगले दिन होनेवाले अपने विवाह पर आने के लिए सबको निमंत्रित करती । उसके बाद सब मिलकर चाय पीते और खाते । इस ‘पोसलेदनी ऊझीन’ (अन्तिम भोज) के पश्चात् लड़का अपने मित्रों समेत आ जाता । वह उपहार-रूप में लड़की के लिए ‘बेलिला’ (शृंगारदान) लाता ।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही दिखावे के भोज की तैयारी की जाती । सब रिश्तेदार इकट्ठे होते । लड़का ‘ब्रान्यो’ (लड़की को उसके पैतृक घर से ले जाए जाने को) पर आता । वह अपने रिश्तेदारों-सहित आता और मेज़ के पास बैठ जाता । लड़कीवाले

उसकी खूब खातिर करते । लड़कियाँ द्वार पर जमघट लगाकर अच्छे-अच्छे गीतों से उसकी प्रशंसा करतीं । लड़का शराब पीता, खाता, और इस बात की प्रतीक्षा करता कि लड़की को कब बाहर लाते हैं । लड़की का पिता उसको मेज़ के पास लाता । लड़की भालरों, मोतियों तथा रेशमी फीतों से सजी होती थी । वह आकर मेज़ के पास लड़के के बराबर खड़ी हो जाती । लड़का उसे शराब का प्याला पेश करता । लड़कियाँ उस समय मीज़ से यह गीत गातीं—

“वो गोरनिस्त्ये वो नोबोय  
स्तोईत स्तोलीक बुबोबोय,  
ना स्तोत्ये चारी जोलोती ।  
पेत्रोवान चारु नालीवाल,  
दूशये ग्रान्ये पोदावाल ।  
—वीपेयेय चारु औरत मीन्या,  
दा रोदी सीना सोकोला,  
पोल्नीम रोस्तोम वो मीन्या,  
दा लीत्सोम बेलीम वो सेब्द्या”

अर्थात्—“नए दालान में

है मेज़ भोजपत्र-पेड़ की लकड़ी की;  
मेज़ पर सोने के प्याले हैं ।  
पेत्रोवानने (वर का नाम) प्याले में शराब उंडेली,  
प्याला ग्रन्ना (बधु का नाम) को पेश किया ।  
पीले प्याला मुझसे—हाँ,  
नसल से बाज़ के पुत्र से,  
जो मुझ में पूरे जीवन पर है ।  
और जो गोरे मुखड़ेवाला है ।”

माता-पिता का आशीर्वाद प्राप्त कर लेने के पश्चात् लड़के और लड़की को सहन में लाया जाता । फिर गाड़ी में बिठाकर लड़की को सहेलियों द्वारा गाए गये निम्न विदाई-गीत के साथ उन्हें गिरजे में ले जाया जाता—

“ओस्तावाला लेबेदूशका  
काक औरत स्तावा लेबेदीनोवो,  
ओस्तावाला नाशा ग्रान्दूशका

काक ओत कूगा ओत देवीइचेवो ।  
 दा प्रीस्तावाला लेबेदूइका  
 दा च्तो को स्तादू, को सेरीम गुस्याम् ।  
 गूसी-त्ते नाचाली येयो इचीपाती,  
 नाचाला दा लेबेदू प्लाकाती :  
 —दा ने दिचप्लीस्ये, गूसी सेरीये,  
 दा ने सामा या क वाम जायेखाला—  
 दा जावेजली दा कौनी दोन्नीये  
 पेन्त्रोवान र्वेत मिखाइलोविचा.....”

अर्थात्—“पिछड़ गई हंसिनी,  
 कैसे हंसिनियों के भुण्ड से ?  
 पिछड़ गई हमारी प्यारी अम्मा,  
 कैसे कुँवारियों की मण्डली से ?  
 हाँ, मिल गई हंसिनी,  
 हाँ, भुण्ड से, भूरी बत्तखों से ।  
 बत्तखें तो उसे काटने लगीं;  
 हाँ, हंसिनी तो चिल्लाने लगी :  
 हाँ, काट लो भूरी बत्तखो;  
 हाँ, मैं स्वयं तुम्हारे पास नहीं आई—  
 हाँ, लाए हैं भले घोड़े,  
 माननीय पेन्त्रोवान मिखाइलोविचके ।”

इस गीत से मानो व्याहता को चेतावनी दी जाती थी कि नये परिवार तथा पराये लोगों और रिश्तेदारों में रहना उसके लिए कितना दूभर होगा ।

×

×

×

इधर लड़कीवालों के यहाँ लड़के-लड़की का विवाह होता है, तो उधर लड़के-वालों के यहाँ दूल्हे और दुलहिन का इन्तज़ार होता है । गाँव के सब लोग, युवक और युवतियाँ गाँव के बने पर एकत्रित होते हैं । इतने में दूल्हे और दुलहिन की गाड़ी पहुँचती है । एक ओर लाल कमीज़ तथा माथे पर गुँथा हुआ सेहरा पहने सुनहरे घूँघरदार बालोंवाला दूल्हा बैठा है । दूसरी ओर सजा-सजाया बीच-बचोला और बीच में दुलहिन । दुलहिन खूब सजी-धजी तथा चमकदार कपड़े पहने है—सूट, कमर

पर हरे रंग की रेशमी पेटी, कंधों पर प्राचीन रंग का रेशमी रुमाल, जिसमें से कभी पीली और कभी नीली झलक आती है। उसके सिर पर नारंगी रंग से रंगा दुपट्टा है, जो फीते द्वारा सिर पर इस ढंग से बंधा है कि दुपट्टे के पट तितली के पंखों की भाँति दोनों ओर को फैल रहे हैं। उसके भीतर उसका गंदुमी रंग का चाँद-सा मुखड़ा तथा चमकीले बाल दिखाई दे रहे हैं।

“पेत्रोवान की बहू बहुत अच्छी है !”—गाड़ी को घेरे स्त्रियाँ अपनी-अपनी राय प्रकट करती हैं।

“हूँ, सुन्दरी है ! अच्छी है ! सचमुच सुन्दरी है !”

बन्ने पर गाड़ी का मार्ग लम्बे-लम्बे बाँसों से रोका हुआ है। युवक और युवतियाँ ज़िद करके दूल्हे से ‘दरवाजे का महसूल’ अर्थात् मुट्ठी-भर खजूर या रोटी माँग रही हैं।

लड़केवालों के यहाँ चबूतरे पर बड़ी भीड़ लगी है। गाड़ी घर पहुँचती है। परन्तु घर के किवाड़ बन्द हैं। यह भी उन्हीं युवक और युवतियों की एक नई शरारत है, जो बन्ने पर दूल्हे से ‘महसूल’ माँग रहे थे। दूल्हा देर तक किवाड़ खटखटाता है, चिल्लाता है—“दुलहिन लज्जा के मारे आँखें नीची किये हुए उसके बराबर खड़ी है। वह कनखियों से चारों ओर देख रही है। उसकी प्रशंसा करती हुई बड़ी स्त्रियाँ अपनी-अपनी टीका-टिप्पणी करती हैं—“दुलहिन अच्छी है ! घमण्डी नहीं—” कोई दूसरी पराये गाँव प्रथम बार आकर नमस्कार भी न करती !”

“तभी तो अच्छी है ! देखेंगे कि बूढ़ों का आदर-सत्कार कैसे करती है ?”

कुछ देर बाद किवाड़ खुलते हैं और दूल्हा-दुलहिन और उनके साथ भीड़ में से वे लोग, जो अन्दर घुसने में सफल हो जाते हैं, सहन में आते हैं। शोरगुल करने वाली भीड़ खिड़की के पास बाहर रह गई है। फिर दूल्हा-दुलहिन कमरे में आ जाते हैं। खूब अच्छे-अच्छे कपड़े पहने चाव से भरी हुई दूल्हे की माँ उनका दहलीज पर स्वागत करती है और उनके सिर पर से रोटियाँ वारती है। दो रोटियाँ अलग-अलग भेड़ की खाल में लपेटी होती हैं। दूल्हा और दुलहिन के सिर इन रोटियों के नीचे झुक जाते हैं। यह माता का आशीर्वाद है कि उनका दाम्पत्य-जीवन सदा सुखी और सम्पन्न रहे और उनके घर में अनाज और पशुओं का बाहुल्य हो।

कमरे में घास-फूस बिछा होता है। यह भी अच्छा शयन समझा जाता है। दम्पति को नंगे फर्श पर बैठना वजित है; क्योंकि उसका अर्थ यह समझा जाता है कि उन्हें आयु-भर ‘नंगे’ ही रहना पड़ेगा ! बीच में रखी मेज पर एक साफ़ चादर बिछी होती है। उस पर नाना प्रकार के खाद्य-पदार्थ रखे होते हैं—मछली, रोटी, शराब,

काशा (मांड) और केक इत्यादि । मेज के पास केवल दूल्हा और दुलहिन ही बैठते हैं । दूल्हे के रिश्तेदार बड़े जोर-शोर से उनकी खातिर-तवाजा में लग जाते हैं ।

“कानूनी विवाह पर बधाई ! बचोले, तुम्हें और दुलहिन को !” कहकर रिश्तेदार एक-दूसरे से गले मिलते और एक-दूसरे को बधाई देते हैं । उधर एक बड़े भोज का प्रबन्ध किया जाता है । लड़के के भाई सारे गाँव में जाकर लोगों को दूल्हा और दुलहिन को बधाई देने के लिए निमंत्रित करते हैं ।

इतने में लड़की के रिश्तेदार ‘इमेन्ये’ (दहेज) लेकर आते हैं । सन्दूकों और डिब्बों का ढेर लग जाता है । गरम कोट और बिछोने खोलकर रख दिये जाते हैं । उधर सामोवार उबल रहा है । मेज पर गिलास प्याले और खाद्य-पदार्थ रखे हैं । दूल्हे के रिश्तेदार गिलासों में चाय उँडेलते हैं । फिर दूल्हा और दुलहिन भी आपहुँचते हैं । नये हरे रंग के कपड़े पहने हुए सुन्दर दुलहिन मेहमानों की ओर आती है । मुखड़ा उसका तेजपूर्ण और स्तब्ध होता है । वह अनुभव करती है कि पराये गाँव में सब अपरिचित लोगों की दृष्टि उस पर जमी है । इसलिए उसको अपनी लज्जा, सादगी तथा गम्भीर स्वभाव का प्रमाण देना है । युवती धीरे-धीरे क्रम उठाती है । अपने पति के साथ मेज के पास आकर वह सब एकत्रित रिश्तेदारों को भुक्कर नमस्कार करती है । जब प्लेट में रखकर सर्वप्रथम प्याला उसे पेश किया जाता है, तो वह उठकर भुक्ती है । नव-बन्धुओं द्वारा दी गई बधाई के उत्तर में वह एक बार फिर भुक्ती है । उपस्थित व्यक्ति दुलहिन के इस प्रकार बार-बार भुक्कर नमस्कार करने की प्रशंसा करते हैं और युवती की लज्जा तथा स्वभाव की भी सराहना करते हैं ।

इसके बाद भोज आरम्भ हो जाता है और मेहमान खाने-पीने में लग जाते हैं । दीवार के साथ-साथ बचोले और दुलहिन की चाचियाँ और अन्य रिश्तेदार स्त्रियाँ बैठी हैं । “बचोलियो, पियो, नव-दम्पति के स्वास्थ्य के लिए पियो !” यह कहकर तीस्यात्स्की (लड़के का धर्म-पिता) बारी-बारी से सब स्त्रियों को प्याला भेंट करता है ।

“ऊई, बया कह रहे हो ! हम शराब नहीं पिएँगी !” बचोलियाँ भैंपती हैं और ना-ना करती हैं । परन्तु आखिरकार उन्हें प्याला लेना ही पड़ता है । वे भी नव-दम्पति के स्वास्थ्य के लिए शराब पीती हैं ।

किवाड़ों से मेज तक का स्थान उत्सुक लोगों से खचाखच भरा है । वहाँ लगभग सारा गाँव है । वे पेट पर दोनों हाथ रखे खड़े हैं और खाद्य-पदार्थों तथा सुसज्जित मेहमानों की प्रशंसा करते हैं । “गीतों द्वारा... गीतों द्वारा सम्मान करो !”

स्त्रियों की भीड़ की ओर देखकर युवती का भाई बोल उठता है। स्त्रियाँ एक दूसरे की ओर ताकती और आपस में कानाफूसी करके तुरन्त गाना आरम्भ कर देती हैं—

“ऊई वा शतो खित्योर वा मछौर पेरबोआचनी कन्याज,  
शतो खितरय्य वा मुद्रय्य येबो ने बिलो नोगछे।  
ओन खोदील-तो व तोर्गी, वा जाकुपाल श्यौल्की,  
श्यौल्की राजनीये, वा राजनो-स्स्वेतनीये……”।”

अर्थात्—“क्या चालाक और बुद्धिमान् है सर्वप्रथम विवाह करनेवाला शहजादा !  
उससे अधिक चालाक और बुद्धिमान् कहीं नहीं हुआ।  
वह व्यापार करने गया और रेशम खरीद लाया।  
भाँति-भाँति का और विभिन्न रंगों का रेशम……”

विवाह-भोज के अवसर पर पहला गीत सदा दूल्हे और दुलहिन के सम्मान में गाया जाता है। ‘युवक शहजादे’ की सुन्दरता का वर्णन करके गीत में आगे चलकर युवती का वर्णन इस तरह किया जाता है—

“वा उम् ती शतो भ्ये, मोया सुम्नेना, पोसुम्नीवायश ?  
वा उम् ती शतो भ्ये, मोयार्याम्नेना, पोर्याम्नीवायश ?”

अर्थात्—“हाँ, क्यों तू मेरी बन्नो, शर्मा रही है ?  
हाँ, क्यों तू मेरी सुसज्जिता शृंगार कर रही है ?”

यह सुनते ही बन्नो—दुलहिन—उठकर सबको झुककर नमस्कार करती है। गीत आगे चलता है—

“या वो गोरनीत्सु स्तुपीला मोलोदित्सेयू,  
या इश्चयो स्वेकू इ स्वेकोवी वो जामेनूशकू,  
उम् या फस्य्य तो सेम्यो वा वो नेवेस्तुक्की……”

अर्थात्—“मैं कमरे में दाखिल हुई जवान,  
मैं अब सास और ससुर का हाथ बटाऊंगी।  
हाँ, अब मैं सारे परिवार में नववधू हूँ।”

गीत में युवक और युवती तथा उनके रिश्तेदारों और माता-पिता की प्रशंसा की जाती है। युवती की सुन्दरता का विशेष रूप से वर्णन किया जाता है और युवक की सुन्दरता को बढ़ा-चढ़ाकर बताया जाता है—

“ने चेरेमूदका जाबीरोस्तीवाला,  
 ने कुब्‍यावो देरेवत्सो जारात्स्वेतीवालो—  
 रासत्स्वेली कुब्‍री मोलोवेत्स्कीये ।  
 मोलोदेत्स्कीये कुब्‍री पेत्रोवानोवो,  
 च्तो पेत्रोवाना स्वेत मिखाइलोविचा,  
 ना फस्याकोय कुब्‍रीन्‍वधे पो त्स्वेतोचकू त्स्वेतायत,  
 पो त्स्वेतोचकू त्स्वेतायत पो लाजूर्येवोम्,  
 ना फस्याकोय न कुब्‍रीन्‍वये—पो भेमचुझीनक्ये……”

अर्थात्—“चेरेमुखा—(एक प्रकार का सफ़ेद पेड़, जिसका रूसी रोमांस में बड़ा वर्णन होता है)—नहीं उग आया;  
 टहनीदार पेड़ तो नहीं फल-फूल उठा ।  
 फूल उठे घुँघराले बाल—कोंपलें—  
 नन्हें-नन्हें पेत्रोवान मिखाइलोविचके ।  
 हर एक घूँघर (कोंपल) पर फूल खिल रहा है—  
 फूल खिल रहा है आस्मानी रंग का,  
 हर एक घूँघर पर—मोतियों पर……”

गानेवालियाँ तीस्यात्सकी (धर्म-पिता) और बीच-बचोलों के विषय में भी गीत गाती हैं । पर तीस्यात्सकी और बचोले तो अपराधी हैं । उन्हीं के कारण युवती कुँवारी कन्याओं की मण्डली से छिटककर अपनी सहेलियों से जुदा हो गई है । इसलिए लड़कियाँ अपने गीतों में युवती के कुँवारपन के सौभाग्य के बरबाद करनेवालों और नष्ट करनेवालों की हँसी उड़ाने में कोई कसर नहीं छोड़ती—

“ऊ नास व ओगोरोछे ने स्नोप ली ?  
 वा ऊ नास स्वात जा स्तोलोम न ब्येज़ नीग ली ?  
 वा ऊ नास व ओगोरोछे ने ऊशात ली ?  
 वा ऊ नास स्वात जा स्तोलोम ने प्लेशात ली ?  
 वा ऊ नास व ओगोरोछे ने प्लेशात ली ?  
 वा ऊ नास व ओगोरोछे ने माक ली ?  
 वा ऊ नास स्वात जा स्तोलोम ने नाग ली ?  
 वा ऊ नास व ओगोरोछे ने लूक ली ?  
 वा ऊ नास स्वात जा स्तोलोम ने ग्लूप ली ?

ऊ नास व ओगोरोछे बे ल्लेब ली ?

वा ऊ नास स्वात जा स्तोलोम ने ओस्लेप ली ?”

अर्थात्—“हमारी बगिया में क्या फूल नहीं ?

मेज़ पर बैठे हमारे बचोले के क्या टाँगें नहीं ?

हमारी बगिया के क्या टब नहीं ?

मेज़ पर बैठा हमारा बचोला क्या गंजा नहीं ?

हमारी बगिया में क्या पोस्त का फूल नहीं ?

मेज़ पर बैठा हमारा बचोला क्या नंगा नहीं ?

हमारी बगिया में क्या प्याज नहीं ?

मेज़ पर बैठा हमारा बचोला क्या बुद्धू नहीं ?

हमारी बगिया में क्या अनाज नहीं ?

मेज़ पर बैठा हमारा बचोला क्या अंधा नहीं ?”

इस प्रकार बचोले और लड़की के अन्य रिश्तेदारों का मज़ाक उड़ाया जाता है। लड़कियों की तीखी वाणी से बचने का एक मात्र उपाय उनको मिठाई या थोड़े से पैसे देकर खुश करना है।

इस प्रकार गीतों के बीच “प्रीयेज़दनी स्तोल” (आगमन-भोज) समाप्त हो जाता है। दूल्हा और दुलहिन तथा मेहमान थोड़ी देर के लिए इधर-उधर बिखर जाते हैं। कोई सहन में चला जाता है और कोई खुली हवा में बाहर, परन्तु रहते सब पास-ही-पास हैं। अभी तक जो हुआ, वह केवल भूमिका-रूप ही समझिए। वास्तविक रस्म का आरम्भ तो इसके बाद होता है। मेहमान फिर से झोंपड़ी में आ जाते हैं। बड़ी मेज़ पर से सब-कुछ उठा दिया जाता है—खाद्य-पदार्थ और प्लेटें ही नहीं, प्रयुक्त चादर तक भी उठा दी जाती हैं और मेज़ बिल्कुल खाली कर दी जाती है। सब मेहमान द्वार पर इकट्ठे हो जाते हैं और आपस में कानाफूसी करते हुए इधर-उधर निगाह दौड़ाते हैं। इतने में अन्दर से एक शानदार जुलूस निकलता है। दो बचोले दूल्हे और दुलहिन को बाहर लाते हैं।

इस बार दुलहिन दूसरे नये कपड़े पहने होती है। अब उसने पीला अलतास का सूट पहन लिया है, जिस पर जामुनी रंग का मखमली पोवोयनिक (ओढ़नी) है और सिर पर सफ़ेद रेशमी रुमाल बँधा है। प्राचीन प्रथा के अनुसार भोज पर दुलहिन को कई बार कपड़े बदलने पड़ते हैं। प्राचीन काल से ही गाँववालों का विश्वास रहा है कि युवक और युवती को नज़र लगने का डर रहता है, उन पर जादू-टोना किया जा सकता है। युवती के बार-बार कपड़े बदलने का कारण यह बताया जाता

है कि नज़र लग जाने पर कपड़े बदलने के साथ-साथ नज़र भी हट जाती है। युवती की मुद्रा पूर्ववत् गम्भीर और अचल है। घर की जवान मालकिन ओबर्याभात्य करने (नये घर को सजाने) निकली है। भीड़ शान्त हो जाती है। बहुत सी उत्सुक आँखें इस दृश्य की ओर जमी हैं। युवती के पीछे-पीछे बचोला है। वह चादर से ढँके तौलियों के एक बड़े गट्टर को उठाये है। यह सब तौलिये युवती ने अपने हाथों स्वयं बुने हैं। दुलहिन मेज़ के पास आती है। वहाँ आकर वह झुककर तीन बार नमस्कार करती है और मेज़ पर चादर बिछाती है। मेज़ बड़ी होने के कारण वह मेज़ की दूसरी ओर जाकर उसी प्रकार नमस्कार करती है और एक दूसरी चादर उधर और बिछाती है। तब मेज़ पर घरेलू 'क्वास' (रोटी से बना बीयर की क्रिस्म का एक पेय) से भरी बोतलें रखती है। यह 'क्वास' भी वह अपने पिता के घर से लाई है। यह सब-कुछ उसके गृहस्थी के काम में प्रवीणता का प्रमाण है।

इस समय सब स्त्रियाँ मिलकर ऊँचे-ऊँचे स्वर में गाती हैं। उनमें नवीन गृहस्थी की भावी समृद्धि और बाहुल्य का बखान किया जाता है। ऊँचे स्वर में गाए गये इन गीतों के साथ दूल्हा अगले कमरे में एक कोने की ओर चलता है। उसके हाथ में मेखें और हथोड़ा है। वह दीवार पर लम्बी-लम्बी मेखें गाड़ता जाता है। दुलहिन उसके पीछे-पीछे चलती है। वह हर एक मेख के पास झुककर नमस्कार करती है और उस पर एक-एक सफ़ेद तौलिया, जिसके कोने पर उसने स्वयं अपने हाथों से कसीदा काड़ा है, टाँगती जाती है। चंद ही मिनटों में सारा घर उसके अपने हाथ से तैयार की हुई वस्तुओं से सज उठता है। ऐसा करके मानो वह घर के रक्षक ग्रहण पूर्वजों से अपने नये परिवार में ग्रहण किये जाने और उस परिवार का एक सदस्य समझे जाने के लिए प्रार्थना करती है।

जब 'ओबर्याभानिये दोमा' (घर सजाने) की प्रथा समाप्त होती है, तो मेहमान शोर मचाते हुए फिर मेज़ के पास इकट्ठे होते हैं। मेज़ पर तुरन्त खाद्य-पदार्थ (भुना हुआ मांस, कचौरियाँ, कालाची अथवा डबल रोटी) रख दिये जाते हैं। सब मेहमान गीत गा-गाकर मेज़ के इर्द-गिर्द नाचना शुरू कर देते हैं। इस वृहत् भोज का असल आरम्भ अब होता है। बचोले अपने शाल-दुशाले फेंक देते हैं और हाथों से सफ़ेद रुमाल फहराने लगते हैं। वे एक-दूसरे से गले मिलकर प्राचीन गीत गाते हैं—

“उझ भी स्याद्येम-का, आत्सी वो एदीनोय क्रुग,  
वो एदीनोय क्रुग, दा ना जेल्योनी लुग……”

अर्थात्—“हम बैठते हैं भाइयो, एक घेरे में”  
 हाँ, एक घेरे में, हरे-भरे चरागाह में ।”

सहन में अब युवक और युवतियाँ इकट्ठे हो चुकते हैं। वहाँ से हारमोनियम की धुन और लड़कियों का स्वर कानों में पड़ता है—

“नीन्च्ये जामुझ इत्ती ने नावो वेनचात्सा,  
 व सेलसोवेत्ये ऊ स्तोला तोलको जापिसात्सा ।”

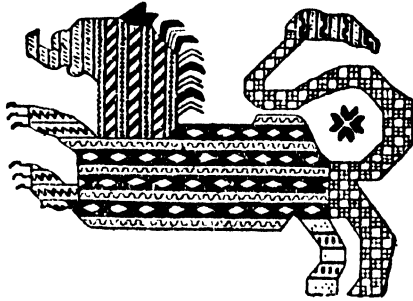
अर्थात्—“अब विवाह करने के लिए चर्च नहीं जाना चाहिए।  
 ग्राम-पंचायत में मेज़ के पास केवल नाम दर्ज करवाना चाहिए ।”

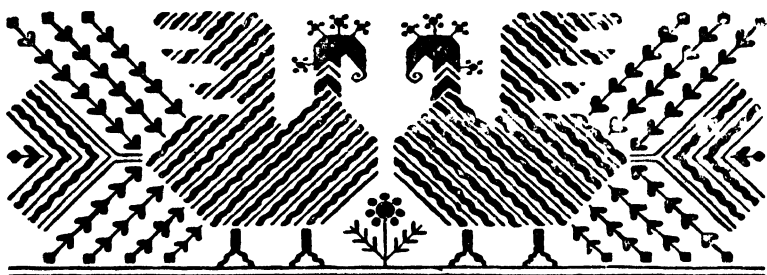
इसके बाद ख़ूब नृत्य होता है। मेज़ के चारों ओर हारमोनियम की धुन, पाँव की टप्-टप्, प्लेटों आदि का शब्द तथा गीतों की ध्वनि एक विचित्र-से संगीतमय शोर में परिणत हो जाते हैं। अन्तिम रस्म अदा करके दूल्हा और दुलहिन प्लेट में शराब का प्याला रखकर उपस्थित अतिथियों को बारी-बारी से पेश करते हैं। वे शराब पीते हैं और खातिर-तवाज़ा के लिए उपहार-रूप में ख़ाली प्याले में कुछ पैसे डाल देते हैं। नाच और यह रंगरेलियाँ दूसरे दिन प्रातःकाल तक चलती रहती हैं।

दूसरे दिन उपहार देने की रस्म अदा की जाती है। दुलहिन संदूक में से अपने हाथों से बनी चीज़ें सारे परिवार में बाँटती है। अपनी सास के लिए वह घर का बुना सराफ़ान लाई है, ससुर और पति के चाचा के लिए कमीज़ और बचोलो के लिए कमर पर बाँधनेवाली ऊनी पट्टी लाई है। इस प्रकार अपने हाथों से बनी चीज़ों का उपहार देना नववधू को नये परिवार से प्रेम और मित्रता के सुदृढ़ पाश में बाँधने का एक नया जादुई साधन है। वैसे तो ये सब चीज़ें बाज़ार से भी खरीदी जा सकती है।

पर रूस में प्रचलित सारे-के-सारे विवाह-गीत प्रथाओं के विभिन्न रूपों और रंगों से ही सम्बन्धित नहीं, बल्कि अन्य प्रकार के विवाह-गीत भी हैं—वे कल्पित सुन्दर चित्रों में युवक और युवतियों की मित्रता तथा इस बात का वर्णन करते हैं कि किस प्रकार युवती अपने मंगेतर के घोड़े के लिए भालर तैयार करती है और किस प्रकार युवक अपनी मंगेतर के लिए सोने की बुलबुल और हीरे-जड़ित प्याला खरीदकर लाता है। ऐसे गीत बिना विवाह के रस्म के भी अच्छे लगते हैं। सुन्दर भाव-गीतों

की भाँति उनको भी स्मरण रखा जाता है। इनमें से बहुत से गीत भाव-गीतों के रूप में कोलखोजों के रंगमंच पर भी पहुँच गये हैं। प्राचीन काल के सब अवशेषों को फेंककर प्राचीन रूसी विवाह की प्रथा ने बहुत सी अमूल्य तथा सजीव सामग्री को सुरक्षित रखा है।





५

## विलाप-गीत

विशेष ममत्व एवं कवित्वपूर्ण रुदन करके मृतक के लिए शोक व्यक्त करने की प्रथा संसार में बहुत प्राचीन काल से चली आ रही है। ऐसे मृतक-विलाप रूस, सीरिया, मिस्र, भारत, यूनान, रोम और यूरोप के सब देशों में मिलते हैं। रूस में उनका जन्म मृतक के प्रति केवल अपना निजी शोक तथा दुःख प्रकट करने के लिए ही नहीं हुआ। इसके अन्य भी कई कारण हैं। रूसी मृतक-विलापों में हमें महत्त्व के तत्त्व मिलते हैं।

प्राचीन रूसी पूर्वजों का विश्वास था कि प्राणी मृत्यु के बाद भी जीवित रहता है तथा उनके परिवार या कबीले की रक्षा करता है अथवा उसको दण्ड देने की क्षमता रखता है। उनका यह भी विश्वास था कि मृतक उसको सम्बोधित किये गये शब्द और प्रार्थना भी सुन सकता है। इसी विश्वास के आधार पर मृतक का सम्मान करने की प्रथा चली। रुदन-विलाप करके मृतक के रिश्तेदार तथा उसके कबीले के लोग उसकी प्रशंसा करते थे। उनका विश्वास था कि इस प्रेम-अभिव्यक्ति द्वारा वे मृतक से अपने कल्याण के लिए प्रार्थना कर सकते हैं तथा भविष्य में उसके क्रोध और शाप से बच सकते हैं।

प्राचीन रूसी गाँवों ने इन विलाप-गीतों में सुन्दर भावात्मक कृतियों, पूर्ण कलात्मक पात्रों तथा गम्भीर अनुभूतियों और अभिव्यक्तियों का सृजन किया है।

इन विलापों की महत्ता केवल उनके कवितापूर्ण गुणों में ही नहीं है। बल्कि प्राचीन रूस के मृतक-विलाप क्रान्तिपूर्व रूसी गाँवों का दुःखमय चित्र भी खींचते हैं।

परिवार के पालक पिता की मृत्यु हो गई—उसकी पत्नी और बच्चों की सहायता तथा पालन-पोषण करने वाला कोई नहीं रहा। विधवा अपने भाग्य पर फूट-फूटकर रोती थी। अब उसकी तथा बाल-बच्चों की अधिकारी वर्ग, जमींदारों और पुलिस से रक्षा करने वाला कोई नहीं, खेती-बाड़ी के काम को संभालने वाला कोई नहीं। अब उसकी छोटी-छोटी लड़कियों को बुद्धि देने वाला तथा उनकी सहायता करने वाला कोई नहीं रहा। बड़े कष्ट से कमाई थोड़ी सी पूँजी तथा जायदाद कर्ज और टैक्स चुकाने में चली गई। कमसिन बच्चों को भीख माँगने या पराये लोगों की दासता या सेवा करने के सिवा और कोई चारा नहीं रहा।

माँ मर जाती तो उसकी विवाह योग्य लड़की उसके लिए फूट-फूटकर रोती। अब दुष्ट पड़ोसी उसका जीना दूभर कर देंगे। वे अब उस अनाथ, बेचारी का मजाक उड़ायेंगे। उसे गालियाँ देंगे और तरह-तरह की तोहमतें लगायेंगे।

जवान लड़का मर जाता तो माता-पिता अपने बुढ़ापे के एक मात्र सहारे को रोते। अब उनकी किसी को आवश्यकता नहीं रही। अब उन पर कोई तरस नहीं खायेगा। उनकी परवरिश करनेवाला तथा बीमारी में देख-भाल करनेवाला अब कोई नहीं रहा।

कलात्मक रूप में किये गये ये रूदन और विलाप न केवल मृतक को दफ़नाने के समय उपस्थित श्रोतागणों के हृदयों को कम्पायमान कर देते थे, अपितु आज भी पुस्तकों में लिपिबद्ध होकर वे पाठकों के दिलों को हिलाकर पिघला देते हैं। यह सच है कि सभी रूदन करनेवाले इन विलापों का अभिनय समान रूप से सुन्दरता तथा स्पष्टता से नहीं कर पाते थे। प्रत्येक विधवा या अनाथ अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार अपने ही ढंग से विलाप किया करते थे। परन्तु प्राचीन रूस में इस कला में निपुण बड़े-बड़े अभिनेता भी थे जिनकी जीविका का सहारा केवल दूसरों के लिए मृतक-विलाप करना था। बहुत सी ऐसी स्त्रियाँ थीं जिनका व्यवसाय ही मृतक-विलाप करना था। वह घर-घर घूमा करती थीं और जो लोग स्वयं विलाप करने में असमर्थ होते थे वे उनकी ओर से विलाप किया करती थीं। ऐसी विशेष प्रतिभा-सम्पन्न कुछ स्त्रियों का नाम रूसी लोक-साहित्य के इतिहास में सदा जीवित रहेगा। आजकल उनके विलापों का संग्रह किया जा चुका है और वे पुस्तक-रूप में उपलब्ध हैं। अब वे विश्व-लोक-साहित्य का एक अमूल्य अंग बन चुके हैं।

१. गुजरात, सौराष्ट्र, पंजाब और राजस्थान में भी इस प्रकार की प्राचीन प्रथा है। कई मौके ऐसे आये जब प्रौढ़ या बूढ़ी औरतों द्वारा छाती पीटने, शोक-गीत गाने और मातम मनाने के अनोखे दृश्य हमने देखे हैं।

इस विषय में उत्तरी रूस के ओलोनेत्सकी गाँव की किसान महिला इरीना अन्द्रयेवना फेदोसोवा का नाम विशेषकर उल्लेखनीय है। अपनी युवावस्था में स्वयं गीतों ने उसे विलाप करते सुना था और उसकी स्मृति में उन्होंने सुन्दरतम पृष्ठ लिखे हैं। इरीना अन्द्रयेवना को तीस हजार से भी अधिक विलाप मुँह-जबानी याद थे।

प्राचीन रूस में मृतक-विलापों का प्रयोग समाज के विभिन्न वर्गों ने किया है। ज़ारकी, बोयारो ( रईसों ) की, सौदागरों की तथा बड़े-बड़े ज़मींदारों की मृत्यु पर विलाप किये जाते थे। सम्राट् के महल में तथा गाँव की भोंपड़ी में समान रूप से विश्वास किया जाता था कि मृतक के कमरे में खिड़की के पास साफ़ पानी से भरा हुआ बर्तन रखना चाहिए ताकि मृतक-आत्मा उसमें स्नान कर सके; मृतक-शरीर को घर से बाहर ले जाते समय बड़ी सावधानी से काम लेना चाहिए ताकि मृतक-शरीर किवाड़ की चौखट से न छू जाय, अन्यथा घर में दूसरी मृत्यु का होना अनिवार्य है। दुपहर और शाम का खाना खाते समय मेज़ पर फालतू चीज़ें रखनी चाहिए ताकि मृतक गुप्त रूप से परिवार के साथ खाना खा सके, इत्यादि।

प्राचीन रूस इन रस्मों को बड़ी सावधानी से पालता था। इनसे सम्बन्धित शकुनों और अपशकुनों पर उनका पूर्ण विश्वास था।

पीटर-प्रथम द्वारा किये गये सुधारों के परिणामस्वरूप उच्च वर्ग के लोगों का जीवन यूरोपीय ढंग पर तेज़ी से बदलता गया। ज़ार और बोयारों (रईसों) के हरमों से विलाप-गीत भी धीरे-धीरे लुप्त होते गये। सौदागरों के मध्य यह विलाप-गीत चिरकाल तक प्रचलित रहे, परन्तु बाद में उन्होंने भी इन गीतों को भुला दिया। रूस में क्रान्ति-पूर्व अन्तिम वर्षों में मृतक-विलापों और दफ़नाने की प्राचीन रस्मों का प्रयोग केवल गाँवों में ही किया जाता था।

मृतक-विलापों को लिपिबद्ध करने का कार्य अत्यन्त कठिन है। उस समय जब मृतक के रिश्तेदार विलाप कर रहे हों लिपिबद्ध करना बिल्कुल असम्भव है। व्यवसाय-रूप से विलाप करनेवाली जो फ़ुरसत के समय अपनी कृतियों को संग्रहकर्ता के सामने दुहरा सकें अब रूस में विरली ही मिलती हैं। फिर भी रूस में विलाप-गीतों को संग्रह करने का बड़ा सराहनीय कार्य हुआ है। रूसी महिला एन० कोल्पाकोवा ने अपनी पुस्तक “क़नीगा ओ रूसकोम् फोल्कलोर्ये” (रूसी लोक-साहित्य) में कुछ ऐसे विलापों को उद्धृत किया है।

एक बार कोल्पाकोवा रूसी लोक-साहित्य विषयक सामग्री का संग्रह करने गाँवों में घूम रही थी। वहाँ उसे एक बुढ़िया मिली जिसका व्यवसाय क्रान्ति-पूर्व

रूस में दूसरों के लिए विलाप करना था। कोल्पाकोवा ने हठ करके तथा चालाकी से उस बुढ़िया को विलाप गीत सुनाने के लिए राजी कर लिया। बुढ़िया एक बेंच पर बैठ गई और अपनी ठोड़ी अपनी हथेली पर रखकर कहने लगी—

“अब मैं तुम्हें ठीक उसी प्रकार विलाप करके दिखाती हूँ जिस प्रकार मैंने अपनी बहिन के साथ मिलकर अपने पिता की मृत्यु पर विलाप किया था।”

बुढ़िया धीरे-धीरे परन्तु प्रिय और शोकजनक स्वर में गाने लगी—

“कुदा ती, मोयो जाकोन्नोये सेम्पेयूशको, श्रोतप्रावल्यायशस्या ?

श्रोस्तावल्याश, ती मोग्या, पोबेदनूय गोलोवूशकू,

स क्यम् या भिःयू बूदू, पोबेदनाया गोलोवूशका ?

रासप्रोस्तीस् काक ती स खोरोमनीय पोस्त्रोयेन्सयेम,

ई सो ऐतोयेय पालातोय बेलोकामेन्नोय,

ई सो सेदेंचीनीमी रोभोनीमी देतूशकामी ।

ई रासप्रोस्तीस् काक ती सो द्वोरोबोय सो स्कोतीनूशकोय,

ई सो ऐतीमी पोल्यामी ख्लेबोरोदनीय,

ई सो ऐतीमी लूगामी सेनोकोस्नीमी ।

ती पोस्लूखाई-का, रोदीत्येल् मोय तातेन्का,

स क्यम् मी भित् यू बूद्यं म नोन्, पोबेदनीये गोलोवूशकी ?

ई काक मी बूद्यं म जापाखीवात्य् पोल्या दा ख्लेबोरोदनीये,

ई ओबकाशीवात्य् लूगा दा सेनोकोस्नीये ?

रोस्तोम-वज्जरोस्तोम् वेद मी दा नोन् मालेइयेन्की,

ने ओबराबातीवात्य् नाम क्सेस्यान्कोय राबोतूशकी,

ई ने जापाखीवात्य् पोलेयेय दा ख्लेबोरोदनीय,

ई ने ओबकाशीवात्य् लूगोव दा सेनोकोस्नीय .....”

अर्थात्—“कहाँ को तू, मेरे कानूनी परिवार, सिधार रहा है ?

छोड़ रहा है तू मुझे, बिचारी गरीबन को,

मैं किसके संग रहूँगी, गरीबन बिचारी ?

इन महल बाड़ियों से तू कैसे विदा लेगा,

और सफ़ेद पत्थर से बने इस घर से,

और अपने जाये प्यारे बच्चों से ।

और डंगारों के बाड़ों से-कैसे विदा लेगा,

और अन्न-उपजाऊ इन खेतों से,  
 और घास से ढँपी इन चरागाहों से ।  
 तू, सुन मेरे प्यारे बापू,  
 अब हम किसके संग रहेंगे, गरीब बेचारे ?  
 डंगरों की हम कैसे देख-भाल करेंगे,  
 और अन्न-उपजाऊ खेतों की कैसे जोताई करेंगे,  
 और घास से ढँपी चरागाहों को कैसे काटेंगे ?  
 बुद्धि से तो हम सब बुद्धू हैं,  
 आयु व कद में अभी बहुत छोटे हैं,  
 और अन्न-उपजाऊ खेत की जोताई नहीं कर सकेंगे,  
 और घास से ढँपी चरागाहों को नहीं काट सकेंगे.....”

बुढ़िया विलाप करती-करती रुक गई और कहने लगी—

“नहीं, नहीं, यह काम बहुत कठिन है । आवाज भी नहीं उठती, और मृतकों को याद करना भी तो बहुत शोकजनक है । पिता की मृत्यु के पश्चात् हम अनाथ हो गये थे । माँ हमारा पालन-पोषण करने में असमर्थ थी । जीविका का कोई साधन नहीं था । माँ व्यवसाय-रूप से लोगों के लिए विलाप किया करती थीं । भला आँसू बहाकर भी कहीं जीविका चलती है ! हमारी भोंपड़ी पर दरिद्रता का राज्य था । जीवन में मैंने बहुत दुख उठाया है । यही कारण है कि ये शोकजनक शब्द अब मेरी हड्डी-हड्डी में रम गये हैं.....”

बुढ़िया चुप हो गई । कोल्पाकोवा ने बुढ़िया का ध्यान आकर्षित करने के लिए उससे पूछा—

“और तू बूढ़ी अम्मा, विवाहों में भी जाया करती थी, विवाहिता के साथ रुदन करने ?”

“नहीं बेटा, विवाहों पर तो मैं नहीं जाती थी । कभी-कभी रँगरूटों के प्रति रुदन करने अवश्य जाया करती थी ।”—बुढ़िया ने उत्तर दिया ।

### रँगरूटों के प्रति विलाप-गीत

“रँगरूटों के प्रति रुदन-विलाप की कृतियाँ भी मृतक-विलापों से बहुत मिलती-जुलती हैं । स्वेच्छाचारी बादशाह जारों के समय रूस में फ़ौजी रँगरूट कई

वर्ष तक लौटकर नहीं आते थे। साधारणतः वे बूढ़े होकर ही वापस अपने गाँव आते। इसलिए उनको भी मृतकों की भाँति ही रोया जाता था। विदाई करते हुए मृतक की ही तरह उन पर विलाप किये जाते थे।

बुढ़िया फिर बोल उठी—

“हमारे यहाँ पहले रँगरूट वर्षों के बाद लौटते थे। वहाँ सामने देखो, वह जहाजों के ठहरने का स्थान। बस, ठीक वहाँ ही उनको—ज्ञान के टुकड़ों को—विदा किया जाता था। वहाँ से उनको पेत्रोज़ावोदस्क और फिर पीतरबुर्ग (लेनिनग्राद) ले जाया जाता था। वहाँ से सीधे रण-क्षेत्र में। मेरे तो कोई लड़का नहीं था, केवल लड़कियाँ ही थीं—परन्तु मेरी बहन के दो लड़कों को ले गये थे। तब मैंने उनके लिए विलाप किया था। वह इस प्रकार है।” बुढ़िया ने फिर शोकजनक रूखी तान निकाली—

“ती पोस्लूखाई-का, सेर्वेशनो मोयो दित्यात्को,  
 उभ्र काक वेदना क्रूचीन्नाया गोलोवूशका,  
 काक या स्येज़दीला जा ओनेगूशको सप्रावित्सा,  
 काक खलोदीला या व बोयेन्नोम वो प्रीमुत्सवीये,  
 काक स्तोइत मोयो सेर्वेशनो रोभोनो दित्यात्को  
 काक वो ऐतोम् वो बोयेन्नोम् वो प्रीमुत्सवीई,  
 काक या म्लयाभू, स्मोत्र्यू क्रूचीन्नाया गोलोवूशका,  
 काक स्ताला स्तावित् सेर्वेशनो मोयो दित्यात्को  
 दा पोद ऐत्यू पोद मेरू गोसूदारस्त्व् ।  
 जाद्रोभाली येवो रेज़वीये तुत् नोभेकी,  
 पोद ऐतोय पोद मेरोय गोसूदारस्त्वोय ।  
 ताक उभ्र जानीलो येशो रेतलीवोय सेर्वेचूशको,  
 उशीबला येवो तोस्का वेलीकाया क्रूचीनूशका.....  
 ताक उभ्र उशीबला मोग्या वेलीकाया क्रूचीनूशका.....  
 ताक उभ्र वेदना पोवेदनाया गोलोवूशका,  
 ई काक सखोदीला ई वो कुज़नीत्सू भेलेज़न्यू,  
 ई स्कोवाला ई त्री ओबरूचा भेलेज़नीख,  
 ओदीन ओबरूच कलाला या ना स्वोयो म्लाव्यू गोलोवूशकू,  
 द्रुगोय ओबरूच कलाला या ना स्वोयो रेतलीवोय सेर्वेचूशको,

त्रेती ओबरच बलाला या ना रेज़वी स्वीई नोभेन्की,—  
ताक उभ् उक्रेपीला या स्वीये रेतलीबोय नेस्चास्तनोये सेव्चूशको.....”

अर्थात्—“तू सुन तो मेरे लाड़ले बच्चे,  
कितनी गरीबन हूँ शोकग्रस्त बिचारी,  
मैं किस प्रकार ओनेग्रूशका<sup>१</sup> के बारे में पूछ-ताछ करने गई।  
कैसे दाखिल हुई मैं फ़ौजी दफ़्तर में,  
किस तरह मेरा लाड़ला जाया खड़ा था।  
किस तरह फ़ौज के इस दफ़्तर में,  
किस तरह देखा, निहारा, मुझ शोकग्रस्त बिचारी ने,  
किस प्रकार घरने लगे मेरे लाड़ले बच्चे को  
सरकार के इस हुक्म के अधीन,  
उसकी पतली-पतली सुन्दर टांगें काँप रही थीं,  
सरकार के इस हुक्म के अधीन।  
उसका घड़कता हुआ दिल मुरझा चुका था,  
उसको गहरे शोक ने ग्रस लिया था.....  
मुझे भी गहरे शोक ने ग्रस लिया था.....  
गरीबन बिचारी को,  
मैं कैसे लुहार के पास गई,  
और लोहे के तीन पट्टे तैयार करवाये,  
एक पट्टा मैंने जवान सिर पर रखा,  
दूसरा मैंने अपने घड़कते हुए दिल पर रखा।  
और तीसरा पट्टा मैंने अपनी काँपती टांगों पर रखा.....  
इस प्रकार मैंने अपने घड़कते हुए अभागे दिल को मजबूत किया .....

“इस प्रकार प्राचीन रूस में स्त्रियाँ विलाप किया करती थीं,” दुपट्टे के छोर से अपने आँसू पोंछते हुए बुढ़िया ने कहा। यह आँसू विलाप करते-करते छोटी-छोटी बूंदों के रूप में उसके भुर्रीदार गालों पर जमा हो गये थे।

अब यह रँगरूटी विलाप-गीत बिल्कुल लुप्त हो गये हैं। सोवियत सेना के जवान अब और ही ढंग से विदा किये जाते हैं। अब वह पुराने रँगरूटों की भाँति लड़ाई पर नहीं जाते। सोवियत जवानों को अब खुशी के गीत और चास्तूस्कियाँ

(चतुष्पदी गीत) गाकर विदा किया जाता है, परन्तु ये विलाप-गीत चिरस्मरणीय रूसी लोक-साहित्य का एक सुन्दरतम प्रकार है।

मृतक-विलापों और रँगरूटी गीतों के अलावा अन्य गम्भीर और जटिल भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कविता के इस साधारण प्रकार का प्रयोग करके विलाप-गीतों में बहुत कुछ भर दिया जाता था।

## विलाप-कथाएँ

वर्तमान सोवियत-युग में एक विशेष प्रकार के विलापों का निर्माण हुआ है। वे हैं—“विलाप-कथाएँ”। ये विलाप सोवियत-भूमि के प्रमुख कार्यकर्ताओं और वीरों की स्मृति में लिखे गये हैं। विलाप-कथाओं में अभिव्यक्त भावनाएँ किसी के अपने निजी शोक को नहीं प्रत्युत समस्त जनता के शोक को व्यक्त करती हैं।

सोवियत लोक-साहित्य में लेनिन, कीरोव, सेर्गो ओर्भोनिकीदज़े, च्कालोव, सेरोव् आदि के विषय में विलाप-गीत मिलते हैं। आज इन विलापों पर कोई अकेला व्यक्ति आँसू नहीं बहाता प्रत्युत् लोकप्रिय गायक सामूहिक तौर पर यह विलाप-गीत गाकर अपना शोक प्रकट करते हैं। लेनिन की मृत्यु की सूचना पाकर कारेलिया की स्त्रियाँ विलाप करती थीं—

“काक उसलीशाली मी वेस्तोचकू नेरादोस्तनू,  
दा इजवेस्त्ये नेवेसेलोये,  
काक मी फ्स्ये दा सवोलनोवालीस्या।  
मी उसलीशाली च्तो न्येत व भीवीख  
व्लादीमीरा इलीचा लेनिना।  
ओन सकोन्चालसा द्वादस्तात् पेरबोवो  
यानवार्या मोरोज्ना मेस्यास्ता।  
उभ् काक मी दा तुत पोदुमाली,  
उभ् काक गोर्को मी ज़ाप्लाकाली…………”

अर्थात्—“कैसे सुनी हमने बुरी सूचना,  
हाँ सूचना दुःखदाई,  
कैसे हम सब घबरायें।  
हम ने सुना कि स्वर्गवास हो गया है,  
व्लादीमीर इलीच लेनिन का।

वह स्वर्ग सिधार गया इक्कीस  
जनवरी को बर्फीले मास की ।  
हम कैसे सोच-विचार में पड़ गये  
और हम कैसे फूट-फूट कर रोयें .....”

इसके उत्तर में आरकेंजल के कोलखोज से गुंजार आई—

“काक प्रीशला तो वेस्त्य् इज गोरोक फ्स्यो,  
काक ने स्तालो ऊ नास कासना सोलनीशका,  
काक ई तोय लूनी पोदनेबेस्नीये,  
जोलोतोय ज्वेज्दी फ्स्यो स्लेस्तयाश्चेय ।  
काक ने स्तालो बोभूद्या फ्स्येय रोसीयूश्की—  
दोरोगोबो ऊ नास तवारीश्चा लेनीना,  
काक व्लादीमीरा-दा इलीचा-तो स्वेत . ....”

अर्थात्—‘कैसे गोर्की से सूचना आई,  
कैसे हमारा लाल सूर्य नहीं रहा,  
कैसे आकाश का वह चन्द्रमा  
अति उज्ज्वल सुनहरा तारा ।  
कैसे समस्त रूस का नेता नहीं रहा—  
प्रिय हमारा साथी लेनिन,  
सम्माननीय व्लादीमीर इलीच.....”

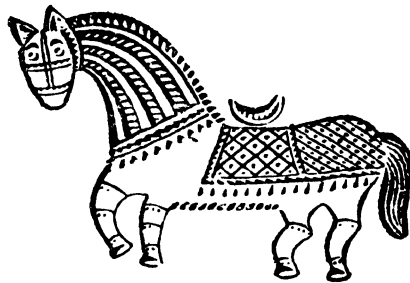
एक दूसरे विलाप-गीत में लेनिन से सम्बोधित करके कहा गया है—

“पोस्मोत्री-त्को क्रुगोम ओकोलो—  
ऊ नास फ्स्यो पेरेमेनीलोस्या  
काक पोह्या त्सेतूत कोलखोजनीये,  
काक स्तादा ईदूत सोवखोजनीये,  
नाशी देतूश्की बेदन्यात्स्कीये  
व बीसशीख शकोलाख ओबूचायूत्सा,  
नाशी भूेनश्चीनी क्रोस्त्यान्स्कीये  
व सोवेत वेरखोवनी बीबीरायूत्सा;  
नाशी पारनी बेरेवेग्स्कीय  
सोकोलामी ब्यूत्सा व वोजदूख्ये,

नाशी देवूँकी क़ेस्त्यान्स्कीय  
पो पोल्यामी दा वोछात आक़्तोरी.....”

अर्थात्—“देखो तो चारों ओर—

हमारे यहाँ सब कुछ बदल गया है ।  
कोलखोजी<sup>१</sup> खेत कैसे फल-फूल रहे हैं,  
किस प्रकार सोवखोजी<sup>२</sup> पशु जा रहे हैं,  
हमारे गरीबों के बच्चे  
हाई स्कूलों में शिक्षा पा रहे हैं,  
हमारे किसानों की महिलाएँ  
अब सर्वोच्च सोवियत में चुनी जाती हैं,  
हमारे गाँवों के जवान  
हवा में बाज की भाँति उड़ान करते हैं,  
हमारे किसानों की बेटियाँ  
खेतों में ट्रैक्टर चलाती हैं .....



- 
१. सामूहिक फारम ।
  २. राज्यीय फारम ।



६

## बिलीना

वीर रस का रूसी लोक-गीत

वीरता के गीतों को स्वयं रूसी जनता तो 'स्तारीना' तथा 'स्तारीन्का' कहती है, किन्तु गत शताब्दी के अनुसन्धानकर्त्ता उन्हें 'बिलीना' के नाम से पुकारते हैं। आज से लगभग हजार वर्ष पूर्व इनकी रचना आरम्भ हुई थी।

इनका जन्म रूसी शूरवीरों की वीरता पर लिखी गई वीरगाथाओं के रूप में हुआ।

पेचेनेग, पोलोवत्स, तातारियों, जर्मनों आदि पड़ोसियों से निरन्तर लड़ी गई लड़ाइयों ने शूरवीरों को जन्म दिया। इन लड़ाइयों के वर्णन और कथाएँ एक-दूसरे की पूर्ति करती रहीं। रण के वास्तविक योद्धाओं ने कल्पित वेष धारण किया, जन-कल्पना ने उन्हें कविता में बद्ध किया और अन्त में वे अर्ध-दानवों में परिणत हो गये।

लोगों के विश्वासानुसार ये दानव उन सब गुणों से सम्पन्न थे जिनका प्राचीन काल से ही रूस में बहुत मूल्यांकन किया जाता था। ये गुण थे मातृभूमि से अथाह प्रेम, वीरता, ईमानदारी, भलाई, निःस्वार्थता आदि।

रूसी बिलीनों के बोगातीर (शूरवीर) रूसी जनता के आदर्श रूसी किसान और योद्धागण हैं ।

यह कहना अत्यन्त कठिन है कि बिलीनों के नायक वास्तविक ऐतिहासिक चरित्रों से कितना मेल खाते हैं । इसमें कोई सन्देह नहीं कि अधिकांश 'बोगातीर' रूसी इतिहास में असली पात्र थे और बिलीनों में इन्हीं पात्रों के नाम, चरित्र तथा जीवनी का प्रयोग किया गया था । इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि बिलीनों में वर्णित अधिकांश घटनाएँ रूस के इतिहास की याद दिलाती हैं । यद्यपि बिलीनों के नायकों और ऐतिहासिक तथ्यों को अतिरंजित कविता का रूप देकर तथा कल्पना का खोल चढ़ाकर अपने ही ढंग से वर्णन करते हैं, तथापि उनके मूल में इतनी सच्चाई और वास्तविकता तो है ही कि वे रूसी इतिहास में सदैव सर्वप्रिय रहे हैं ।

### बिलीनों का जन्म

रूसी अनुसन्धानकर्त्ताओं ने इस बात की बड़ी खोज की है कि बिलीनों का जन्म कहाँ हुआ । निःसन्देह इसका कुछ अंश सर्वप्रथम रूस के दक्षिणी प्रदेशों में अस्तित्व में आया । यह अनुमान इसलिए किया जाता है कि बिलीनों में वर्णित लड़ाइयाँ और आक्रमण प्रायः दक्षिणी मैदानों में हुए—वहाँ रूसियों ने पेचेनेगो, पोलोवत्सों, और तातारियों से लड़ाइयाँ लड़ीं । बाद में उत्तर की नई धरती पर अधिकार जमानेवाले औपनिवेशिक इन बिलीनों को अपने साथ वहाँ ले गये । परन्तु उत्तर के मूल निवासियों की भी अपनी वीरगाथाएँ थीं । दक्षिण से औपनिवेशिकों द्वारा लाई गई सामग्री स्थानीय सामग्री के सम्पर्क में आई और उससे घुल-मिल गई । इसके फलस्वरूप रूसी धरती के बोगातीरों के विषय में सैकड़ों काव्य-कृतियों का निर्माण हुआ ।

तेरहवीं शताब्दी से लेकर चौदहवीं शताब्दी तक तातारियों की दासता में रहने के पश्चात् दक्षिणी रूस स्वतन्त्र होकर फलने-फूलने लगा और विकास की ओर अग्रसर हुआ । शत्रुओं को मार भगाकर रूसी लोग दक्षिण के उजड़े शहरों और गाँवों को छोड़कर रूस के मध्यवर्ती भागों और तत्पश्चात् सुदूर उत्तर में चले गये । रहने योग्य स्थानों पर बसते-बसते, नए-नए शहर और गाँव आबाद करते और बंजर भूमि पर अपना अधिकार जमाते वे धीरे-धीरे आगे चलते गये । सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में उत्तरी भाग अपने बड़े भारी पानी के स्रोत—उत्तरी द्वीना नदी के कारण समृद्धिशाली और शक्तिशाली बन चुका था । उत्तरी द्वीना नदी पर विभिन्न पेशों और कारोबार के लोगों का यातायात था । पीतरबर्ग अभी बसा नहीं

था। उत्तरी भाग का केन्द्र आरकेञ्जल की बन्दरगाह था, जिसके द्वारा रूस का विदेश से सम्पर्क था। बन्दरगाह के जीवन और व्यापार तथा विदेशियों और जहाजों के साथ सम्पर्क ने प्राचीन रूस के विभिन्न भागों से लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया। लोग आरकेञ्जल आये और अपने साथ स्थानीय गीत और कथाएँ भी लेते आये। उत्तरी रूस का लोक-साहित्य समृद्धतर होता गया। उत्तर के घने जंगलों में और नदियों के हरे-भरे किनारों पर स्वच्छन्दता और दृढ़ता से बढ़ने वाले लोक-साहित्य के रास्ते में कोई रुकावट नहीं थी।

पीतरबर्ग बसने पर विदेशियों से सम्पर्क का केन्द्र बाल्टिक सागर में चला गया। आरकेञ्जल अपनी पूर्व सजीवता को छोड़कर एक ओर हट गया। परन्तु वह अपनी भावना की निधियों को शताब्दियों से सुरक्षित रखता आया है।

उत्तरी रूस में कभी भी गुलाम रखने का अधिकार नहीं रहा है। विशाल, उर्वर तथा समृद्ध होने के कारण उत्तरी भाग ने जंगली प्रकृति से संघर्ष करके उस पर काबू पाने वाले लोगों को जन्म दिया। इन सबने उत्तर के किसानों की भावनाओं पर अपनी छाप लगा दी।

### बिलीने उत्तरी रूस में सुरक्षित

उत्तरी रूस में मौखिक बिलीने विशेषकर सुरक्षित तथा विकसित हुए। उत्तर के जंगलों में बड़े-बड़े शहर बहुत कम थे। सड़कें भी नहीं के बराबर थीं। इसलिए पिछले दो-ढ़ाई सौ वर्षों के बीच आरकेञ्जल पर शहरी संस्कृति का प्रभाव बहुत कम पड़ा। उत्तरी गाँवों में लोगों का जीवन अधिकतर अपने पूर्वजों के पदचिह्नों पर ही चलता रहा है। उत्तरी किसानों की जीविका के साधन जाल बुनना, हड्डियों और लकड़ी से गृहस्थोपयोगी विभिन्न वस्तुएँ तैयार करना, बुनाई तथा सिलाई आदि थे। वहाँ शरद ऋतु की लम्बी-लम्बी रातें काटने के लिए चाँदनी में जलसों की व्यवस्था की जाती थी। इनके कारण उनको गीत और बिलीने गाने और सुनने के बहुत अवसर मिलते थे। उत्तर-निवासी भोंपड़ी में अपना काम करते-करते, शिकार खेलते, जंगल की गुफाओं में या अपना दूसरा कारोबार करते हुए बिलीने गाते और कथाएँ सुनते-सुनाते। एक स्थान पर टिककर बैठना उनके विचारों को एकाग्र और एकत्र करने में बड़ी सहायता करता था। उत्तरी गाँवों का वातावरण रूसी वीरगाथाओं को सुरक्षित करके तथा उनकी सुगन्धि तथा ताज़गी को आज तक बनाए रखने में बड़ा सहायक सिद्ध हुआ।

ऐसी परिस्थितियों में रूस के उत्तरी भागों में ही प्रतिभाशाली गानेवाले और कहानियाँ कहनेवाले हो सकते थे।

## बिलीनों के भेद

कथा-वस्तु के आधार पर रूसी बिलीने दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं। पहले प्रकार में वीरता के बिलीने आते हैं। इनमें 'बोगातीरों' (शूरवीरों) की लड़ाई में किये गये साहसी कारनामों का वर्णन होता है। दूसरे प्रकार में जीवन सम्बन्धी अथवा औपन्यासिक बिलीने आते हैं। इनमें पूर्वजों के शान्त जीवन का वर्णन होता है। प्रथम प्रकार के बिलीने प्राचीनतम हैं और उन्हें शोधनकर्त्ता 'कीव का बिलीना' का नाम देते हैं, क्योंकि इनकी रचना ग्यारहवीं से लेकर तेरहवीं शताब्दी के आस-पास हुई। दूसरी प्रकार के बिलीनों को 'नोवगोरोद के बिलीने' कहा जाता है। इनकी रचना स्पष्ट रूप से उनके पश्चात् चौदहवीं-पन्द्रहवीं शताब्दियों में हुई।

चाहे हम बिलीनों का कोई भी संग्रह खोलकर देखें, हमें सब में एक ही नाम मिलते हैं। वे हैं वोल्गा, मिक्ला सेल्यानिनोविच (जमींदार बोगातीर), ईल्या म्यूर-म्येत्स, दीब्रीनया निकीतिच, आल्योशा पोपोविच, झूक स्तेपानोविच, सादको (अमीर अतिथि अर्थात् अमीर सौदागर), वासिली बुस्लायेव, सफल सरदार और नोवगोरोद के स्वच्छन्द विचारकों का प्रतिनिधि, आदि-आदि। इनके अलावा बिलीनों के नायक और भी हैं।

## बिलीनों के नायक

रूसी बिलीनों का केन्द्रित पात्र ईल्या म्यूरम्येत्स है। बिलीनों में वर्णित कथा के अनुसार यह शक्तिशाली बोगातीर टांगों की बीमारी के कारण दीवार की अंगूठी के पास तैंतीस वर्ष तक बैठा रहा और फिर अलौकिक शक्ति द्वारा स्वस्थ होकर उठ खड़ा हुआ और अभूतपूर्व कारनामे करने के लिए निकल पड़ा।

गम्भीर और निर्भीक ईल्या चेरनीगोव के समीप तातारियों को हराता है; 'इदोल्डिचए पोमानोय' (मूर्तिपूजक विधर्मियों) को कीव से भगा देता है, रूसी धरती की शान्ति-प्रिय जनता को रास्ता चलते लूटने-वाले डाकुओं से निजात दिलवाता है और अन्य वीरता के कारनामे करता है। शत्रुओं के लिए ईल्या बहुत कठोर है, परन्तु गरीबों पर बहुत दया करनेवाला है। कन्याज़ (राजा) और सामन्तशाही अधिकारियों से वह बहुत नफ़रत करता है। अपनी अतुलनीय शक्ति और दिलेरी के कारण वह रूसी धरती के अधिपति कन्याज़ व्लादिमीर से भी बात-चीत करने से नहीं हिच-किचाता। वह जानता है कि कड़े समय में रूस और व्लादिमीर का काम उसके बिना

नहीं चल सकता; और वास्तव में जब शत्रु रूस पर आक्रमण करता है तब कन्याज बड़ा अफसोस करता है कि उसने रूष्ट होकर ईल्या को देश-निकाला देकर बड़ा अन्याय किया है। इतने में ईल्या आ जाता है और शत्रु पर विजय प्राप्त करता है। यह सब-कुछ वह कन्याज या उसकी पत्नी के लिए नहीं करता और न ही 'टेढ़ी पतलून पहननेवाले' बोयारो (रईसों) के लिए करता है। वह ब्लादिमीर का अपराध क्षमा कर देता है और अपने देश के लिए मैदान में उतर आता है। ईल्या के सब अलौकिक कारनामे रूस की भलाई और ख्याति के लिए होते हैं। बोगातीर ईल्या में देश-प्रेम कूट-कूटकर भरा है। बिलीनों में वर्णित उसके चित्र में रूसी लोगों के सब सर्वश्रेष्ठ गुण भर दिये गये हैं।

ईल्या म्युरोम्येत्स की भाँति उसका 'धर्म-भाई' बोगातीर दोब्रीन्या निकितिच भी रूस के लिए बड़ी दिलेरी और सफलता से लड़ाइयाँ लड़ता है। दोब्रीन्या भयंकर नागों पर विजय प्राप्त करता है, रूसी कैदियों को नाग की खडु से आजाद कराता है और रूसी घरती को भारी टैंकों के बोझ से दबाने वाले ज़ार बातुर को हराता है।

दूसरे बोगातीर हैं सुखमान और आत्योशा पोपोविच। उन्होंने भी शत्रुओं से सफलतापूर्वक लड़ाइयाँ लड़ीं, बिलीनों में वर्णित रूस के सबसे बड़े शत्रु तातारी हैं—लम्बे और सुगठित तातारी। सामन्तशाही राज्य का स्मरण करके, ग्यारहवीं शताब्दी से लेकर सोलहवीं शताब्दी तक दक्षिण से आने वाले सब शत्रुओं को इसी नाम से पुकारा जाता है।

### बिलीनों में वर्णित विषय

बिलीनों में अपने देश की स्वतन्त्रता और ख्याति के लिए लड़नेवालों का वर्णन बड़े वीरतापूर्ण, गरिमापूर्ण और आकर्षक ढंग से किया जाता है। बिलीनों में उन कायर बोयारों और कन्याजों का हँसी-मजाक उड़ाया जाता है जो उस समय टाँगें तानकर आराम से सोते थे जब कि जनता शत्रुओं से टक्कर ले रही थी। सुस्ती और अकर्मण्यता की बिलीनों में खूब घञ्जी उड़ाई जाती है। काम और काम के लिए प्रेम—बस यह थी मुख्य बात जिसके कारण उस समय मनुष्य का सम्मान किया जाता था, भले ही रणभूमि में वह ईल्या का नाम हो या शान्ति के समय ज़मींदार मिकूला सेल्यानिनोविच का खेत में काम। मनुष्य को सदा काम में जुटा रहना चाहिए, सत्य के नाम पर लड़ना चाहिए; ज़ालिमों का नाम मिटा देना चाहिए। यहाँ तक कि प्रकृति पर भी काबू पाना चाहिए। बिलीना रूसी जनता को यह सब-कुछ सिखाता है।

रीबनीकोव द्वारा उत्तर में बिलीनों की खोज करने के पश्चात् सौ वर्ष के दौरान में रूसी लोग-साहित्य के शोधकर्ताओं ने बिलीनों का संग्रह-कार्य किया है।

बहुत से वैज्ञानिकों ने इस सामग्री पर अन्वेषण-कार्य किया है। संग्रहकर्ताओं और अन्वेषकों ने विभिन्न समय में यह विचार प्रकट किया था कि उन द्वारा संग्रहीत सामग्री अन्तिम है और बिलीने गानेवालों की कला जनसाधारण के जीवन से लुप्त होती जा रही है। इसका कारण मुख्य यह है कि बिलीने साधारणतः बूढ़े कलाकारों द्वारा लिखे गये थे। इसलिए उनका खयाल था कि अमुक बिलीना गानेवाला कलाकार मर गया है और उसके साथ-साथ उसकी कला भी लुप्त हो गई है और नई पीढ़ियाँ न तो बिलीने जानती हैं और न उनकी बिलीनों से कोई दिलचस्पी है।

परन्तु ये सब बातें भूठ निकलीं। समय बीतता गया, बूढ़े मरते गये और जवान पीढ़ियाँ आती गईं और फिर वे भी बूढ़ी होती गईं। परन्तु दादा से बचपन से ही सीखे शब्द और तानें नई पीढ़ियों में फिर से जीवित हो उठीं। बिलीने और गीत जीवित रहे। वे लुप्त नहीं हुए क्योंकि रूसी जनता की रचनात्मक शक्ति जीवित थी।

आजकल लेनिन, स्तालिन और उनके साथियों के १९४१-४५ के भयंकर युद्ध में नाज़ियों पर विजय प्राप्त करनेवाली सोवियत सेना के योद्धाओं के, तथा विज्ञान और प्रकृति पर काबू पानेवाले वैज्ञानिकों के चरित्र अब बिलीनों के ताने में बुने जा चुके हैं। सोवियत बिलीने अभी कुमार अवस्था में हैं। उनको अस्तित्व में आये अभी केवल तीस वर्ष हुए हैं। वीर कृतियों के लिए यह समय बहुत थोड़ा है। नये बिलीने अभी तक अपने रचयिता से जुदा नहीं हो पाए हैं।

सोवियत वीरगाथा काल की सर्वप्रथम कृति लेनिन की कथा है। इसकी रचना पोमोर की कहानी कहनेवाली मारिया सेमेनोवना क्रूयकोवाया ने की है।

यह कथा उस समय से आरम्भ होती है जब लेनिन का बड़ा भाई अलेक्सान्द्र उल्यानोव जार अलेक्सान्द्र तृतीय के विरुद्ध संघर्ष करता हुआ मारा जाता है। परन्तु उसकी मृत्यु के पश्चात् उसका छोटा शूरवीर भाई उसका स्थान ले लेता है और उसके क्रान्ति-युद्ध को जारी रखता है। व्लादिमीर उल्यानोव को भी कैद करके प्रवास की सज़ा दी जाती है। वह प्रवास से किसी विदेशी शहर को भाग जाता है और वहाँ जन-शत्रु जार और उसके निकट-सम्बन्धियों से युद्ध करने की तैयारी करता है। अदूरदर्शी जार शेखी मारता है कि उसने देशद्रोही क्रान्तिकारी को रूसी धरती से बाहर मार भगाया है।

“नेकोमू तेपेर् देलात् पोदकोपी पोद त्रोन पोद त्सारस्की—

काक ओदनीख-तो या वो त्यूरमी वो ग्लूबोकीये जासाभीवाल,

काक द्रुगीख-तो या व ससीलोचकी वो दाल्नीये जागानीवाल,  
 काक त्रस्थीख-तो या ओत्सीलाल ना बोयनू ना थेरमान्क्यू,  
 आ व रोसीयूइक्ये तोल्को स्तारी-माली पोओस्तावालीस्या ।  
 उम्फ काक तेपेर् ऊ मीन्या भोजन् प्रीयात्नाया,  
 ओच्येन् प्रीयात्नाया, ब्येजोपास्नाया ।”

अर्थात्—“अब जार के तहत की जड़े खोखली करनेवाला कोई नहीं—  
 कैसे कुछ लोगों को तो मैंने कड़ी कैद में डाल दिया है ।  
 कैसे दूसरों को मैंने दूर देश-निकाला दे दिया है  
 कैसे तीसरों को जर्मन के विरुद्ध लड़ाई में भेज दिया है  
 और रूस में अब केवल बूढ़े और बच्चे रह गये हैं ।  
 मेरा जीवन अब कितना सुखी है ।  
 बहुत सुखी और सुरक्षित ।”

परन्तु जार का अनुमान गलत था । विदेशी शहर में अथवा प्रदेश में लेनिन और उसके साथियों ने जारशाही शासन को नष्ट करने की तैयारी कर ली । लेनिन के पास एक और बोगातीर स्तालिन आता है । लेनिन उसे आदेश देता है कि वापस रूस जाकर जनता का क्रान्ति-कार्य में नेतृत्व करे ।

जैसा दोनों बोगातीरों ने निर्णय किया था वैसा ही हुआ । पहले-पहल फरवरी का विप्लव हुआ और उसके बाद अक्टूबर की क्रान्ति । लोग नई सरकार का चुनाव करने के लिए एकत्रित हुए ।

“काक स्पेजभ्गालीस्या नारोदी दा सकोफ्यालीस्या

ओत स्तारोवो दो सेवनोवो

ओत सेवनोवो दो म्लादशेवो,

काक सादीलीस् ओनी व जसेदानीत्स्ये,

काक सोवेती मुदरीये बेरभ्गाली ओनी :

—कोम् बीत्य् दा व उप्रावीतेस्याख ?

व ओदन् दूम् फ्स्ये दूमाली,

व ओदन् रेष् फ्स्ये गोवोरीली ।

ना येवीनोवो स्वोये इज्जन्नानीत्स्ये पोलीभ्गाली—

ना म्लादीमोरा इलीचा, वोभ्ग्या लेनिना ।

फ्स्यु रोसीयूइकू येम् पोवेरीली-दोवेरीली,

बोभूद्य लेनिनू दा सो पोमोश्चनिष्कामी,  
सो फ्स्येय पारतीयेय बोलशेवीचेस्कोय ।  
प्रोम्याल ओन क्ल्यूची ज़ोलोतीये दा ओत फ्स्येय ज़ेम्ली,  
नाजनाचील सेव्ये वो पोमोश्चनीचक द्रुगा स्तालीना .....

अर्थात्—“किस प्रकार लोग आये और एकत्रित हुए  
बूढ़ों से लेकर भँकली उम्र वालों तक  
अधेड़ों से लेकर जवानों तक,  
कैसे उन्होंने बैठक की  
और कैसे अच्छे-अच्छे प्रस्तावों का समर्थन किया :  
—सरकार में कौन कौन हो ?  
सब के समान विचार थे,  
सब की भाषा समान थी,  
सब ने एकमत से चुना—  
ब्लादिमीर ईलीच, वीर लेनिन को ।  
समस्त रूस ने उस पर विश्वास प्रकट किया,  
वीर लेनिन और उसके साथियों पर,  
सारी बोलशेविक पार्टी पर ।  
समस्त धरती की सुनहरी कुंजी उसने सँभाली,  
मित्र स्तालिन को अपना सहकारी नियत किया...”

इन सब विजयों के बाद बोगातीर लेनिन की शारीरिक शक्ति क्षीण हो चुकी थी । उन्हें लगा कि मृत्यु समीप थी—

“प्रीज़ीबाल इलीच क सेव्ये दा द्रुगा स्तालीना,  
गोवोरील येमू गोलोसोम ओत भूलान्या पोलनोवो:  
—नेदोल्गी बेक तो मोय, ओन कोनचायतसा,  
स्मेरत्य्-तो स्कोरो मोया दा प्रीब्लीभायतसा ।  
बेरी, बेरी दा ती प्रीमी क्ल्यूची,  
ज़ोलोती क्ल्यूची ओत फ्स्येय ज़ेमेल्यूश्की,  
उभू कौमू, कौमू दा प्रीनीमात्य् देला,  
वज़्यात्य्-तो ब रुकी ते ज़ोलोती क्ल्यूची,  
काक ने तेव्ये, दा द्रुगू मीलोमू ।

द्रूग मीलोम्, दा फ्स्ये वेछ् देरनोम् ।  
 उग्रबलयाय देला, तेब्ये स्वास्तलीवो भोत्प ।  
 तेब्ये स्वास्तलीवो भोत्प, दा बोल्गू वेकू बोत्प....”

अर्थात्—“इलीच ने मित्र स्तालिन को अपने पास बुलाया  
 और सम्पूर्ण इच्छा से बोले—  
 मेरा अदीर्घ युग समाप्त हो रहा है,  
 मेरी मृत्यु समीप आ रही है ।  
 लो, इन कुंजियों को संभालो,  
 सुनहरी कुंजियाँ सारी धरती की,  
 और किसको कार्य-भार सौंपूँ,  
 इन सुनहरी कुंजियों को हाथ में लेने को,  
 क्यों न तुम्हें, प्रिय मित्र को,  
 हाँ प्रिय मित्र को, सब के विश्वासपात्र को,  
 कार्य संभालो, तुम्हारा जीवन सौभाग्यशाली हो ।  
 तुम्हारा जीवन सौभाग्यशाली हो, शताब्दियों लम्बा ।”

और बोगातीर स्तालिन समस्त रूस की कुंजियाँ संभालता है और जनता को स्वतन्त्र और सुखी जीवन की ओर ले जाने के लिए लेनिन का आदेश पूरा करने की शपथ लेता है । लेनिन को अमूल्य पत्थरों से बनी अलौकिक समाधि में आराम करने के लिए लिटा दिया गया—

‘ऐती कामेइकी फ्स्ये नारोदी नेस्ली,  
 काभ्दो नारोद प्रीन्योस पो येदीनू कामेइकू ।  
 ई सोस्त्रोईली नारोदी प्रोबनी दोमोच्योक ।  
 व न्योम लेभ्नीत इलीच, पोचीवायत ग्रोन ।’

अर्थात्—“इन पत्थरों को समस्त जनता लाई थी,  
 एक-एक करके जनता इन पत्थरों को लाई थी  
 और जनता ने उसके लिए समाधि बनाई थी ।  
 उसमें लेनिन लेटा है । वह आराम कर रहा है ।”

इस प्रकार इस बिलीने का अन्त होता है ।

जो कुछ वास्तव जीवन में हुआ, सचमुच वेसा ही बिलीने में अंकित है ।  
 लेनिन और स्तालिन के नाम अविच्छिन्न रूप से रूसी लोक-साहित्य में सदा के

लिए अमर हो गये। वह लोक-रचना में एक दूसरे से पृथक् नहीं किये जा सकते क्योंकि स्तालिन लेनिन का कार्य जारी रखने वाला और महान् बोगातीर शूरवीर लेनिन के समस्त विचारों को कार्य-रूप में परिणित करने वाला माना जाता था। वह लेनिन द्वारा सौंपे हुए कार्य को पूरा करने वाला समझा जाता था। इसके लिए एक महान् शक्ति की आवश्यकता थी।

परन्तु स्तालिन की वीरता, बुद्धि और भलमनसाहत का वर्णन बिलीना बहुत समय से करता आ रहा है। उसके इन सब गुणों को जनता ने उसी समय देख लिया था जब उसने गृह-युद्ध के दौरान में त्सारीत्सेना को सफ़ेद सेना के हाथों से बचाया था।

“काक इज तोय मोस्कोवी दा बेलोकामेन्गोय,  
ई इज-जा त्येख क्रेमलेवस्कीख स्तेन वीसोकीख  
ओत प्रावल्यायतसा दोरोवनी दोबरी मोलोद्येत्स-  
मोलोदोय इयोसीफ दा विसारयोनोविच।  
ओतप्रावल्यायतसा ओन दा वो चीस्तो पोल्ये……”

अर्थात्—“कैसे सफ़ेद पत्थरों से बने उस मास्को से  
उन क्रेमलिन की ऊँची दीवारों के पीछे से  
स्थूलकाय भला युवक निकल पड़ा।  
युवक जोज़ेफ हाँ विसारयोनोविच।  
निकल पड़ा हाँ वह खुले मैदान में……”

इस प्रकार “स्तालिन त्सारीत्सेना के पास” नामक बिलीने का प्रारम्भ होता है। यह बिलीना धीरे-धीरे वीरगाथा के ढंग पर तथा बिलीने की अपनी विशेष भाषा में वर्णन करता है कि स्तालिन ने वोल्गा नदी पर सफ़ेदों को कैसे हराया। इस बिलीने का अन्त भी ठीक उसी प्रकार है जैसे कि अपनी विशेषता के अनुसार रूसी वीर-गीत का अन्त होता है अर्थात् एक बड़े भारी भोज के साथ जो वोल्गा की लड़ाई में विजय प्राप्त करके लौटने पर स्तालिन और लाल सेना के सम्मान में समस्त मास्को-निवासियों द्वारा दिया गया था।

एक बिलीना न केवल अपनी शक्ति प्रत्युत् अपने विचारों की परिपक्वता के कारण विजय प्राप्त करने वाले रणक्षेत्र के नेता, बुद्धिमान जर्नेल स्तालिन की खूब प्रशंसा करता है। दूसरे बिलीने सरकार का अन्दरूनी संगठन करने के उसके महान् कार्य का वर्णन करते हैं।

“स्तालिन—संविधान” ने भी बहुत से जन-गायकों और कहानी कहने वालों को अनुप्रेरित किया है। सोवियत लोक-साहित्य में पार्टी के अठारहवें अधिवेशन और सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के चुनाव के बारे में भी बिलीने मिलते हैं।

एक बिलीना कहता है—

“...चतो बावनो ऊ नास दा जाबोयवानो—

तो अपिसानो ऊ नास व कोन्स्तीतूत्सीई,

ई पिसाल येयो वेष् स्तालिन नाश, ल्यूबीमी वोभूद्य

ई कोग्दा मी बिबीराली ग्लास्त्य् वेरखोवनूयू—

नाशी पेरवी गोलोसा बीली जा स्तालिना...”

अर्थात्—“जिसके लिए हम चिरकाल से संघर्ष कर रहे थे—

वह सब कुछ हमारे संघिवान में लिखा गया है,

और उसको स्तालिन ने लिखा है, हमारे प्रिय नेता ने,

और जब हम ने सर्वोच्च सोवियत चुनी—

हमारी पहली वोट स्तालिन के लिए थी ...”

दूसरे बिलीने में यह विचार विकसित होता है और उसमें व्यारे से वर्णन आता है—

“पोद येवो रुकोवोदीतेलस्तवोम्

मी पो तोय ली पुद्य-दोरोभूच्चकये,

चतो नाम लेनिनीम उकाज़ाना,

चतो नाम स्तालिनीम प्रीकाज़ाना,

मी इद्योम-ने श्रौतक्लोनीमसा ।

दोरीगोवो तोबारीश्चा स्तालिना

मी जा फ्स्यो ऐतो ल्यूबीम-भ्हालुयेम,

मी जा फ्स्यो ऐतो येवो बीबीराली,

मी जा फ्स्यो ऐतो येवो बीद्वीनूली

स चेस्त्यू-रादोस्त्यू दा पेरबीम नापेरवो

व नाश्ये वेरनोय प्रावीतेलस्तवो ।”

अर्थात्—“उसके नेतृत्व में

हम उसी रास्ते पर

जो हमें लेनिन ने दिखाया,

जिस पर चलने का स्तालिन ने आदेश दिया,  
हम जा रहे हैं, डिगेंगे नहीं,  
हम बढ़ रहे हैं, रुकेंगे नहीं ।  
प्रिय साथी स्तालिन को  
इस सब कुछ के लिए प्यार करते और चाहते हैं,  
इस सब कुछ के लिए हम ने उसे चुना  
इस सब कुछ के लिए उसे आगे किया है  
सम्मान—प्रसन्नता से, सब से आगे  
अपनी विश्वस्त सरकार में ।”

सोवियत वीर-गाथाओं ने लेनिन और स्तालिन का नाम अमर कर दिया है और उसके सारे साथियों की देश-सेवाओं की सराहना की है । प्राचीन रूसी बोगातीरों के समस्त गुण उनमें विद्यमान हैं । बिलीनों में न केवल उनकी बहादुरी और प्रवीणता का वर्णन है प्रत्युत उनकी आत्मिक भलमनसाहत, उनकी गरीबों और दलितों के प्रति संवेदना और ज़ालिमों और दुष्टों के प्रति बेरहमी का भी वर्णन किया गया है ।

प्राचीन रूसी बिलीना अलौकिकता से परिपूर्ण था— एक बोगातीर ने अलौकिक नाग पर विजय प्राप्त की, दूसरा सागर की तह में सागर के सम्राट् के पास पहुँच जाता है, नदियाँ मानव-वाणी में बोगातीरों से बातें करती हैं, लोगों को जादुई पशुओं में बदल दिया जाता है । सोवियत बिलीना भी अभूतपूर्व अलौकिकता का वर्णन करता है । जादुई पक्षी बर्फीले प्रदेश में उड़ आता है और जहाज़ टूटने पर बर्फ के टुकड़ों पर बचे-खुचे लोगों को अपने पंखों पर बिठाकर लाता है, चार निर्भीक शूरवीर बहते हुए बर्फ के टुकड़े पुर बैठ जाते हैं और प्रकृति के रहस्यों को जानने के लिए चल पड़ते हैं, बर्फीले टण्ड्रा के मैदान में एक अभूतपूर्व शहर बन जाता है ……

प्राचीन और नवीन अलौकिकता में अन्तर केवल इतना है कि अलौकिकता केवल लोगों की मनगढ़न्त थी और आधुनिक अलौकिकता को सोवियत बिलीने ने जीवन की वास्तविकता से लिया है ।

पेचोरा की कहानी कहने वाली मारेम्ब्याना गोलुब्कोवाया के बिलीनों में वर्णन है कि किस प्रकार बोल्शेविक बोगातीर अपने देश का पुनर्निर्माण कर रहे हैं । वहाँ, जहाँ पहले रेगिस्तान और टण्ड्रा के मैदान थे अब अभूतपूर्व संस्कृति फल-फूल रही है ।

“व्तो वो त्येख ली मेस्ताख बेलोश्चलेस्कीख  
पोसेरेवकी तुन्दरी बोलशोय ज़्म्ली

ने पील व पोल्ये पोदनीमायत्सा—

नारयानमार—जूदनीय गोरोव राज़रोस्तायत्सा”

अर्थात्—“बलोश्चेल्स्की के स्थान पर अब क्या है,  
टण्ड्रा के मैदान की विशाल भूमि में,  
न खेतों में गर्द उठती है—  
नारयानमार-अद्भुत शहर बन गया है……”

और

“उझ् काक ते ली मेस्ता बेलोश्चेल्स्कीये  
ओनी बीली रान्इये ना ओतशोब्ये ।  
ओतो फस्येय ज़्स्ली ना स्तोरोनोच्चये,  
पोज़ाबीतीये वा पोज़ाब्रोशेनी ।  
आ तेपेर् ते मेस्ता ओप्रोयूचेनी,  
ना पेचोर्ये ओनी पेरबी नापेरबी ।  
इज़ मोस्कवी इछोत व नारयानमार गोरोव  
पुत्य् बोरोज़्च्का पर्यामोयेज़्भाया……”

अर्थात्—“और कैसे वे बेलोश्चेल्स्की के स्थान

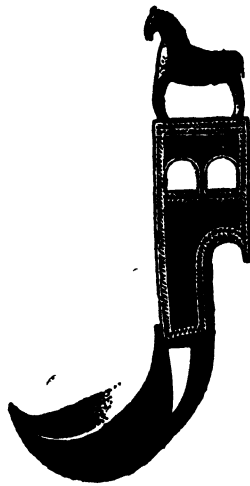
वे पहले ऊजड़ पड़े थे,  
समस्त भूमि से पृथक्,  
विस्मृत और त्यक्त ।  
अब वे स्थान बसे हुए हैं,  
पेचीरा में वे सर्वप्रथम हैं ।  
मास्को से नारयानमार शहर को जाती है  
सीधी सड़क……”

मानो धरती के नीचे से उठ निकलने वाले शहर का वर्णन करते हुए बिलीना  
व्याख्या करता है—

“ओन काक बेरेवत्सो व तुन्त्रये बीरोश्च्येन,  
ओन काक व छेन् ओबीन व तुन्त्रये बीस्त्रोयेन  
रोश्च्येन ओन फ्स्ये ज़ाबोतामी स्तालिना,  
स्त्रोयेन सीलूश्कोय बोलशेबीस्कोयू ।”

अर्थात्—“वह टण्ड्रा में पेड़ की भाँति उग आया,  
वह टण्ड्रा में एक दिन में बन गया,  
वह स्तालिन की देखभाल के कारण बढ़ा है,  
बोल्शेविक की शक्ति से बना है।”

नारयानभार के विषय में जो वर्णन बिलीनों में आता है, वह सोवियत  
बोगातीरों द्वारा खाली स्थानों पर निर्मित सैकड़ों शहरों और हजारों सांस्कृतिक  
केन्द्रों पर पूरा घटित होता है।





७

## ऐतिहासिक गीत

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, बिलीनों में वर्णित रूस के प्राचीन इतिहास की घटनाएँ और पात्र निश्चित और वास्तविक नहीं हैं। बिलीनों में सामान्यीकरण, जन-कल्पना और काव्यमय उड़ान बहुत है। परन्तु बिलीने के साथ-साथ इससे मिलता-जुलता रूसी लोक-साहित्य का एक और प्रकार है जिसमें ऐतिहासिक पात्रों और प्राचीन काल के सच्चे कारनामों का वर्णन है। ये ऐतिहासिक गीत हैं।

बिलीनों की तरह उनमें भी साहसी कारनामों, शत्रुओं से लड़ाइयों और और जन-शूरवीरों का वर्णन होता है। परन्तु अपने उद्गम, बाहरी बनावट और अदायगी के अनुसार ऐतिहासिक गीतों का कुछ और ही लक्षण हो जाता है। ये बिलीनों की अपेक्षा नवीन हैं। साधारणतः ये बिलीनों से छोटे हैं और उनकी पद्य-रचना और ताल बिलीनों की अपेक्षा भाव-गीतों के अधिक समीप हैं। ऐतिहासिक गीतों के नायक साधारणतः वे लोग हैं जो रूसी इतिहास में विख्यात हैं। ऐसी परिस्थितियों में भी जब ऐतिहासिक गीतों में नायक के नाम का वर्णन नहीं होता, तथापि उनमें निश्चित ऐतिहासिक घटनाओं और तथ्यों का वर्णन होता है जिनसे ठीक तौर पर निर्धारित किया जा सकता है कि किसी गीत की कथावस्तु का सम्बन्ध किस युग से है।

ऐतिहासिक गीत की रचना और विकास सोलहवीं शताब्दी में आरम्भ हुआ। उस समय इलया म्युरोम्बेत्स, दोबरीन्या, वोल्गा और सुदूर अतीत के अन्य बोगातीरों के विषय में नये बिलीनों की रचना बन्द हो चुकी थी।

.....कैसे अपने घोंसले से उड़े बाज और गरजते हुए बादलों की भाँति मास्को के ज़ार की सेना ने काज़ान राज्य पर चढ़ाई की। इवान वासिल्येविच

ग्रोजनी (इवान भयंकर) अपनी सेना लेकर काज़ान के बिल्कुल समीप पहुँच गया था। सुरंगें लगाकर तातारियों की किलेबन्दी को तोड़ दिया गया। काज़ान पर कब्ज़ा कर लिया गया और तातारियों के गर्वीले ज़ार सरदार सिम्योन को मास्को के ज़ार के सामने झुकना पड़ा।

गीत में वर्णन आता है कि इवान ग्रोजनी ने—

“बज़्याल स नेवो त्सारस्क्यू कोरोनू  
ई सन्याल त्सारस्क्यू पोरफीरू,  
ओन त्सारस्की कोस्तील व रुकी प्रीन्याल,  
ई व तो ब्रेम्या कन्याज़ वोत्सारिलसा  
ई नासेल व मास्कोवस्कोये त्सारस्तवो।  
चतो तोगवादे मोस्कवा ओस्नोवालास्या,  
ई स त्येख पोर वेलीकाय स्लावा।”

अर्थात्—“ज़ार का ताज उतार लिया

और ज़ार का चोगा (पोरफिर) छीन लिया  
और शाही डण्डा अपने हाथ में संभाल लिया  
और उस समय कन्याज़ (राजा) गद्दी पर बैठ गया  
और मास्को राज्य पर आरूढ़ हुआ।  
और तब मास्को की नींव रखी  
और तभी से हुई महान कीर्ति।”

उसी ज़ार के राज्य में साहसी भले जवान दोन के सुविख्यात अतामान कज़ाक “येरमाक निमोफियेविच” और उनके साथी साइबेरिया की जंगली नदियों और पथरीली सीमाओं की ओर बढ़े। साइबेरिया में उस समय ज़ार कुचूमा का राज्य था। रूस के चालाक अतामानो ने भूसे के पुतले बनाकर उनको फ़ौजी वर्दी पहना दी और तातारियों को डराने के लिए उनके सामने खड़े कर दिये।

“बीलो ऊ येरमाका छुम्हीनी त्रीस्ता चेलोवेक,  
आ स्तालो उभ्ये से तेमी बोल्श्ये तीस्याची……”

अर्थात्—“येरमाक के साथियों की तादाद तीन सौ थी

और उनके साथ हजार से भी अधिक हो गये……”

—गीत वर्णन करता है। तातारियों ने अपने निशाने लगाकर रूसी शक्ति को परास्त करने का भरसक प्रयत्न किया। परन्तु येरमाक की ‘सेना’ अचल खड़ी

थी। रूसी 'सेना' की अभेद्यता को देखकर तातारियों में खलबली मच गई। शत्रु अचम्भित था। इधर येरमाक अपने साथियों के साथ—

“बोदयोल बो उस्त्या सीबीरकी-रेकी

ई व तो ब्रेम्या पोलोनील कुचूमा, त्सार्या तातारस्कोवो।”

अर्थात्—“साइबेरिया की नदियों के उद्गम तक पहुँच गया,

और उसी समय, तातारी ज़ार कुचूमा को कैद कर लिया।”

परास्त तातारियों को हथियार ढालने पड़े। वे उपहार लेकर येरमाक के पास आये। हरजाने के तौर पर साइबेरिया के सेबुल और गुफेदार लोमड़ियाँ लाये। येरमाक ने अपने साथियों को सेबुल की फर पहनाई और मास्को की ओर प्रस्थान किया। सेना को ऐसे अद्भुत और बढ़िया कपड़ों में देखकर ज़ार बहुत हैरान हुआ और येरमाक को अपने पास बुला भेजा।

“गोय ती येस, येरमाक, तीमोफेयेव सीन

ग्ये ती बीवाल, स्कोलको पो वोल्ये गुल्याल

ई नाप्रास्नीख दूश गुबील,

ई काकीय स्लुचायम तातारस्कोवो

कुचूमा त्सारया पोलोनील

ई फ्स्यू येवो तातारस्कोवो सीलू

पोव मोयू ब्लास्त्यू पोकोरील ?”

अर्थात्—“ओह तू येरमाक, तिमोफियेव के पुत्र,

तू कहाँ था, कितना स्वच्छन्द भ्रमण किया

और व्यर्थ लोगों की जानें गँवाई,

किस प्रकार तातारी

ज़ार कुचूमा को कैद किया

और उसकी समस्त तातारी शक्ति को

मेरे अधिकार में कर दिया।”

—इवान वासिल्येविच ने अतामान से पूछा। येरमाक ने ज़ार को पूरा हाल कह सुनाया। ज़ार ने येरमाक को पुरस्कार देने की आज्ञा दी और सम्पूर्ण साइबेरिया प्रदेश को मास्को-सत्ता के अधिकार में लाने के लिए और लड़ाइयाँ लड़ने के लिए वापिस साइबेरिया भेज दिया।

इवान गोज़नी (इवान भयंकर) की मृत्यु हो गई। उसके बीमार पुत्र ज़ार फ़्योदर इवानोविच के अल्पकालिक राज्य के पश्चात् बोरीस गोदूनोव ने राज्य की बागडोर संभाली। बोरीस गोदूनोव ने बेटे के लिए सुरक्षित करने के स्वप्न ले रहा था। परन्तु गोदूनोव परिवार रूसी सत्ता को संभाल न सका। ज़ार बोरीस की मृत्यु हो गई और उसके पश्चात् उसके बच्चों का भी नाम-निशान न रहा। गीत में वर्णन आता है—

“आ स्पलाचयेत्सा ना मोस्क्वे त्सारेवना,  
बोरीसा दीच् गोदूनोवा।  
—इनो, बोभ्ये, स्पास मीलोसेर्दी,  
ज़ा च्तो नाश्ये त्सारस्तवो ज़ागीबलो ?  
ज़ा बात्यूइकोवो ली सोप्रेशेन्ये,  
ज़ा मात्यूइकीनो ली नेमोलेन्ये ?”  
आ स्वेती बी, नाशी बीसोकीय खोरोमी,  
कोमू वामी बूद्येत ब्लावेती  
पोसल्ये नाशेवो त्सारस्कोवो भूत्या ?”

अर्थात्—“मास्को में शहज़ादी रोती है  
बोरीस गोदूनोव की लड़की।  
हे ईश्वर, रक्षा करो !  
हमारा राज्य क्यों नष्ट हो गया ?  
क्या पिता के गुनाहों के कारण ?  
क्या माता के पापों के कारण ?  
तुम उज्ज्वल, हमारे विशाल हरमो,  
तुम्हारा कौन मालिक होगा,  
हमारे ज़ारशाही जीवन के पश्चात् ?”

और बस राज्य पर अधिकार का भूठा दावा करने वाला मठ से भागा हुआ एक युवक पादरी मास्को आया। उसने अपने आपको इवान गोज़नी का छोटा लड़का, दिमीत्री, होने की घोषणा की और मास्को राज्य पर हक की अपनी माँग पेश की। परन्तु वह भी अधिक देर तक राज्य न कर सका। गीत में वर्णन है—

“तुत स्त्रेलत्सी बोगादालीस्या,  
फूस्ये ओनी सोबीरालीस्या,

क कास्नोम् त्सारस्कोम् क्लीसकू मेतालीस्या,  
ई तुत व मोस्कवे बज़बु'तोवालीस्या  
ग्रीशका रास्त्रीगा दोगाबायस्ता,  
साम ब बेरखनी चेरवाकी उबीरायस्ता.....”

अर्थात्—“वहाँ निशानचियों ने भाँप लिया  
वह सब इकट्ठे हो गये,  
ज़ार के लाल महल के चबूतरे पर इकट्ठे हुए,  
और वहाँ मास्को में विद्रोह किया ।  
ग्रीशका (दिमीत्री) भी समझ गया,  
स्वयं छत पर जा छिपा.....”

परन्तु राज्य पर दावा करने वाला क्रुद्ध निशानचियों से बच न सका । भाले  
फहराती हुई सेना ने महल को घेर लिया ।

“ब्रोसीलसा ओन स त्येख चेरवाकोव ना कोप्या ओस्तरिये  
को त्येम स्त्रेलत्सामी, उवालीम मोलोवत्साम ।  
ई तुत येम् ताकोवा स्मेत्य् स्लुचोलास्”

अर्थात्—“छत पर से वह तीखे भालों पर टूट पड़ा,  
उन निशानचियों पर, बहादुर युवकों पर,  
और वहाँ उसकी मृत्यु हुई.....”

१६१३ में राज्य रोमानोव परिवार के हाथ में आ गया । परन्तु इस परिवार  
के दूसरे ज़ार, अलेक्सांडर मिखलाइलोविच, के राज्य-काल में ही जन-विद्रोह आरम्भ  
हो चुका था । लोक-गीतों, कहानियों और कल्पित कथाओं का सुविख्यात नायक,  
वोल्गा का अग्रतमान, स्तपिन राज़िन-ऐतिहासिक रंगमंच पर आया ।

बहुत से ऐतिहासिक गीतों में इस बात का वर्णन है कि राज़िन और उसके  
स्वच्छन्द साथियों ने ज़ार के गवर्नरों, ज़मींदारों और अन्य आतताइयों से किस प्रकार  
से लड़ाईयाँ लड़ीं ।

“—ओय बी गोय येसी, बुरलाकी, स्पूबी बोलनीये ।  
बी बेरीत्ये जोलोतोय काज़नी, ख़तो नाबोबनो,  
बी बेरीत्ये त्स्वेतनो प्लात्ये गुबेरनातोरस्कोवो,  
बी बेरीत्ये फ़स्ये बीकोवनीकी ज़ामोरस्कीये.....”

अर्थात्—“ओह ! तुम बहादुरो, नौकाओं वालो, स्वच्छन्द लोगो,  
तुम दण्ड में सो ा ले लो जितना चाहो,  
तुम गवर्नर के कपड़े ले लो रंग-बिरंगे,  
तुम सागर पार की सब अद्भुत वस्तुएँ ले लो ………”

परन्तु जन-प्रतिशोधकों को रिश्वत का लालच नहीं था। ज़ार सरकार ने स्तेपान के सिर के लिए बड़ा भारी पुरस्कार रखा हुआ था। जब जैसे-तैसे करके शूरवीर अतामान को पकड़ लिया गया तो उस पर बिल्कुल तरस नहीं खाया गया। राज़िन को अपराधी घोषित करके मास्को में दण्ड दिया गया। परन्तु लोक-गीतों में उसके प्रति सद्भावना और सम्मान सदा के लिए अमर हो गया। गीतों में वर्णन आता है दण्ड की सूचना मिलते ही सारी प्रकृति विद्रोहमय हो उठी। यहाँ तक कि—

“पोमुतीलसा स्लावनी तीखी दोन,  
सो बेरशीनी दो च्यौरना मोर्या,  
दो च्यौरना मोर्या आजोवस्कोवो”

अर्थात्—“प्रसिद्ध शान्त दोन नदी गेंदली हो गई,  
उद्गम से लेकर काले सागर तक,  
आजोव के काले सागर तक…………”

और बहुत से गीतों में वीर अतामान का नाम और जन-स्वतन्त्रता के निमित्त किये गये उसके कारनामों की स्मृति अमर हो गई।

राज़िन के पश्चात् ऐतिहासिक गीतों में वीर-ख्याति प्राप्त करने वाला पुगाचेव था। किसानों में विद्रोह की अग्नि भड़काने वाले इन दोनों वीरों को लोगों की श्रद्धा ने परस्पर इतना समीप ला दिया कि दोनों के नाम एक दूसरे के पर्याय-वाची हो गये। कुछ गीतों में तो राज़िन का नाम निकालकर पुगाचेव का नाम रख दिया गया। लोगों के विचार में पुगाचेव राज़िन का ही कार्य पूर्ण करने वाला था। पुगाचेव की सेना मलिका कैथेराइन द्वितीया की सेना के विरुद्ध दिल तोड़ कर लड़ी—

“अनो ज़चाली पालित्य,  
सीलू आर्मियू बालित्य,  
इज़ यायिका-गोरोबका  
प्रोतेक्ला क्रोव्यू रेका,

कूती गोरी जाकाचालीस् ।  
 सीरा जेभ्या जात्र्यासलास्  
 सीरा जेभ्या जात्र्यासलास्  
 मेलका रीबा व्नीज पोशला,  
 मेलका प्ताशका सो र्नेज़वा....”

अर्थात्—“उन्होंने गोला-बारी शुरू कर दी,  
 सैन्य शक्ति लगा दी,  
 यायिका नामक शहर से  
 खून की नदियाँ बह निकलीं,  
 ढलवान पहाड़ हिल पड़े  
 गीली भूमि काँप उठी,  
 गीली भूमि काँप उठी,  
 छोटी-छोटी मछलियाँ नीचे चली गईं  
 छोटे-छोटे पक्षी घोंसलों से.....”

परन्तु गीतों में वर्णन आता है कि युद्ध में क्षणिक विजयों के दौरान में भी अपशकुनों ने पुगाचेव का पीछा नहीं छोड़ा :

इज़-ज़ा लेसा, लेसा त्योम्नोवो  
 ने बेला ज़ार्या ज़ानीमालास्या,  
 ने क्रास्नो सोलन्त्स्ये वोकातलोस्या-  
 वीयेज़भ्गाल तूतो दोब्री मोलोछेत्स,  
 दोब्री मोलोछेत्स, येमेल्यान-काज़ाक,  
 येमेल्यान-काज़ाक, सोन इवानोविच,  
 पोद नीम दोब्री कोन् सीव-बुर-शाख्मातनी  
 सीवा प्रीबूका दो सीरोय ज़मली ।  
 ओन इछीत सपोतीकायतसा.....”

अर्थात्—“जंगल से, अंधेरे जंगल के पीछे से  
 क्या सूर्योदय का सफ़ेद उजाला नहीं आया  
 क्या लाल सूर्य उदय नहीं हुआ,  
 भला जवान, येमेल्यान-कज़ाक  
 येमेल्यान-कज़ाक, इवानोविच का बेटा,

उसके नीचे भला घोड़ा सफ़ेद-भूरा-मखमली  
गर्दन के भूरे बाल गीली भूमि तक ।  
वह जा रहा है—ठोकर खाता है .....”

लोगों के विश्वास के अनुसार घोड़े का ठोकर खाना घुड़सवार के लिए एक बहुत बुरा शकुन है । और सचमुच पुगाचेव का भी वही हाल हुआ जो राजिन का हुआ था । बहुत से साहसी कारनामों तथा ज़ार की सत्ता और अधिकारियों से लड़ाइयाँ लड़कर जनता पर किये गये अत्याचारों का खूब बदला लिया । उसके पश्चात् वह मलिका कैथेराइन द्वितीया के हाथों पकड़ा गया । वहाँ उसने स्वयं अपना विप्लवी सिर काट कर एक लकड़ी के तख्ते पर रख दिया ।

एक बार फ्रांसीसी सम्राट “रूसी सम्राट” “सफ़ेद ज़ार” से तावान बसूल करने चला । रूसी ज़ार भयभीत हो जाता है, परन्तु—

“पेरेद नीम स्तोयाल गेनेरालूशका-साम कुतूज़ोव ।

उभ्र् ओन रेच्-तो गोबोरील, गेनेरालूशका,

“स्लोवनो काक व त्रूबू त्रूबील :

ने पुभायस्या ती, नाश बात्पूशका, प्रायोस्लावनी त्सार ।

आ मी वस्त्रेतीम ज़लोदेया सेरेदी पूती,

सेरेदी पूती, ना स्वोयेय ज़ेमली ।

आ मी स्तोलीकी पोस्ताविम येमू-पूशकी मेवनीये,

आ मी स्कातेरती येमू पोस्तेलिम-बोल्नी पुली,

ना ज़ाकुसोचकू पोस्ताविम-बोल्नी पुली,

ना ज़ाकुसोचकू पोस्ताविम-कालेनीख कार्तेच्..... ”

अर्थात्—“उसके सामने जर्नल खड़ा था—स्वयं कुतूज़ोव ।

उसने कहा, जर्नल ने

मानो जैसे रणभेरी बजा दी हो !

डरो मत, हमारे पिता कट्टरधर्मी ज़ार,

हम दुष्ट का रास्ते में ही स्वागत करेंगे,

रास्ते में ही अपनी भूमि पर ।

उसके लिए मेज़ लगायेंगे—ताँबे की तोपों का

हम उसके लिए चादर बिछायेंगे—गोलियों की,

खाने के लिए रखेंगे—दहकते कारतूस ।”

स्मोलेंस्की और मास्को के समीपवर्ती जंगलों में देश की रक्षा करने के लिए फ्रांसीसी सेना को भयभीत करने वाली सेना, लोगों की टुकड़ियाँ और पार्टीजन उठ खड़े हुए। निर्भीक कज़ाक अतामान प्लातोव ने अपनी बुद्धि, साहस और अपूर्व दिलेरी के कारण खूब ख्याति प्राप्त की। एक गीत में वर्णन आता है कि एक बार वह जान-बूझकर दुश्मन की सेना में जा घुसा। वहाँ आग के सामने बैठकर फ्रांसीसी सिपाहियों से बातचीत करने लगा और बातों-बातों में प्लातोव के बारे में उनकी राय पूछी। जब फ्रांसीसियों ने उन्हें बताया कि वह बहादुर अतामान को पकड़ने के लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी देने के लिए तैयार है, तो प्लातोव ने अपने घोड़े को एड़ लगाई और उसने विस्मित फ्रांसीसियों से विदाई लेते हुए चिल्लाकर कहा—

“ने उमेला ती, वीरोना,  
इमात्य सोकोला व खोरोमी।  
ने वीदात्य तेव्ये, रलोवेय,  
बोल्दये सोकोला व ग्लाजा  
ई प्लातोवा काजाका।”

अर्थात्—“नहीं सफल हुआ तू कीवे,  
बाज्र को भवन पर से पकड़ने में,  
तू देख नहीं सकेगा दुष्ट  
ज्यादा देर बाज्र की आँखों में,  
और कज़ाक प्लातोव को।”

१८१२ के युद्ध-विषयक गीतों के अतिरिक्त उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध से अलेक्सान्द्र प्रथम आराकच्येव, वारसा की विजय, आदि के बारे में गीत मिलते हैं।

यदि सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी के ऐतिहासिक गीत अपनी पद्य-रचना ताल और काव्य-चरित्रों के आधार पर बिलीने से बहुत मिलता-जुलता था तो अठारहवीं शताब्दी से वह कुछ संक्षिप्त और सादा होता चला गया। यहाँ तक कि उन्नीसवीं शताब्दी में वह मुख्यतः सैनिकों और युद्ध-गीतों में परिणत हो गया। यह गीत बड़े छोटे-छोटे थे। इनमें युद्ध घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन होता था। इनमें बिलीनों की-सी वीरकथाएँ, ताल और काव्य-सुन्दरता नहीं थी।

आजकल सोवियत बिलीनों के साथ-साथ ऐतिहासिक गीतों की भी रचना होती है। गृह-युद्ध की घटनाओं, दूरपूर्व सेना के युद्ध-कार्य, सफेद सैनिकों के साथ लड़ाइयों के बारे में बहुत गीत बन चुके हैं।





८

## लोक-कथाएँ

सोने से पहले कहानी कहने का रिवाज रूस में चिरकाल से चला आ रहा है। रूसी पूर्वज बारहवीं शताब्दी में ही कहानियाँ कहना और उनको अपने जीवन में प्रयोग करना जानते थे। प्राचीन ऐतिहासिक प्रमाणों से पता चलता है कि गाँवों में भी और शहरों में भी लोग कहानियाँ जानते थे और उनसे प्रेम करते थे। मास्को के ज़ार के महल में तथा बोयारों के हरमों में भी कहानियाँ मिलती थीं। इवान ओज़्नी (इवान भयंकर) रोमानोव परिवार के पहले ज़ार और अठारहवीं शताब्दी के रूसी सम्राट भी सोने से पहले कहानियाँ सुना करते थे।

जमींदारों के गुलामों में भी प्रायः कहानी सुनाने वाले कलाकार होते थे। अठारहवीं शताब्दी में रूसी रईस, सौदागर और जमींदार बहुत सी जादुई, हास्यजनक और भयंकर कहानियाँ सुना करते थे।

कभी-कभी ऐसा भी होता कि लड़ाई पर जाते हुए जर्नल भी अपने प्रिय कहानी कहनेवाले को अपने साथ ले जाया करते थे। कम से कम फील्डमार्शल अफ्राकसीन के विषय में तो कहा जाता है कि वह सातवर्षीय युद्ध के दौरान में सोने के पूर्व एक ग्रेनेड फेंकने वाले से कहानियाँ सुना करता था।

सम्राट "नेखितोर-नेमुधोर" की कहानी गाँवों में इस प्रकार सुनाई जाती थी—

एक बार एक सम्राट, उसकी रानी और युवराज रहते थे। बेटे का नाम इवान त्सारेविच था। इवान त्सारेविच घूमने गया। रास्ते में उसे तीन कुमारियाँ मिलीं। एक ने उससे वादा किया कि वह केवल तीन कलाचों (डबल रोटी) से सारे गाँव की भूख मिटा सकती है। दूसरी ने उसके लिए सात विभिन्न रेशमों का सात सुइयों से ऐसा रुमाल काढ़ने का वादा किया जिसके एक कोने में किरणों वाला सूर्य—प्रातः और शाम की लाली समेत—दूसरे कोने में चाँद और सितारे, तीसरी ने वादा किया कि उसके एक “नेखित्योर—नेमुद्योर” नामक लड़का पैदा होगा जिसके कोहनियों तक हाथ सोने में, घुटनों तक टाँगें चाँदी में, माथे पर तारा, घुंघराले बालों के बीच चन्द्रमा और कान खूब चमक रहे होंगे।

इवान त्सारेविच ने तीसरी बहन से विवाह कर लिया। उसकी अनुपस्थिति में एक नन्हा सा त्सारेविच बालक पैदा हुआ परन्तु उसकी पापिन चाचियों ने बालक तथा बालक की माता को एक ढोल में बंद करके नीले सागर की लहरों में बहा दिया।

ढोल तैरता-तैरता एक तट से लग गया। वहाँ बालक और उसकी माता ढोल से निकलकर एक महल बनाकर उसमें रहने लगे। उस टापू में एक बहुत अजूबा हुआ। वहाँ सोने के सींगोंवाला एक बकरा, एक जादुई गाय जो दूध की बजाय हीरे देती थी और सात बोगातीर (शूरवीर) आये। वहाँ से गुजरनेवाले जहाज़रानों ने इस अद्भुत टापू का हाल इवान त्सारेविच को कह सुनाया। इवान त्सारेविच उड़ने वाली दरी पर बैठकर अपनी स्त्री और बालक के पास पहुँच गया। घड़ियाल बजाये गये और तोपों के गोले गरज उठे। इस अजीब कहानी का अन्त बड़ा ही सुखकर और शानदार था। त्सारेविच “नेखित्योर-नेमुद्योर” ने पड़ोसी जादूगर की लड़की मिलोलीबा से विवाह कर लिया। वे इस प्रकार जीवन व्यतीत करने लगे जो न ही कहानी में वर्णन किया जा सकता है और न ही लेखनी द्वारा लिखा जा सकता है। वे वीयर पीते थे, शहद से भी मीठी रोटियाँ खाते थे।

यह अजूबों वाली कहानी गाँव की एक अशिक्षित बूढ़ी ने सुनाई थी जिसने पुश्किन का नाम तक नहीं सुना था। उसको यह बिल्कुल भी पता नहीं था कि पुश्किन द्वारा लिखी गई इसी कथावस्तु की “ज़ार मुलतान की कहानी” का भी संसार में अस्तित्व है।

सारा दिन घने जंगल में लकड़ियाँ काटने के पश्चात् सुगठित शरीर वाले लोग अपनी भोंपड़ियों में इकट्ठे होकर एक दूसरे को रमणीक कहानियाँ सुनाते।

बसंत में लकड़ियाँ काटकर नदी में बहानेवाले रात की चाँदनी में आग के इर्द-गिर्द बैठे एक दूसरे को कहानियाँ सुनाकर रात काटते ।

×

×

×

अपने प्रारम्भ और कथावस्तु के आधार पर रूसी कथाएँ लोक-साहित्य का एक बड़ा जटिल और बहुरूपक प्रकार है । रूसी गाँवों में पशुओं के विषय में बहुत सी कहानियाँ मिलती हैं । रूसी लोक-साहित्य के विशेषज्ञों की राय में इन कहानियों का उद्गम बड़ा प्राचीन है । इनका आरम्भ तब का है जब आदिम युग के कबीलों को पशु-पूजा का अन्धविश्वास घेरे था और वे मुर्दा दरिदों में जादुई शक्ति मानते थे । गाँव में जादुई कहानियाँ भी मिलती हैं । इनमें आदिम युग के बहुत से विश्वास और अपने इर्द-गिर्द के संसार के बारे में आदिम पुरुष की कल्पनाएँ प्रतिबिम्बित हैं । इनमें पशु और पेड़ आपस में बातचीत करते हैं और लोगों की सहायता करते हैं । जादुई अंगूठियों, कंधों, तौलियों और अन्य घरेलू वस्तुओं में नायक-नायिकाओं को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने तथा उनकी रक्षा करने की क्षमता थी । प्रकृति की अज्ञात और दुखदायी शक्ति प्रायः भयंकर जादूगरों और जादूगरनियों के रूप में प्रकट होती थी ।

घने जंगलों में रहने वाले रूसी सुदूर पूर्वजों की धारणा थी कि पेड़ और पशु भी उसी प्रकार रहते हैं जैसे मनुष्य । उनका विश्वास था कि जादुई जन्त्र-तंत्र मनुष्य को खतरे से बचा सकते हैं । यह सब विश्वास उनकी कल्पित कहानियों के कलापूर्ण प्रकारों में प्रतिफलित थे ।

कुछ समय के पश्चात् जब मानव-समाज वर्गों में बँट गई और उनमें आपसी शत्रुता का बीजारोपण हो गया, तब एक नये ढंग की कहानियों का प्रादुर्भाव हुआ । यह थे अमीरों और गरीबों के विषय के आख्यान-उपाख्यान । लोग ऐसी कथाएँ चिरकाल से जानते हैं । प्राचीन रूस में भी ऐसी कहानियों की कमी न थी । रूसी पूर्वजों ने जारों, जमींदारों, सौदागरों और अन्यायी जजों तथा भ्रष्ट अधिकारियों के बारे में बहुत सी परिहासमूलक अर्थात् 'व्यंग्गात्मक' कथाओं की रचना की है । इन कहानियों में लोगों की विन्ताओं और दुखों का प्रतिबिम्ब है । उनमें उनकी उस समय की कल्पनाओं की अभिव्यक्ति है जब अन्याय और पाप नहीं होगा, जब मालिक किसानों पर हँसना छोड़ देगा और जब गुनामी और बलात्कार लोगों के जीवन से सदा के लिए समाप्त हो जायेंगे ।

बहुत सी कहानियों में जिनमें अमीरों और गरीबों के आपसी सम्बन्ध का वर्णन होता है, एक सादा और भले किसान के लड़के का चित्रण आता है । वह

अपनी बुद्धि और दिलेरी के कारण सम्राटों, जादूगरों और अपने अन्य शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लेता है जो उसको सीभाग्य और समृद्धता से वंचित रखे हैं। इन कहानियों में लोगों की चतुराई, बुद्धिमत्ता, पाप पर पुण्य की विजय की आस्था और अपने व्यक्तित्व और क्षमता पर गौरव का वर्णन है। यही कारण है कि लोक-कथाएँ मानव-संस्कृति के इतिहास के लिए महत्वपूर्ण सामग्री हैं।

लोक-कथाओं की भाषा का भी अपना कलात्मक और ऐतिहासिक मूल्य है।

“ऐ युवक लेखको, जन-साधारण की कथाएँ पढ़ो ताकि रूसी भाषा की विलक्षणता तथा बनावट को देख सको”—पुश्किन ने कहा है। पुश्किन भली प्रकार जानते थे कि इस सजीव और सीधे लोगों से मिली हुई इस भाषा में कितनी शक्ति है। अन्य रूसी साहित्यकारों ने भी जन-भाषा की सुन्दरता और महत्ता का कई बार उल्लेख किया है।

बहुत से संग्रहकर्ताओं और अन्वेषकों ने रूसी लोक-कथाओं के संग्रह और अनुशीलन का काम किया है। उनमें अलेक्सान्द्र निकोलायविच आफांस्येव का नाम उल्लेखनीय है। लगभग सौ वर्ष हुए उसने उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में रूसी लोक-कथाओं के नाम से कहानियों का एक बृहत् संग्रह प्रकाशित किया था। आफांस्येव के पश्चात् उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लोक-साहित्य के विशेषज्ञों ने इस प्रकार की सामग्री एकत्र करने तथा उसको प्रकाशित करने का सराहनीय कार्य किया है।

परन्तु क्रान्ति से पूर्व संग्रहकर्ताओं को सब प्रकार की कथाएँ विदित नहीं हो सकीं। बहुत सी कहानियों की कथावस्तु क्रान्ति से सम्बन्ध रखती थी। इसलिए उसको खुल्लमखुल्ला ऊँचे स्वर में कहना असम्भव था। ऐसी कहानियाँ सुनाने वालों को ज़ार-सरकार पकड़ लेती थी और कैद करके साइबेरिया से निर्वासित कर देती थी। इन ‘गुप्त’ लोक-रचनाओं, ‘गुप्त’ कहानियों और गीतों की रचना गाँव में, विशेषकर मजदूरों के बीच फैक्ट्रियों और कारखानों में, यूराल की कोयले की खानों में और प्रच्छन्न क्रान्तिकारी सोसाइटियों के सदस्यों द्वारा हुई थी। इन गीतों और कथाओं का जनसाहित्य अब आधुनिक युग में स्वच्छन्दतापूर्वक मुखर हो सका है।

पुराने संग्रहकर्ताओं और प्रकाशकों के महान कार्य के बावजूद भी रूसी लोक-कथाओं का पूर्ण रूप से संग्रह और अध्ययन नहीं हो पाया है। कहानियों की सामग्री अभी तक लोगों के ओठों में सुरक्षित है और प्रतिवर्ष बाहर आ रही है।

सोवियत लोक-साहित्य के वैज्ञानिक लगातार यात्राओं की व्यवस्था करके बहुत सी कहानियों को लिपिबद्ध कर चुके हैं। अब पुराने मूल पाठों का दिलचस्प विवरण तथा सोवियत युग में रचित कहानियाँ मिलती हैं। जैसे-जैसे काम होता जा रहा है, वैसे-वैसे ऐसी नई कथाएँ मिल रही हैं जिनकी रचना जनता ने हाल ही की होगी।

प्राचीन जीवन, प्राचीन कल्पनाओं और जनता के दुःख ने प्राचीन कथा को जन्म दिया। नवीन भाग्यविधायिनी कर्मशीलता सोवियत आख्यान-साहित्य को जन्म दे रही है।

बहुरंगी जन-कल्पना का वह समस्त खजाना जिससे रूसी प्राचीन लोक-कथाएँ भरपूर हैं, आधुनिक युग की इन सोवियत कथाओं में भी प्रतिबिम्बित है। भाषा की शक्ति और सुन्दरता जन-बुद्धिमत्ता और परिहास जो प्राचीन कथाओं में मिलते हैं, आधुनिक युग की कथाओं को भी सुसज्जित कर रही हैं। पुरानी कहानियों की भाँति आधुनिक युग की कहानियों में भी जादुई फूल खिलते हैं; जीवन प्रदान करने वाले तथा मृत्युजनक स्रोत बहते हैं; परिदे, पेड़ तथा घास-फूस नायक और नायिकाओं की सहायता करते हैं। हम यह विश्वास नहीं करते कि ऐसे चमत्कार सच भी हो सकते हैं। परन्तु हमारे लिए उनकी महत्ता केवल उनके लोक-रचना के कलात्मक गुणों को अपनाने भर में है जिनको हम प्राचीन कहानियों द्वारा जानते और प्रेम करते रहे हैं। इसके अलावा सोवियत कहानियाँ कहने वाले अपनी रचनाओं में विचार रूपी बहुरंगी तार गूँथकर नई से नई चमत्कारी कहानियों का सृजन कर रहे हैं।

इन कहानियों में उन बातों और वस्तुओं का वर्णन आता है जो पहले कभी देखने और सुनने में नहीं आईं।

प्राचीन कहानियों में अभिव्यक्त लोगों की आशाएँ और आकांक्षाएँ पूरी हो चुकी हैं। पाप और अन्याय का नाश हो चुका है। उनका नाश बहादुर और शक्ति-शाली लोगों ने किया है जो मृत्यु तक से भयभीत नहीं होते थे।

इन लोगों का नेता लेनिन है। उनका देहान्त हो गया परन्तु जनता भली प्रकार देख रही है कि लेनिन द्वारा प्रारब्ध कार्य कितनी तत्परता और सफलता से पूरा किया जा रहा है। लोक-कथा नेता की मृत्यु में विश्वास नहीं करती। लोक-कथाओं में जन-प्रिय नेताओं की आधुनिक बहुत लम्बी होती है और यदि शत्रु उनका वध भी कर देता है तो वे जीवन प्रदान करने वाला पानी या अन्य साधनों द्वारा फिर जीवित हो उठते हैं। सोवियत कथाओं में भी हम इस परम्परा को देखते हैं।

सोवियत संघ की सब जातियों ने लेनिन के बारे में बहुत सी कथाओं की रचना की है। “इलीच (लेनिन) शीघ्र ही जाग उठेगा” नामक कहानी में वर्णन आता है कि इलीच मरा नहीं परन्तु मरने का बहाना वह इसलिए कर रहा है कि वह देख सके कि मजदूर और किसान लोग उसके अभाव में भी उसके आदेशानुसार किस प्रकार का जीवन व्यतीत करेंगे। रात को अपनी समाधि से निकलकर इलीच देश में घूमता है, अज्ञात रूप से क्रेमलिन की बैठकों में जाता है, मेष बदल कर फैक्ट्रियों में जाता है, और फिर गाँव में किसानों में जा मिलता है। सर्वत्र उसको अपना नाम सुनाई देता है और अपने द्वारा आरब्ध कार्य को पूरा होता देखता है। कहानी में वर्णन आता है कि—

“लेनिन खुश-खुश अपनी भोंपड़ी से बाहर निकला और आराम से समाधि में लेट गया। अपनी यात्राओं के पश्चात् अब बहुत दिनों से वहाँ सो रहा है। अब वह अवश्य ही जल्दी उठ खड़ा होगा। कितनी प्रसन्नता होगी। जो वाणी द्वारा कही नहीं जा सकती और लेखनी द्वारा लिखी नहीं जा सकती।”

इस कथा का आरम्भ यों है—

लेनिन सो रहा है। पीछे उसके बहुत से साथी रह गये हैं जिनमें उसका वफ़ादार मित्र स्तालिन है।

“स्तालिन ने लेनिन द्वारा आरब्ध अनुष्ठान जारी रखा है। स्तालिन लोगों को इस बात की शिक्षा दे रहा है कि सुखी और आनन्दमय जीवन किस प्रकार बिताना चाहिए।”

“संसार में सबसे अधिक प्रिय क्या है?” कारेला के कोलखोजियों द्वारा रचित एक कथा में प्रश्न किया गया है। इस कथा में वर्णन आता है कि एक बार कोलखोज के तीन प्रतिनिधि जादुई रोटी के एक गोल टुकड़े पर बैठकर समस्त सोवियत भूमि में इस बात का पता लगाने के लिए घूमे कि संसार में सबसे अधिक प्रिय कौनसी वस्तु है। जादुई रोटी का यह गोल टुकड़ा उनको सोवियत भूमि पर काफ़ी देर तक घुमाता रहा। उनको सोवियत शासन में होने वाले भाँति-भाँति के चमत्कार दिखाये और अन्त में उन्हें क्रेमलिन ले गया। वहाँ नेता के साथ बातचीत के दौरान में उसकी चतुर वाणी, नसीहतों और आदेशों में कोलखोजियों ने सबसे अधिक प्रिय वस्तु को पा लिया।”

इन नई कथाओं में वर्णित क्रान्ति के नेताओं के चित्र बुद्धिमत्ता, सादगी और गरीब-परवरी आदि उन समस्त गुणों से ओत-प्रोत रहते हैं जो रूसी जनता के विश्वासानुसार उनके प्रिय नेताओं में विद्यमान हैं।

सोवियत कथाओं के नायक और नायिकाएँ साधारण कल्पित कथाओं के नायक और नायिकाओं के समस्त गुणों से भूषित हैं। उदाहरण के तौर पर, बहादुर शिकारी फ्योदर अपनी शक्ति से बढ़-चढ़कर काम करता है। वह सीमा को पार करके हमले की चेष्टा करने वाले शत्रुओं से अकेला ही स्वदेश की रक्षा करता है। जंगल, वन्य जीव-जन्तु, वायु तूफान—सारी प्रकृति फ्योदर की सहायता करती है। साधारण वीरगाथा की तरह शत्रु अपकीर्तिमय मृत्यु प्राप्त करता है और दिलेर देश-भक्त विजयी होता है। शूरवीर के तीन भाई अपने देश की रक्षा के लिए लड़ाई में बड़ी बहादुरी दिनेरी दिखाते हैं। जब उनमें से एक शत्रु द्वारा मारा जाता है तो दूसरे भाई उसको जीवन प्रदान करने वाला पानी पिलाकर फिर जीवित कर लेते हैं। शत्रु फिर अजय सोवियत योद्धाओं को अपने मुकाबले में खड़ा देखते हैं और समझ जाते हैं कि सोवियत संघ की युद्ध-शक्ति पर विजय पाना उनके बस की बात नहीं। सोवियत लोक-साहित्य के विशेषज्ञ बहुत सी ऐसी कहानियों को लोकमुख से सुन-पुन कर लिपिबद्ध कर चुके हैं। उन सब का सार यह है कि सोवियत नागरिक अपनी बहादुरी, देशप्रियता, साधना और जनहितकारी कर्मनिष्ठा आदि गुणों के कारण हर लड़ाई में विजय प्राप्त करते हैं।

जब कोलखोज बनने लगे और गाँव में विकराल वर्ग-युद्ध आरम्भ हुआ तो सोवियत कहानीकारों ने 'सुख' फूल' नामक एक आख्यायिका गढ़ी। उसमें आता है कि कुलाकों ने कोलखोजों के निर्माण करने वाले एक वीर कार्यकर्ता को मारने की कोशिश की। परन्तु उनकी सब कोशिशें नाकामयाब रहीं। तब उन्होंने उस बहादुर को पकड़ कर ज़मीन के नीचे जीवित ही दबा दिया। उस महावीर की छाती पर लगे तगमे से एक अद्भुत सुख' फूल खिला। कोलखोजियों ने उस विलक्षण पुष्प को ढूँढ़ निकाला। वे उसको तोड़ने लगे तो वह बोल उठा और उनसे ज़मीन खोदने को कहा। बहादुर बच गया और उसके शत्रुओं को कैद कर लिया गया।

योद्धा और कोलखोजियों के अलावा सोवियत कथाओं में निर्भीक लोगों के चरित्र उभरते हैं। ये सब ऐसे लोग थे जिन्होंने उस प्रकृति पर विजय प्राप्त की जिसको पहले सर्वथा अजेय समझा जाता था। सोवियत वायुयान-संचालक उत्तरी ध्रुव तक उड़ान मार आये हैं। सोवियत आख्यानो में वर्णन आता है कि उत्तरी ध्रुव पर उन्होंने इस कारण उड़ान भरी कि वह उन ठण्डी हवाओं से युद्ध करें जो सोवियत भूमि पर ठण्ड भेजती थीं। संचालक पन्द्रह हवाओं को एक बोरी में बाँधकर वहाँ से मास्को ले आये जहाँ उन्होंने उन हवाओं को अपनी सरकार के हवाले कर दिया।

“बर्फीली पहाड़ी” नामक कहानी में वर्णन आता है कि एक बहादुर और उसके साथियों ने एक अंगूठी ढूँढी जिसको एक दुष्ट मछली दूर उत्तर में ले भागी थी। इस कथा में विख्यात चेत्युस्किन और उसके साथियों का वीरोपाख्यान का प्रतिबिम्ब है।





६

## बिवालश्चीना

भूत-प्रेतों की कहानियाँ

रूस के गाँवों में बूढ़ों और बुढ़ियों के मुख से भूत-प्रेतों के विषय में बहुत सी कथाएँ सुनने को मिलती हैं। आज लोक-साहित्य के संग्रहकर्ता उनका संग्रह करके उनको लिपिबद्ध कर रहे हैं।

रूस की लोक-साहित्य की संग्रहकर्ता कोल्पाकोवा को एक बार पतझड़ के मौसम में श्वेत सागर के तट पर एक मछेरा की भोंपड़ी में एक रात काटनी पड़ी।

तमाम दिन तूफान चलता रहा। गहरा भूरा आकाश सागर की अशान्त लहरों पर नीचे ही नीचे लुढ़कता जा रहा था। तेज भागती हुई लहरें गर्जनों के साथ विशाल रेतीले तट-भूमि पर उबलती हुई भाग फेंक रही थीं। बीच-बीच में सार्य-सार्य करते हुए प्रबल वायु के तेज झोके आ रहे थे।

भोंपड़ी गर्म थी और रहने के लिए बड़ी आरामदेह थी। बड़ी अंगीठी में कोयले दहक रहे थे। भोंपड़ी में बूढ़ा मछेरा अलेक्सेई निकितिच उसकी बूढ़ी स्त्री मात्रेना इवानोवना और उनकी अठारहवर्षीय लड़की न्युरा रहते थे।

उस तूफानी तथा ठण्डे दिन से ऊबकर कोल्पाकोवा बूढ़े की लड़की के बराबर एक शानदार खाल पर बड़े आनन्द से टांगें पसारकर लेट गई और रंग-बिरंगी छोट की रजाई ऊपर ओढ़ ली ।

बूढ़ा और बुढ़िया भी एक चौड़े बेंच पर घड़ाम से लेट गये ।

“उई, कंसी तैज हवा चल रही है ! ठीक भून की तरह ।” —रोशनदान में से हवा चलने का शब्द सुनकर न्यूरा ने चौंककर कहा ।

प्रवीण संग्रहकर्ता अपने कान सदा चौकन्ने रखता है । कोल्पाकोवा ने तुरन्त न्यूरा से पूछा—

“तुम्हारे यहाँ भूत-प्रेतों पर विश्वास करते हैं क्या ?”

“क्यों नहीं करते हैं विश्वास”—लड़की ने उत्तर दिया ।

“हम तो विश्वास नहीं करते, परन्तु बूढ़े .....चाचा ने बताया था कि युवावस्था में उसने स्वयं एक भूत देखा था ।”

“अच्छा ?”

“हाँ, सच । चाचा, चाचा.... ” न्यूरा ने अपने बूढ़े पिता को आवाज़ दी ।

“हाँ ।” बूढ़े ने उत्तर दिया ।

“मैं कह रही थी कि जब तुम जवान थे तुमने एक भूत देखा था । ठीक है न ?”

“हाँ, देखा था ।”—बूढ़े मछरे ने शान्ति से उत्तर दिया । “पर इससे तुम्हें क्या ?”

“चाचा, सुनाओ न । अभी तो तुम सो भी नहीं रहे ।”

“बताइये अलेक्सेन्द्र निकितिच ।” कोल्पाकोवा ने भी अनुमोदन किया ।

“लड़कियो तुम भी कैसी हो । रात को तो .... ” मात्रेना इवावोवना ने हमें डराते हुए रोका । “समय ठीक नहीं । बुरे स्वप्न आयेंगे । अब सो जाओ ।”

न्यूरा हँसने लगी ।

“सुनो, मैं तुम्हें धीरे-धीरे सुनाती हूँ ।” कोल्पाकोवा के समीप खिसककर उसने कहा । “मुझे वह बात अच्छी तरह याद है । उसने मुझे बताया था । बहुत दिनों की बात है । तब मैं बहुत छोटी थी । एक बूढ़े के पास रात को सात लड़कियाँ बैठी थीं । लड़की की सहेलियाँ थीं । उन्हें भाग्य भाखने की सूझी । सध्यात्काओं के दिन थे । वे सब नदी पर गई और कमीज के आस्तीन भिगो लिये । भाग्य भाखने का ढंग यह है कि लड़की अपनी कमीज के आस्तीन या जुराबें भिगो लेती है और सो जाती है । उसका मंगेतर उसे स्वप्न में दिखाई देना चाहिए । यदि वह आये तो कमीज की गीली आस्तीन सूख जायगी । बस वह अपनी कमीज की आस्तीन गीली करके नदी से लौट रही थी । वे चुपचाप भोंपड़ी के अन्दर आई और बेंच पर बैठ गई । ऐसा करते समय बोला नहीं जाता वरन् सारी शक्ति लुप्त हो जाती है ।

“वे मेज के चारों ओर बैठी अपना-अपना काम कर रही थीं। कोई सी रही थी, कोई बुन रही थी। बूढ़ा पिता चतुर था। उसको पता था कि घर के पास कोई अपवित्र शक्ति घूम रही है। उसने मिट्टी के बर्तनों से सब लड़कियों के सिर ढाँप दिये। बस अचानक सहन में खड़खड़ाहट हुई, किवाड़ चौपट खुल गये, लैम्प बुझ गया। कोई लड़कियों की ओर भोंपड़ी के अन्दर घुस आया। सब के सिरों पर से मिट्टी के बर्तन टूट गये। यह शैतान था। जब शैतान ने देखा कि सिरों की बजाय बर्तन टूट रहे हैं तो वह चिल्लाया—‘अच्छा बुद्धे, तुमने मेरे साथ चालाकी की है। वरना तुम्हारी लड़कियों के सिर फूट गये होते।’

“यह कहकर वह किवाड़ों से टकराया और भाग गया। लड़कियाँ इतना डर गई थीं कि तब से भाग्य भाखने का नाम नहीं लिया। चाचा अंगीठी पर बैठा यह सब कुछ देख रहा था। उस समय वह छोटा था। वहाँ वह दादी के साथ सोने के लिए लेटा था।”

“वह कोई भूत थोड़े ही था?” उसी प्रकार शान्त भाव से अलेक्सेई निकित्च तनिक सा बोला—“वह तो एक अपवित्र शक्ति थी जो सव्यात्काओं के दिनों में घूमा करती है और भूत घर में रहता है। वह सदा शान्त रहता है। भूत तो मेने और मेरे छोटे भाई ने एक बार मछली पकड़ने वाले स्थान पर देखा था।”

बूढ़ा रुक गया। फिर कहने लगा—

“हम दोनों बच्चे थे।” थोड़ी देर चुप रहने के बाद वह कहने लगा। हमारे माता-पिता हम दोनों को अकेला छोड़कर कार्यवश किसी गाँव को चले गये थे। हमें वह अन्दर बन्द करके सोने जाने के लिए कह गये थे। हम लेट गये परन्तु नींद नहीं आती थी। मौसम ऐसा ही था जैसा कि आज है। हवा चल रही थी, सागर ठाठें मार रहा था। इतने में हम क्या सुनते हैं कि कोई सहन में चल रहा है। भाई मुझ से छोटा था, डर गया।

“अल्योशा !” उसने कहा—“किवाड़ बन्द है ? वहाँ कौन आ रहा है ?”

“मुझे स्वयं नहीं पता था कि उसे क्या कहूँ।”

“चुप रह !” मैंने कहा—“वह निश्चय ही चला जायेगा।”

“शोर ज्यादा होता गया। चलने की आहट बराबर आ रही थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो कोई मुड़ रहा हो। भाई ने कहा—

“अल्योशा ! मुझे डर लग रहा है। ज़रा देखो तो सही वहाँ कौन है ?”

“बस, मैं हिम्मत बाँधकर उठा और किवाड़ खोले। मैं सहन में गया, परन्तु ‘वह’ मेरे पास से होता हुआ किवाड़ और चौखट की दरार में घुस गया। वह

बहुत स्थूल काय और काला था। उसने उस छोटे से सुराख में टांगें डालीं और फिर बाहर निकल गया। देखते-देखते वह गायब हो गया। मैं वापिस लौट आया फिर भाई से बहा—

“सो जा, कुछ नहीं है।”

“और मैं स्वयं डर के मारे काँप रहा था। अच्छा हुआ कि माता-पिता जल्दी ही घर लौट आये, वरना पता नहीं हम दोनों की क्या दशा होती।”

“और चाचा याद है ... ?”—न्यूरा कहने ही वाली थी, परन्तु मात्रेना इवानोवना बेंच पर पड़ी-पड़ी धमकाने लगी।

“क्या तुम से चुप नहीं रहा जाता ? कभी एक बोलता है, कभी दूसरा। कोई अच्छी बात करो। ऐसी डरावनी बातें भी अंधेरे में करनी चाहिए क्या ?”

“हाँ, अच्छा तूने भी तो एक बार ‘खाल उधेड़नेवाले गुसलखाने,’ की बात सुनाई थी।”—न्यूरा ने कहा—“याद है तूने कहा था कि आधी रात के बाद गुसलखाने में नहीं जाना चाहिए। वरना खाल उधेड़नेवाला खाल उधेड़ लेता है।”

“हाँ, कहा था .. अपने समय में क्या थोड़ी बातें देखी और सुनी हैं ? लेकिन क्या तू अब वह सब फिर से करने को मजबूर करेगी ?”

“मात्रेना इवानोवना, क्या तुम ने जादूगरों के विषय में भी सुना है ?” कोल्पा-कोवा ने बीच में पड़कर पूछा। “मैंने सुना है कि आपके यहाँ .....”

“बेटी जो नहीं, सो नहीं”—देर के बाद बुढ़िया तनककर बोली। “जादूगरों की बातें सुनने के लिए तुम्हें उम्ब गाँव जाना पड़ेगा। हमारे यहाँ उनके बारे में कोई सामग्री नहीं मिल सकेगी। उम्ब गाँव में उन दिनों ऐसी बहुत सी बात सुनने में आती थीं।

अपने डर को भूलकर वह उठकर अपने बेंच पर बैठ गई और बताने लगी—

“उनके यहाँ एक जादूगर था—सब जादूगरों का जादूगर। वह नदियों की मछलियों से बातचीत कर सकता था। जब भी वह पानी पर मंत्र पढ़ देता तो दूसरी जगह की सारी मछलियाँ वहाँ आ जातीं। जब पड़ोसियों को पता लगा कि उम्बवाले मछलियों पर जादू कर रहे हैं तो उन्होंने भी अपने जादूगर को बुलवाया। बस अब जब उम्बवाला जादूगर फिर जादू करने लगा तो उसे ऐसा आभास होने लगा कि उसके जादू में पहली-सी शक्ति नहीं रही। उसने लोगों से कहा—

“भाइयो, जान पड़ता है कि वहाँ कोई दूसरा जादूगर रुकावट डाल रहा है। मुझे अब उससे निबटना पड़ेगा। यदि मुझ में कुछ शक्ति होगी तो मैं सही-सलामत वापस लौट आऊँगा। और यदि नहीं तो मैं नष्ट हो जाऊँगा। उस अवस्था में मेरी आत्मा तट पर आवेगी। मेरी प्रतीक्षा तीन घण्टे तक करना।”

“यह कहकर जादूगर नदी में कूद गया और पानी में गोता लगा गया। लोग तट पर खड़े प्रतीक्षा कर रहे थे। घण्टा बीता, दो घण्टे बीते, पर जादूगर का कोई पता नहीं। जब तीन घण्टे हुए तो यकायक सब चिल्ला उठे—‘देखो ! वह देखो !’

“और क्या देखते हैं कि पानी में से भाग की एक बड़ी भारी लहर तट पर आई। वह हवा में मिलकर उड़ गई। इसका अर्थ था कि उस जादूगर की आत्मा वहाँ से उड़ गई। दूसरा जादूगर जीत गया था। उस समय से उम्ब में मछलियाँ कम पकड़ में आती हैं।”

“परन्तु, मात्रेना इवानोना, मैंने तो सुना है कि उम्ब का कोलखोज़ बड़ा समृद्धिशाली है, और अब वहाँ मछलियाँ बहुत पकड़ी जाती हैं”—कोल्पाकोवा ने पूछा।

“क्या मालूम बेटी ? अब तो लोग बिना जादूगरों के ही मछलियाँ पकड़ना सीख गये हैं। पहले तो जादूगरों के बिना काम ही नहीं चलता था।” मात्रेना इवानोवना ने बुड़बुड़ाते हुए उत्तर दिया।

“हाँ, सुदूर अतीत की ऐसी-ऐसी बातें तुम्हें सागर के तट के आस-पास बहुत सुनने को मिलेंगी।” अलैक्सेइ निकितिच ने बीच में बोलते हुए कहा—“पुराने समय की अजीब-अजीब बातें हैं। परन्तु अब तो वे मनबहलाव का एक साधन मात्र रह गई हैं। वैसे तो अब भी ऐसी बातें बहुत सुनने में आती हैं परन्तु उन पर लोगों का विश्वास अब बिल्कुल नहीं रहा।”

बूढ़ा और बूढ़ी चुप हो गए। फिर मौसम को भला-बुरा कहकर सो गये।

## बीवालश्चीना

“बीवालश्चीना” शब्द स्वयं बहुत कुछ प्रकट करता है। कहानी सुनानेवाला तथा सुननेवाले भली प्रकार जानते हैं कि कहानी में वर्णित घटनाएँ कल्पित हैं और वास्तव में घटी नहीं। परन्तु ‘बीवालश्चीना’ की बात दूसरी है। उसमें ऐसी घटना का वर्णन आता है जो मानो सचमुच ही घटी हो—अब नहीं और न ही उस समय जहाँ तक हमारी स्मरण-शक्ति काम करती हो परन्तु वह बहुत प्राचीन काल में ही घटी हो। यह जीवन-सम्बन्धी साधारण कथाएँ भी नहीं हैं। ‘बीवालश्चीना’ की विशेषता यह है कि इनमें कभी-कभी भूत-प्रेत, शैतान, पुनर्जीवित मुर्दे और अन्य डरावनी चीजों और अनहोनी घटनाओं का वर्णन आता है।

‘बीवालश्चीना’ में असामान्य और भयजनक कथावस्तु का प्रयोग किया जाता है। इनकी रचना स्पष्टतः विघर्म काल से ही आरम्भ हो चुकी थी। शताब्दियों तक उनमें रूसी सुदूर पूर्वजों के अंधविश्वास और कहानाएँ अभिव्यक्त होती रही हैं। लोग शैतानों, देवताओं और चमत्कारों में इसलिए विश्वास करते थे कि वह प्रकृति को समझने तथा उससे निबटने में असमर्थ थे। आज जब काम करने की नई टेक्निक और नई व्यवस्था कोलखोजों को सुदृढ़ बनाती जा रही है और जब रूसी गाँवों में शिक्षा और संस्कृति का प्रसार दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है, किसी को भी जादूगरों की सहायता की आवश्यकता नहीं रही। शैतानों और दानवों में विश्वास केवल ‘बीवालश्चीनों’ में ही सुरक्षित रह गया है।

रूसी लोक-साहित्य में ‘बीवालश्चीना’ का एक और प्रकार भी है। यह ऐतिहासिक बीवालश्चीना है। इसका जन्म काफी देर बाद हुआ है। इनमें साधारणतः किसी पवित्र टीले, पहाड़ी, कगार या पत्थर विषयक कल्पित कथाओं का वर्णन होता था। प्रायः डाकुओं और दबे खजाने का वर्णन होता था।

जन-स्वतंत्रता के हित युद्ध करने वाले शूरवीरों के विषय में भी बीवालश्चीने हैं। उदाहरण के तौर पर, दक्षिणी यूराल में पुगाचेव के बारे में बीवालश्चीने मिले हैं। वहाँ के जंगलों में अब तक चौड़ी और खुली जगह मिलती है जिनको ‘सरकारी रास्ते’ कहते हैं। कल्पित कथाओं के अनुसार यह रास्ते जंगल काटकर पुगाचेव के लिए बनाये गये थे।

“पिता पुगाचेव के विषय में हमें क्योंकर पता न हो” वेर्खी (ऊपरी) अवज्यान के गाँव में एक बुढ़िया ने कोल्पा गोत्रा को बताया। “उसके साथ बड़े-बड़े चमत्कार हुए। एक बार वह हमारे पास आया और बोला कि जिसका मन चाहे, वह आकर उसके साथ मिल सकता है। बस, बहुत से लोग उसके पीछे हो लिये—क्या बूढ़े, क्या जवान। उसका पीछा किया जा रहा था। जार के सिपाही उसको पकड़ना चाहते थे।

“पुगाचेव बचने की कोशिश कर रहा था। वह सागर की ओर दौड़ गया। वह लोहे की कमीज पहिने था। उस पर गोली का कोई असर नहीं होता था।

“सागर-तट तक उसका बुरी तरह पीछा किया गया। उस पर गोलियों की वर्षा की गई। परन्तु सिपाही उसको घायल न कर सके। वह किस्ती में बैठकर बच निकलना चाहता था। वह किस्ती में जा कूदा। दुर्भाग्यवश किस्ती आगे निकल गई। लोहे की भारी कमीज के कारण तैरना कठिन हो रहा था। वह पानी में घुस गया और मछली बनकर सागर के दूसरी ओर तट पर जा निकला। इस प्रकार वह पकड़ा न जा सका।”

दक्षिणी यूराल के बेलोरेत्सक शहर के पास एक गाँव में एक बूढ़े ने कोल्पाकोवा को बताया : “अवज्ञान गाँव के पास एक टूटा-फूटा कारखाना है। पास ही एक छोटी-सी नदी बहती है। इस नदी का नाम कुखतोर है। पहले वहाँ इसी नाम का एक गाँव था। इस कारखाने में उस समय पुगाचेव के लिए तोपें तैयार की जाती थीं। भागते समय वह उस कारखाने को तोड़-फोड़ गया था। गाँव के सब लोग उसके साथ भाग निकले थे।”

“और बस पुगाचेव के भागते समय पृथ्वी धरधरा उठी। भूमि फट गई और कुखतोर नदी उसके भीतर समा गई। वह नदी अब तक एक स्थान पर ज़मीन के अन्दर बहती है और फिर ऊपर आ जाती है। इसका कारण यह है कि प्रकृति उस पर तरस खाती थी और हर प्रकार से उसका साथ देना चाहती थी। नदी इस कारण भूमि के भीतर चली गई थी कि पुगाचेव का पीछा करनेवालों को वहाँ पीने के लिए पानी की एक बूंद भी न मिले।”

यूराल में जिगाज़ गाँव में एक बीवालश्चीना “स्तेपान राज़िन का खज़ाना” मिला है। उसकी कथावस्तु यों है—

“स्तेपान राज़िन को एक बार अपना खज़ाना भूमि के अन्दर दबाना था। पुराने ज़माने में खज़ाने के साथ किसी दण्डित व्यक्ति का सिर भी दबाया जाता था। कटे हुए सिर को खज़ाने के साथ इस कारण दबाया जाता था कि वह खज़ाने की रक्षा करे।

“एक डाकू था, जिस पर राज़िन किसी कारण से नाराज़ हो गया था। राज़िन उस डाकू को दण्ड देना चाहता था। वह डाकू भागकर हमारे गाँव में आ गया और इवान पान्क्रातोव के किवाड़ खटखटाये।

“रात काटने की आज्ञा दीजिए।”

इवान पान्क्रातोव बहुत गरीब था।

“मेरे पास तुम्हारे लिए खाने को कुछ नहीं।”

“भीतर आने दीजिये, चाहे खाने को कुछ न देना।”

इवान ने उसको भीतर बुला लिया। आखिरी रोटी उन्होंने बाँटकर खाली। प्रातःकाल डाकू उससे कहने लगा।

“बृहस्पतिवार को नदी पर जाना। सामने जंगल में एक भोंपड़ी दिखाई देगी। नदी भूमि के नीचे से निकलती है। अपने साथ शराब ले जाना। वहाँ तुम्हें एक पहरेदार मिलेगा। वह तुम्हें भोंपड़ी के भीतर बुला लेगा। वहाँ तुम्हें बहुत कुछ दिखाई पड़ेगा। लेकिन तुम कुछ न लेना। सबसे पहले एक चाकू उठाना जो शहतीर में खुबा होगा।

डाकू चला गया। इवान ने उसी तरह किया। वह बृहस्पतिवार को नदी पर गया। वहाँ उसने एक भोंपड़ी देखी जो पहले वहाँ कभी नहीं थी। एक पहरेदार खड़ा था।

उसने भोली में से शराब निकाली और पहरेदार से पूछा—“पियोगे?”

पहरेदार ने उत्तर दिया—

“हाँ! इस देहली पर से दोनों टाँगों से एक साथ छलाँग लगाओ।” पहरेदार ने शराब पी ली। इवान भोंपड़ी में कूद गया। इतने में वह क्या देखता है कि चारों ओर सोने से भरे सन्दूक पड़े हैं। इवान पहरेदार से पूछने ही वाला था कि पृथ्वी के भीतर से अग्नि निकली और उसके साथ-साथ पहरेदार भी गायब हो गया। इवान अकेला रह गया था। वह उस डाकू की बात भूल बैठा। लगा जेबों और टोपी में सोना भरने। सोना उठाया और किशती में लाद लिया। फिर भोंपड़ी में गया। वहाँ वही पहरेदार खड़ा था। उसने उसे भीतर जाने से रोक दिया। उसने कहा—

“तुम्हें क्या कहा गया था, कि चाकू लेने से पहले कोई चीज नहीं उठानी है। चाकू लेना था। उस पर स्तेपान राजिन के खजानों का नक्शा था। ये उसने गरीबों के लिए इकट्ठे किये थे। अब तुम्हें कुछ भी नहीं मिलेगा।”

और, फिर जमीन के नीचे से आग निकली और पहले की तरह वह उसके साथ ही गायब हो गया। इवान क्या देखता है कि उसके सामने खाली जंगल है। वह किशती में बैठकर सोना घर ले आया और शेष जीवन उसका अमीरी में गुजरा।

पीनेगा नदी पर केवरोल गाँव में घुन से खाये हुए लकड़ी के बड़े-बड़े तस्तों से बना एक गिरजा है। वह गिरजा एक ओर को झुका गया है। स्थानीय ‘बीवाल-श्चीने’ के अनुसार केवरोल गाँव में एक पुरानी रूसी छावनी थी। छावनी को वहाँ से पीनेगा शहर में उठा ले जाने का निश्चय किया गया। जब सैनिकों से भरी रेलगाड़ी वहाँ से चली तो खिड़कियों में आग भभक उठी और अपमान के कारण गिरजा भी वाँप उठा और उस समय से अब तक एक ओर को झुका खड़ा है।

नेवा नदी के उद्गम स्थान में कंदालाक्षा का शहर है। वहाँ एक भारी पत्थर है जिसके चारों ओर पानी का एक जोरदार झरना बहता है। ‘बीवालश्चीने’ के अनुसार सौ वर्ष हुए रूस की अंग्रेजों से लड़ाई हुई। उस लड़ाई में स्थानीय मठाधीश ने शत्रु से बचाने के लिए चाँदी का एक बड़ा भारी घण्टा पानी के नीचे छुपा दिया। जब श्वेत सागर से अंग्रेज चले गये तो उस घण्टे को निकालना असम्भव हो गया। उसके ऊपर एक पत्थर आ गया और उसने एक झरने का रूप धारण कर लिया।

वह अब तक नदी की तह के नीचे पड़ा है। बूढ़ों का कहना है कि बड़े-बड़े त्यौहारों पर चाँदी का वह घण्टा बज उठता है।

ऐसे बीवालश्चीनों में प्रायः स्थानीय दिलचस्प 'स्तारीने' (पुरातन कथा) की झंकार सुरक्षित मिलती है। इनमें ऐतिहासिक घटनाओं का ब्यौरा तथा विभिन्न भौगोलिक नामों का स्पष्टीकरण है। उनको सुनने और लिपिबद्ध करने में बड़ा आनन्द आता है परन्तु उन पर विश्वास करने में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है।





१०

## खेल और नृत्य-गीत

खेलों के गीत पहले रूसी गाँव में बहुत गाये जाते थे। युवक और युवतियाँ इकट्ठे नदी पर, या चरागाह में या साधारणतः गाँव की किसी गली में इकट्ठी हो जातीं और घेरे बनाकर 'हमने बाजरा बोया', 'मैं पटुआ बोती हूँ', 'लड़कियों ने दरी बुनी' और अन्य ऐसे खेल नाचकर खेलतीं। ऐसे खेल खेलते-खेलते खिलाड़ी हाव-भावों द्वारा बोनेवालों और बुननेवालों की नकलें उतारते थे। खेलों के ऐसे गीत-विशेष विषयों या छोटी-छोटी भाँकियों तथा अभिनय-प्रदर्शन का अच्छा नमूना हैं।

खेलों में कभी-कभी भिन्न-भिन्न व्यवसायों का अभिनय किया जाता है, जैसे खेती-बाड़ी, व्यापार आदि। स्पष्ट रूप से इन खेलों और गीतों का प्रारम्भ बहुत प्राचीन है। इनकी रचना अवश्य ही उस समय हुई होगी जब रूसी पूर्वज खेलों के द्वारा अपने काम में सफलता को अपनी ओर आकर्षित करने, अपने काम में थकावट को दूर रखने, शिकार खेलने या मछली पकड़ने में सहायता प्राप्त करने की आशा रखते थे। उदाहरण के तौर पर पोमोर में 'सेमूझ्का' नाम का एक खेल है। इसमें खेलनेवाले दो-दो के जोड़े बनाकर, उठे हुए हाथों से बने दरवाजों के नीचे से गुज़र कर स्थानीय मछली पकड़ने के काम की नकल उतारते हैं। मानो सेमगा (मछली) जाल में फँसकर बाहर नहीं निकल पाती। ऐसा करके मानो खेलनेवाले मछली को दिखा रहे हैं कि उसकी क्या दशा होगी ? उसे जाल में आने का बुलावा दिया जाता

है। ऐसी खेलें भी हैं जिनमें “जादू-की” खरगोश, बटेर और अन्य जन्तु पकड़ने के पेशे की नकल की जाती है।

यह सब प्राचीन रस्म-रिवाजों के खेल हैं, जिनका कभी जादुई महत्व था और शिकारी के भावी शिकार पर जादू करना था। आज रूस में यह सब खेल केवल बच्चों और युवकों के मनव्रह्लाव तथा मनोरंजन की चीजें रह गये हैं।

प्राचीन खेलों में पारिवारिक जीवन सम्बन्धी विषयों का भी वर्णन था। युवक और युवती का विवाह, गृहस्थ-जीवन, प्राचीन गाँव में पति का पत्नी से बर्ताव—बहुत से सामूहिक खेलों में इनका चित्रण मिलता है। एक गीत में वर्णन आता है—

“चूतो पोद बेलोयू पोद बरयोज़ोय,  
चूतो पोद सीनेयू पोद ओसीनोयू ।  
उचील मुझ् भ्नेनू उग्रयूमूयू ।  
भ्नेनू उग्रयूमूयू, नेपोस्लूइनूयू.....”

अर्थात्—“कि सफेद भोजन-पत्र के पेड़ के नीचे,  
कि नीले ओसिन पेड़ के नीचे  
पति-पत्नी की मरम्मत कर रहा था, शोक-ग्रस्त पत्नी की,  
शोक-ग्रस्त पत्नी की, कहना न माननेवाली की.....”

गीत की ताल के साथ छुटनों पर हाथों से थपथप का शब्द किया जाता है।  
गीत आगे चलता है—

“चूतो भ्नेना मुझ् ने कोरीलास्या,  
स्वेकू बात्यूश्कये पोश् नोनीलास्या ।  
—स्वेकोर बात्यूश्का, दा उनीमाय सीना,  
उनीमाय सीना, दा मोयेब्रो मुझ्.....”

अर्थात्—“कि पति पति के सामने नहीं झुकी,  
समुद्र पिता के सामने छुटने टेक दिये ।  
—समुद्र पिता, हाँ रोको अपने बेटे को,  
हाँ रोको अपने बेटे को, मेरे पति को . . . .”

परन्तु जैसा कि गीत में वर्णन आता है, न ही समुद्र और न ही सास बिचारी पत्नी की सहायता करती है। गीत के दौरान में सब यही उत्तर देते हैं कि पति को अपनी इच्छा के अनुसार अपनी पत्नी को सजा देने का पूर्ण अधिकार है। और पति उसे मारना

तब छोड़ता है जब वह विवश होकर सब नाचने-गानेवालों के सामने उसके पाँव पकड़ती है ।

खेल-गीतों में कभी-कभी प्राचीन जीवन का पूर्ण चित्र हमारे सामने आ जाता है—एक युवती का जिसका एक बूढ़े के साथ ज़बर्दस्ती विवाह कर दिया जाता है, एक स्त्री का जो रात को चोरी-चोरी अपनी सहेलियों में जा बैठती है, लड़कियों द्वारा अपने रंगरूट मंगेतरों की विदाई है, इत्यादि इत्यादि । प्राचीन रूसी खेल-गीतों में जीवन के प्रायः सभी पहलुओं का वर्णन मिलता है और अनेक कलात्मक चित्रों का निर्माण होता है । लोक-खेल-गीत नृवंशशास्त्र के पण्डितों तथा लोक-साहित्यिकों के लिए एक अमूल्य सामग्री है ।

एक बूढ़ा जो दूल्हे का अभिनय कर रहा है और एक बुढ़िया जो उसकी माता का अभिनय कर रही है नाचते हुए तथा हाथ से विभिन्न मुद्राएँ बनाते गाते हैं । बूढ़ा दूल्हा गाता है—

“चूतो उभू या, मातूस्का, नू नेभ्नेनात खोभू,  
नेभ्नेनात खोभू, दा खोलोस्त गुल्यायू ?……”

अर्थात्—“बया अम्मा, अविवाहित घूमू,  
अविवाहित घूमू, हाँ कुँवारा घूमू ?”

बूढ़ी अम्मा उत्तर देती है—

—“आ ती भूनीस्, भूनीस् मोयो दीत्यात्को,  
आ ती रतूपाय-सखोदी व खोरोबोद क देवकाम……  
आ विबोराय सेब्ये, कोतोरा लुचइये फ्स्येख,  
कोया लुवइये फ्स्येख, दा दोच् बोयारस्काया ।”

अर्थात्—“तू विवाह करले, विवाह करले मेरे लाडले बच्चे,  
तू जा और लड़कियों के साथ नाच और गा……  
और उनमें से सबसे सुन्दर को दुलहिन चुन ले,  
सबसे सुन्दर, बोयार (सौदागर) की लड़की ।”

बूढ़ा दादा उल्लास में आकर खूब नाचता हुआ गाता है—

“आय म्न्ये पोनरावीलास् दोच् बोयारस्काया,  
ओय, लेल्यू, लेल्यू, दा दोच् बोयारस्काया”

अर्थात्—“मुझे पसन्द आगई लड़की बोयार की  
ओय लेल्यू, लेल्यू, लड़की बोयार की ।”

दूसरे लोग बूढ़े के साथ मिलकर ताल उठाते हैं। बूढ़ा खूब नाचता है।

आगे चलकर गीत से पता चलता है कि बोयार की लड़की अनपढ़, अकड़बाज और खराब मालकिन है। दूसरी मंगेतर, सोदागर की लड़की भी ऐसी ही निकलती है। दूल्हा घेरे में घूमकर अन्त में एक तीसरी लड़की को चुन लेता है जो वास्तव में बुद्धिमान और अच्छी मालकिन है।

“—आ म्न्ये नरावीलास् दा दोच् क्रेस्थान्स्काया,

नू, दोच् क्रेस्थान्स्काया इला ई बलान्यालास्

आय, मोन्ये, मोलोदत्सू, ओना पोनरावीलास् ।

आ, तेढ्ये मातूस्का, बूछेत पोमोश्चनीत्सा,

आ म्न्ये, मोलोदत्सू, बूछेत सोवेतनीत्सा ।”

अर्थात्—“हाँ, मुझे पसन्द आ गई लड़की किसान की,

हाँ लड़की किसान की चली और झुकी,

आए, मुझे, युवक के, वह पसन्द आ गई ।

और तुम्हारी, अम्मा वह मददगार होगी,

और मुझ जवान को सलाह देने वाली……”

नृत्य-गीतों की भी अपनी विशेषता है। इनके पद छोटे-छोटे और सहज होते हैं और विनोदपूर्ण और तेज। नृत्य-गीत का तालयुक्त होना आवश्यक है ताकि उस पर उसी प्रकार नाचा जा सके जैसा कि वाद्य-संगीत पर। कथावस्तु उनकी विभिन्न हो सकती है, कभी-कभी तो सर्वथा परस्पर असम्बन्धित होती है। इसका कारण यह है कि नृत्य-गीतों में प्रायः कई छोटे-छोटे पद जोड़ दिये जाते हैं, जिनके विषय विभिन्न होते हैं परन्तु ताल एक-सी ही होती है।

अब एक विनोदपूर्ण नृत्य-गीत देखिये। इसकी ताल इतनी तेज है कि इस पर अधिक देर तक नाचना एक साधारण व्यक्ति की शक्ति से बाहर है। नाचते-नाचते साँस फूल जाता है। पदों का एक दूसरे से सम्बन्ध नहीं।

“ओजेरो शीरोको,

दा बेलोय रीबी मनोगो,

ओय बेला रीबा इच्छूका,

दा बेलाया बेलूगा ?

ओय, बेलाया, बेलाया,

दा बेबीत्सा मीलाया,

बेबीत्सा मीलाया,

दा रादोस्त्य दोरोगाया ।  
 कुवा म्न्ये-का सेस्ती,  
 कुवा म्न्ये प्रीसेस्ती ?  
 स्यावू या प्रीस्यावू  
 दा ना दास्, ना दोलीन्कू  
 ना वाल, ना दोलीन्कू  
 क मोलोम् ना ओपीन्कू .....”

अर्थात्—“भील विशाल  
 सफेद मछलियाँ बहुत हैं,  
 आई सफेद मछली इच्छका  
 हाँ सफेद ह्वेल,  
 ओय सफेद सफेद  
 हाँ कुंवारी प्यारी  
 कुंवारी प्यारी,  
 हाँ, प्रसन्नता प्यारी,  
 में कहाँ बैठूँ ?  
 में कहाँ बैठूँ ?  
 बैठूँ और पास बैठूँ  
 हाँ, दूर वादी में  
 दूर वादी में  
 प्रियतम के रास्ते में....”

प्राचीन विवाह-गीतों की तरह प्राचीन खेल तथा नृत्य-गीतों का भी लोप नहीं हुआ । उनमें से बहुत से विनोदपूर्ण गीत अब भाव-गीतों में परिणत हो चुके हैं । अब उनके ताल पर नाचा नहीं जाता प्रत्युत काम करते, सैर-सुपट्टा करते और आराम करते अन्य भाव-गीतों की भाँति गाया जाता है । रूसी जनता को यह अब भी उसी तरह पसन्द है जैसा कि प्राचीन काल में । यह गीत अब भी रूसी जनता के लिए विनोद तथा मनोरंजन की सामग्री प्रस्तुत करते हैं ।





११

## चास्तूश्की

चास्तूश्की रूसी लोक-गीतों का एक सर्वप्रिय प्रकार है। यह अत्यन्त संक्षिप्त प्रायः चार पंक्तियों का होता है। इसे लोग बाजे के साथ चलते हुए या नाचते हुए गाते हैं। इनको “कोरोतूश्का”, “प्रबूतीरका”, “प्रोगूदका” भी कहते हैं।

इसका विशेष लक्षण इसका छोटापन और ताल है। चास्तूश्का याद रखने और गाने में बड़ी सहज है। छोटी-छोटी पंक्तियों में बहुत कम शब्द होते हैं। इसीलिए उपयुक्त सूचक तथा तीखे पात्र चुने जाते हैं। चास्तूश्की की रचना इस प्रकार से होती है। उसमें अभिव्यक्त की जाने वाली भावना किसी न किसी कलात्मक चरित्र से मेल खाती है जिसको अक्सर प्रकृति से लिया जाता है। प्रफुल्लित गुलाब या अन्य फूल, ताजी और हरी घास, पुलकित तरण भोजपत्र का पेड़ भाग्यशील अनुभूतियों का प्रतीक हैं। मुरझाया हुआ या पाँव से रौंदा हुआ फूल या घास, गंदला पानी, ठण्ड, बर्फ़ और बादलों का सम्बन्ध ऐसी शोकजनक भावनाओं से है और वे शोकातुर अनुभूतियों का प्रतीक हैं।

आधुनिक चास्तूश्की में इन सब चरित्रों का बड़ी पटुता से प्रयोग किया जाता है। इसलिए न केवल अपनी कथावस्तु के आधार पर जिसके द्वारा हम ग्राम-जीवन के सब पहलुओं से जानकारी प्राप्त करते हैं, प्रत्युत अपनी कलात्मक विशिष्टता के कारण भी दिलचस्प और प्रमूल्य हैं। यह वास्तविक काव्य-कृतियों तथा लोक भावगीत रूपी

छोटे-छोटे हीरे हैं। इन गीतों को पढ़ना अत्यन्त कठिन है। उनको पुलकित आवाज में गाने को जी करता है। उनकी ताल इतनी मधुर और सरल है कि उस पर नाचने को मन विवश हो उठता है।

चास्तूश्कियाँ शहर में अपेक्षाकृत कम गाई जाती हैं। उनकी रचना गाँवों में होती है। उनके ताल पर नाचा जाता है। जलसों और सैर-सुपट्टा करते समय उनसे आनन्द उठाया जाता है। चास्तूश्की गाँवों में युवकों के खुशी मनाये जाने वाले जलसों का एक आवश्यक अंग है।

गाँव में लोग चास्तूश्कियाँ चिरकाल से जानते हैं। लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व भी लोग आधुनिक चास्तूश्कियों जैसे दो या चार पंक्तियोंवाले गीतों की ताल पर सव्यात्काओं तथा बसन्त में सैर-सुपट्टा करते हुए भी नाचा करते थे। यह छोटे-छोटे नृत्य-गीत धीरे-धीरे युवक और युवतियों की सहानुभूति का पात्र बनने लगे। उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान में चास्तूश्कियाँ बड़ी संख्या में रची जा चुकी थीं।

चास्तूश्कियों के सर्वप्रिय होने का कारण यह था कि इनमें प्रायः मनोभावनाओं की बड़ी सुन्दर अभिव्यक्ति तथा काव्य-चरित्रों का चित्रण होता था। एक चास्तूश्की में आता है—

“गद्ये मी स मीलेन्कीम वस्त्रेचालीस्—

ताम त्स्वेतोचकी रासत्स्वेली।

गद्ये मी स मीलीम रासस्तावालीस्—

मूतनी रेचकी प्रोतेकली।”

अर्थात्—‘जहाँ मैं प्रियतम से मिली थी

वहाँ फूल खिल उठे।

जहाँ मेरा प्रियतम बिछड़ा था—

गँदले नाले बहने लगे।”

एक दूसरी चास्तूश्की कहती है—

“व पोत्ये बेलाया बेर्येजीन्का

पोग्याला ऊ मेभी।

ओतचेवो ती ने प्रीखोदीश,

सेरोग्लाजीनकी स्काभी।”

अर्थात्—‘खेत में सफ़ेद भोजपत्र का पेड़ है

वह मेंड़ पर मुरझा गया है।

तू क्यों नहीं आता,  
भूरी आँखों वाले, बता ।”

एक और चास्तुस्की है—

“नाबो भोत्य ई बेसेलीस्ता  
पोका मोलोबोस्त्य् इद्योत ।  
काक बोबोत्सा पो पेसोचकू  
नाशा मोलोबोस्त्य् प्रोइद्योत ।”

अर्थात्—“जीना चाहिए और आनन्द मनाना चाहिए  
जब तक जवानी है ।  
जैसे रेत में से पानी  
हमारी जवानी चली जायगी ।”

“या नादेनू बेलो प्लात्ये,  
स्तानू लेबेदीनोचेका,  
पोलेचू या व तू स्तोरोःकू,  
गद्ये मोय यागोदीनोचका ।”

अर्थात्—“मैं सफेद कपड़े पहनूँगी  
हंसिनी बन जाऊँगी  
मैं उस और उड़ जाऊँगी  
जहाँ मेरा प्रियतम है ।”

चास्तुशिक्यों की रचना विभिन्न विषयों पर की जाती है । प्राचीन स्त्री-जीवन के बारे में, रंगरूटों के बारे में, प्रियतम के बारे में, सेना के बारे में इत्यादि, इत्यादि । क्रान्ति-पूर्व रूस में लड़की का विवाह उसकी इच्छा के विरुद्ध किसी रईस से कर दिया जाता है । लड़की रोककर एक चास्तुस्की में कहती है—

“त्यातेन्का ई मामेन्का,  
स्वास्त्या उबावस्याइत्ये ।  
कोवो ल्यूबल्यू ई सोभालेयू,  
स त्येम ने पोवेनचाइत्ये ।”

अर्थात्—“चाची और अम्मा  
सौभाग्य नष्ट कर रही हो

जिसको प्यार करती हूँ और चाहती हूँ  
उसके साथ क्यों विवाह नहीं करती ?”

एक दूसरी गरीब लड़की एक अमीर से प्रेम करती है। परन्तु माता-पिता के पास उसके दहेज के लिए पैसा नहीं। लड़की एक चास्तूस्की में अपने प्रेम की अस-फलता प्रकट करती है—

“पोल्युबोला इज कौंतोरी—  
ने पोपाला जा नेवो।  
नेख्वातोली कापीतालू  
ऊ पापाशी मोयेवो”

अर्थात्—“एक दफ़तरवाले से प्रेम किया  
उसके साथ विवाह नहीं हुआ।  
पैसे का घाटा था  
मेरे पिता के पास।”

एक लड़की अपने पति को विदा कर रही है—

“मी स मीलेनोवकोम प्रोश्चालीस्  
ओबा स्लेज़नो प्लाकाली।  
मोई स्लेज़ी वोरोगोमू,  
ना कोलेनो कापाली।”

अर्थात्—“मैंने प्रियतम को विदा किया,  
दोनों आँसू भर रोये।  
मेरे आँसू प्रियतम के  
घुटनों पर पड़ रहे थे।”

कोलखोज़ों (सामूहिक फारम) में चास्तूस्कियाँ गाने का बड़ा रिवाज है। उनका विषय भी प्रायः नवनिर्मित कोलखोज़ी जीवन ही होता है—

“पो जावेतू लेनिना,  
पो सोवेतू स्तालिना,  
मी पोस्त्रोइली कोलखोज़ —  
वेरनी पुत्स्य क्रेस्त्यानीना।”

अर्थात्—“लेनिन के आदेश से  
स्तालिन की सलाह से,

हमने सामूहिक फारम बनाये—  
किसानों का विश्वस्त मार्ग ।”

एक और चास्तूश्की में किसानों के ऐश्वर्यपूर्ण जीवन का वर्णन है—

“भी जाभीतोचनीभी स्ताली,  
खोरोशो भीव्योम् सेइचास ।  
ऐतो ती तोबारीश्च स्तालिन,  
ओत नूभूदी इज्जबावील नास ।”

अर्थात्—“अब हम अमीर हो गये हैं,  
अब अच्छी तरह रहते हैं,  
यह तूने साथी स्तालिन  
हमारी आवश्यकताओं को पूर्ण किया है ।”

लड़ाई के दौरान में बहुत सी चास्तूश्कियों की रचना हुई । सैनिक और नर्स आदि वहाँ चास्तूश्कियों की रचना करते और गाँव भेज देते । ऐसी दो चास्तूश्कियाँ नीचे दी जाती हैं—

“गितलेर, नेमेत्स, साताना,  
इज्ज-जा तेव्या इद्योत वोयना ।  
काबी ती ने साताना—  
बावनो बी कोन्चीलास् वोयना ।”

अर्थात्—“हिटलर, जर्मन, शैतान,  
तेरे कारण युद्ध हो रहा है ।  
यदि शैतान तू न होता—  
युद्ध कभी का समाप्त हो गया होता ।”  
बेसेलेय इप्राय गारमोश्का,  
राजलीवायस्या गोलोस मोय ।  
निकाकोय नाम व्राग ने स्त्राइयेन—  
स नामी स्तालिन दोरोगोय ।

अर्थात्—“आनन्द के सुर निकाल, हारमोनियम,  
फैल जा, मेरी आवाज ।  
हम किसी भी शत्रु से नहीं डरते—  
हमारे संग प्रिय स्तालिन हैं ।

चास्तूस्का गाँव के लोगों के मन में उद्वेग उत्पन्न करने वाले सब विषयों का वर्णन करता है। यदि प्राचीन समय उसमें प्रधानतः पारिवारिक तथा तरुण जीवन का वर्णन किया जाता था तो १९१७ के पश्चात् उसका विषय काफ़ी व्यापक हो गया।

क्रान्ति-पूर्व चास्तूस्का में क्या वर्णन किया जाता था ? गाँव में वह एक दूसरे के प्रति भावनाओं की अभिव्यक्ति तथा माता-पिता द्वारा की गई जबर्दस्तियों के विरुद्ध शिकायत का माध्यम था। प्रायः चास्तूस्का में हँसी उड़ाई जाती थी तथा निन्दा की जाती थी—हठी और अहंकारी लड़कियों और आलसी युवकों पर टीका-टिप्पणी की जाती थी।

“उभू ती, कात्या, ने फोरसी,  
नोस बीसोको ने नोसी।  
स्वोयू श्योलकोव्यू कोफतोचकू  
पो बुदन्याम ने नोसी।”

अर्थात्—“ओह तू कात्या फूँ फूँ न कर,  
नाक ऊँचा करके, मत चल।  
अपने सिलकी जम्पर को  
काम करने वाले दिन मत पहन।”

“पेत्या ल्यूबीत, पेत्या जनायत  
व बालालायचकू इग्रात्य्।  
तोल्को पेतेंका लेनीबी—  
पोल्या नेकोग्दा वस्पाखात्य्।”

अर्थात्—“पेत्या पसन्द करता है, पेत्या जानता है  
वालालाइका बजाना।  
परन्तु पेत्या आलसी है—  
खेत में हल कभी नहीं जोतता।”

मजदूरों द्वारा रचित चास्तूस्कियों में ज़ार और सरमायादारों की सत्ता पर असन्तोष और विरोध प्रकट किया जाता था। उनमें उनके अत्याचार और तानाशाही हुकूमत की निन्दा की जाती थी।

पिछले वर्षों चास्तूस्कियों की स्वच्छन्द गुँजार हो रही है। वर्ष-प्रतिवर्ष उसका दायरा व्यापक और गहरा होता जा रहा है। चास्तूस्की ग्राम-परिवार तथा सैर-

सुपट्टे का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन चुका है। वह समस्त देश में घूम गया है और अपनी इस दौड़ के दौरान में वह सब बातों का निरूपण करते तथा उनको ग्रहण करते-करते अपनी पंक्तिओं में अपनी यात्रा का सूक्ष्मतम विवरण छोड़ गया। लड़ाई में लम्बे-लम्बे गीतों की रचना के लिए अवकाश नहीं था परन्तु छोटी-छोटी चास्तूदिकियों की रचना बड़ी सहज थी।

क्रान्ति के पश्चात् रचित सबसे पहिली चास्तूदिकाएँ जो संग्रहकर्ता अपनी कापियों में लिपिबद्ध करने में सफल हुए, दिलेरी और जीत में पूर्ण विश्वास से ओतप्रोत थीं। लाल गार्द फ्रीज शत्रुओं से युद्ध करने निकली।

“एल्ल, ती, वान्यूस्का गोलूबचीक,  
वान्या स्लावनी पोवातीम।  
वोल्न्योम, वान्या, पो बिस्तोवक्ये,  
दा ना बेलीख पोकातीम।”

अर्थात्—“ओह तू वान्यूस्का, प्रिय,  
अच्छे वान्या, आओ भाई भाई बन जावें।  
आओ, वान्या, बन्दूकें सँभालें,  
और सफेदों पर चढ़ाई करदें।”

“ती ने प्लाच् रोदनाया त्योत्का,  
ने स्कूचाय, रोदनाया मात्य।  
पेरेव्योम बेलोबान्दीतोव—  
ई बेरनूस दोमोय ओप्यात्य।”

अर्थात्—“मत रो प्यारी चाची,  
मत उदास हो प्यारी माँ।  
मार भगायेंगे सफेद बदमाशों को—  
और फिर घर लौट आवेंगे।”

और फिर सामूहिक फारम बनाने का समय आ गया। गाँव में सामूहिक फारम बनाने के लिए कड़ा संघर्ष हुआ। कुलाक बराबर विरोध कर रहे थे और जैसे-तैसे करके अपना बचाव कर रहे थे, परन्तु आखिरकार उन्हें हथियार डालने पड़े।

“काक ना दाल्न्येम ना बोलोश्ये  
उतोचकी ज़ाक्याकाली।

बेवग्याकी पोशली व कोलखोज,  
कुलाकी ज़ाप्लाकाली”

अर्थात्—“जैसे दूर दलदल में  
बतखें कड़कड़ करती हैं ।  
गरीब सामूहिक फारमों में चले गये  
और कुलाक रोने लगे ।”

नये गाँव में खुशी का प्रवाह व्यापक रूप से होने लगा । प्राथमिक कठिनाइयों के पश्चात् किसानों को पता चला कि सरकार ने उन्हें सचमुच ठीक रास्ते पर चलने की सलाह दी थी । और चास्तूस्की ने तुरन्त इसकी ओर ध्यान दिया—

“रान्श्ये भोली ओदीनोचकू  
येली काशू पीली क्वास  
आ तेपेर् उ नास व कोलखोज्ये  
खलेबा बेलोबो ज़ापास”

अर्थात्—“पहले अकेले रहते थे,  
काशा खाते थे, क्वास<sup>१</sup> पीते थे  
और अब हमारे सामूहिक फारम में  
सफेद<sup>२</sup> रोटी का ज़खीरा है ।”

नयी आर्थिक व्यवस्था को ठीक प्रकार से चलाने के लिए उसे वैज्ञानिक ढंग पर स्थापित करना था । खेती-बाड़ी, पशु-चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी विज्ञानों से जानकारी प्राप्त करनी थी । कोलखोजियों ने तुरन्त इसकी आवश्यकता को समझ लिया—

“कृतो नादेयेत्सा ना नेबो—  
तोत ओस्ताग्येत्सा ब्येज खलेबा ।  
मी नाऊकू उवाभ्येम—  
जनाचीत बूद्येम स उराभ्येम”

अर्थात्—“जो आकाश पर आशा रखता है—  
उसके पास अनाज नहीं होता ।

- 
१. काशा और क्वास गरीबों का भोजन है ।
  २. सफेद रोटी धनी लोग खाते हैं ।

हम विज्ञान का सम्मान करते हैं—

इसका अर्थ है हमारे यहाँ फसल होगी ।”

कोलखोज़ों में खेती-बाड़ी सम्बन्धी शिक्षा शुरू करने के विषय में चास्तूस्की ने हमें इस प्रकार बताया । सब गाँवों में स्कूल, क्लब और पाठशालाएँ खुल गईं । युवक तथा बूढ़े नव-संस्कृति की ओर मन लगाकर जुट गये । देश में शिक्षा का प्रसार होने लगा, यहाँ तक कि बूढ़े भी पढ़ने लग गये । एक चास्तूस्की बताती है—

“पोस्मोन्नोत्ये-का रेब्याता,

चतो उ नास त्वोरोत्सा ।

नाशी बाबूपूकी पोश्ली

ग्रामोत्ये उचीत्सा ।”

अर्थात्—“जरा देखो तो, बच्चो,

हमारे यहाँ क्या हो रहा है ?

हमारी बूढ़ियाँ भी चलीं

शिक्षा प्राप्त करने ।”

केवल लड़के ही नहीं, लड़कियाँ भी चिरकाल से शिक्षित हो चुकी हैं । यदि पिता इस कारण असंतुष्ट हैं कि उसकी लड़की ने घर से बाहर बहुत समय बिताया है, तो लड़की उत्तर देती है—

“ने सेदीस्, रोदीमी पापेन्का,

चतो दोमा ने सीझू ।

या व चिताल्म्ये जानीमायूस,

जा पोलीतीकोय स्लेझू ।”

अर्थात्—“क्रुद्ध मत हो, प्यारे पिता,

कि घर नहीं बैठती ।

मैं पुस्तकालय में जाती हूँ

और राजनीतिक खोज करती हूँ ।”

इन छोटी-छोटी चास्तूशिकियों में प्राचीन जीवन में वृहद् परिवर्तन तथा नयी संस्कृति के वृहद् प्रभाव का वर्णन है । पारिवारिक जीवन अब पूर्वजों के प्राचीन असूलों पर नहीं चलता । अब किसी की मजाल नहीं कि लोभ में आकर लड़की का ऐसे पुरुष के साथ विवाह करदे जिसे वह चाहता न हो । अब लड़की पहले की तरह अपने परिवार की ही नहीं, प्रत्युत समस्त देश तथा समाज की मित्त्रियत है ।

वह अब अधिकारहीन तथा डरी हुई लड़की नहीं प्रत्युत समानाधिकार वाली, नये जीवन की सृष्टा सोवियत लड़की है। अब अमीर और गरीब का सवाल नहीं है। गर्वित और आनन्दित वह अपनी सहेलियों से कहती है—

“ने स्मोत्रीत्ये ना मोन्या,  
चतो प्लातीत्ये स ज़ाप्लात्कोय ।  
मोन्या विबीराली व्चेरा  
भ्ने नस्कोय देलीगात्कोय ।

अर्थात्—“मुझे मत देखो,  
कि कपड़ों पर पेवन लगी है ।  
मुझे चुन लिया है कल  
महिलाओं के डेलीगेशन में ।”

स्त्री अब अपने पति का समानाधिकार वाला शक्तिशाली साथी है। अब वह पहले वाली घर की मालकिन नहीं जिसको अपनी रसोई तथा बच्चों के अतिरिक्त किसी बात से मतलब नहीं है। अब उसके जुम्मे और भी बहुत से काम और उत्तरदायित्व हैं।

“ना वेसेली ना मोतीव  
ज़ावेद्योम गाल्यानोचकू ।  
प्रदसेदात्येस्येम व सोवेत  
विबीराली क्रैस्त्यानोचकू.....”

अर्थात्—“आनन्दवर्धक ताल पर  
ले जाते हैं गाल्या को  
सोवियत का प्रधान  
चुन लिया किसान की लड़की को ।”

देश में घटित कोई भी प्रमुख घटना चास्तूस्की की नज़र से नहीं बची। देश में पुश्किन की जयन्ती मनाई जा रही थी। चास्तूस्कियों में गाया गया—

“अलेक्सान्बर सर्गैइच पुश्किन,  
येस्ली बी ती सेवोद्व्या भ्नील ।  
ती नावेरनो बी चास्तूस्की  
द्वल्या वेरेबनी सोचीनील ।”

अर्थात्—“अलेक्सान्द्र सिरगेइच पुष्किन

यदि तू आज जीवित होता,  
तो अवश्य ही चास्तूशिक्यें  
गाँव के लिए रचता ।”

चाहे मैचूरिन नये प्रकार के फल और रसभरियों की ईजाद करता है, चाहे देश की आर्थिक व्यवस्था के लिए आवश्यक बाकूमें तेल के नये कुएँ खोले जाते हैं, चाहे भिन्न विदेशी लोग सामूहिक फारम देखने आते हैं—चास्तूशकी इन सब का निरीक्षण करता है और इन सब के बारे में लोगों के मुँह से अपनी राय प्रकट करता है ।

यदि गाँवों में पहले ज़ार के रंगरूटों और सिपाहियों के बारे में शोकजनक चास्तूशिक्यों की रचना की जाती थी तो आज सेना की नौकरी करना गौरव की बात है ।

भाइयों और मँगैतरों को सेना में विदा करती हुई लड़कियाँ अब पहले की तरह आँसू नहीं बहातीं, प्रत्युत उन्हें इस बात पर खेद है कि वे स्वयं गाँव में ही रह गई हैं ।

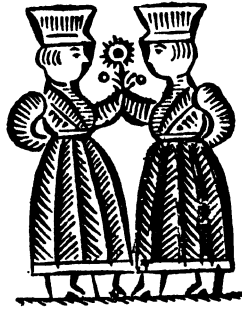
“स्कोरो व आर्मीयू मीलेन्का  
ना द्वा गोदा प्रोबोझू ।  
झाल, पोद प्रीजीव, काक देवचोन्का,  
या सामा ने पोदखोझू ।”

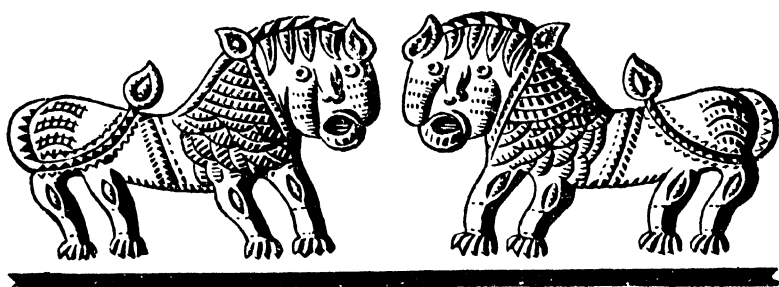
अर्थात्—“जल्दी ही सेना में प्रियतम को  
दो वर्ष के लिए विदा करूँगी ।  
खेद है कि आमंत्रण पर मैं लड़की होने के  
कारण (भरती के) स्वयं उपयुक्त नहीं ।”

और लड़कियाँ जानती हैं कि युवक सेना से अधिक जवान, शिक्षित और योग्य बनकर लौटेगा । वे अपने मँगैतर से कहती हैं—

“मीली मोय खोरोशी मोय,  
मी रास्स्तान्येमसा स तोबोय ।  
फ्स्ये नाउकी इज्जचाय,  
कोमान्दीरोम प्रीयेज़झाय ।”

अर्थात्—“मेरे प्रियतम, मेरे सुन्दर  
हम जुदा होते हैं ।  
सब विद्याएँ पढ़ना,  
कमाण्डर बनकर लौटना ।”





१२

## बुभारत

रूसी बुभारतें लोक-साहित्य का एक रोचक प्रकार हैं और अपनी कथावस्तु और जन्म के आधार पर लोक-साहित्य का यह प्रकार विविध-रंगा है। बुभारतों का जन्म भी गहन-प्राचीनता में हुआ है और ये चिरकाल से जन-सम्पत्ति रही हैं। बुभारतों के मूल में आदिम-पुरुष की प्रकृति और उसके रूपों के विषय में अंधविश्वास है। सुदूरभूत में मनुष्य वस्तुओं को इस दृष्टि से नहीं देखता और समझता था, जिस प्रकार हमें आज विज्ञान सिखाता है। इसके विपरीत वह उनको उस दृष्टि से देखता था जिस तरह उसके आस-पास के संसार के डरावने और न समझ में आने वाले रूपों का उसकी कल्पना चित्रण करती थी। यही कारण है कि प्रकृति विषयक बहुत सी बुभारतें संक्षिप्ताकार की छोटी-छोटी कल्पित कथाएँ हैं जिनमें रूसी पूर्वजों की आदिम कल्पनाओं का प्रतिबिम्ब है।

प्रकृति, उसके रूप और शक्ति, स्वयं मानव, उसका कारोबार, घर और पालतू पशु, पक्षी और अन्य वस्तुएँ—इन सबने उसकी कल्पना और चित्रमय विचारशीलता के लिए सामग्री का काम दिया है। और इन सब ने बहुत ही रोचक और प्रायः जटिल और सुन्दर बुभारतों का निर्माण किया है।

आजकल बुभारत मनबहलाव और बुद्धि की आसान और विनोदपूर्ण खेलों का काम देती है। गाँव में बच्चे इससे आनन्द उठाते हैं और बूढ़े और बुढ़ियाँ भी इसे मुस्कराहट से स्मरण करते हैं। शहर में भी बुभारत बहुत पसन्द की जाती है, क्योंकि यह मनोविनोद का साधन है।

परन्तु प्राचीन काल में बुभारत एक बहुत गम्भीर उद्देश्य की पूर्ति करती थी। लोक-साहित्य की अन्य प्रकारों—कल्पित कथाओं और कहानियों—ने इह-विषयक प्रमाण सुरक्षित कर रखे हैं।

बुभारतें बूझना बुद्धि की परीक्षा करना था। कल्पित कथाओं के अनुसार इस परीक्षा में उत्तीर्ण न होने वाले को कभी-कभी अपने जीवन तक से हाथ धोना पड़ता था।

कहा जाता है कि यूनान के प्राचीन शहर फीव के समीप सड़क पर एक पहाड़ी पर एक डरावना देव—सर्फिक्स—आ बसा। उस सड़क से जो भी कोई शहर को आता, सर्फिक्स उससे बुभारतें पूछा करता था और जो कोई बुभारतें न बूझा सकता वह उसको खाकर हड़प कर जाता। उसके पाँवों के नीचे सारी पहाड़ी मानव हड्डियों से भर गई थी।

फीव शहर को यह इस अपराध का दण्ड मिला था कि उसने किसी बात से मार्स देव को नाराज कर दिया था।

समस्त देश में मातम छाया हुआ था। सारी जनता दुखी थी और मृतकों के प्रति विलाप कर रही थी।

परन्तु एडिप नामक बुद्धिमान युवक सर्फिक्स से लोहा लेने से ज़रा भी भयभीत नहीं हुआ। वह पहाड़ी पर गया और सर्फिक्स ने उससे भी बुभारतें पूछी—

“मुबह को चार, दिन में दो और रात को तीन टाँगों पर कौन चलता है?”

“मनुष्य”—एडिप ने उत्तर दिया। “बचपन में वह चार टाँगों पर चलता है, युवावस्था में दो टाँगों पर और बुढ़ापे में लाठी का सहारा लेकर तीन टाँगों पर चलता है।”

सर्फिक्स उस पहाड़ी से चला गया और सागर में जाकर डूब मरा।

यह प्राचीन यूनान की एक कल्पित कथा है। रूसी तथा दूसरी जातियों की बहुत सी लोक-कथाओं में वर्णन आता है कि नायक और नायिका को बुभारत बुझानी पड़ती थीं। कभी-कभी एक के बाद दूसरी, तीसरी और फिर वह पुरस्कार रूप में मोगेतार बनकर समूचे राज्य और अन्य वांछित वस्तुओं का अधिकारी बनता था। इन कहानियों और कल्पित कथाओं से यह पता लगता है कि प्राचीन काल में छोटी-छोटी बुभारतों को आज की अपेक्षा बहुत महत्ता दी जाती थी।

आजकल बुभारतें बूझने पर पुरस्कार देने की प्रथा न ही रूसी शहरों में है और न ही गाँवों में है, परन्तु विनोदपूर्ण रोचक बुभारतें सर्वत्र सर्वप्रिय हैं। एक बुभारत है :

“चेतीरये चेतीरकी,  
दा द्वे रास्तोपीरकी ।  
ओदीन वेरतोक,  
वा द्वा प्रतीशका ।”

चार चौकड़ियाँ, और दो खूंटियाँ, एक झाड़ू और दो सलाखें ।  
इसका हल है “बिल्ली” । उसके चार टाँगें हैं, दो कान, एक पूँछ और दो मूँछें हैं ।

“प्यात्य्बेस्यात् पोरस्यात,  
व ओदीन गोलोस गोलोस्यात ।”

अर्थात्—गचास पैदा होते हैं और एक जवान से बोलते हैं ।

यह एक और बुभारत है जिसका हल है—“पत्थरों से बनी गुसलखाने की अँगोठी ।” वह खूब तपती है । सब पत्थरों में से भाप उड़ती है । उन पर ज़रा पानी डालिये, पत्थरों पर एकदम सूँ सूँ की आवाज़ आवेगी ।

गाँव में सब प्रौढ़ लोग बुभारतें जानते हैं । इसलिए उनको ढूँढना और लिखना कोई कठिन काम नहीं ।

सभी बुभारतों की कथावस्तु भिन्न है । उदाहरण के तौर पर उनमें से बहुत सी बुभारतें प्रकृति विषयक तत्सामयिक दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करती हैं । जब मनुष्य उसकी शक्ति का जीवित प्राणियों के चरित्र अथवा मनुष्य को सुपरिचित वस्तुओं के रूप में वर्णन किया करता था ।

“च्योर्नया कोरोवा फ्स्येख पोबोरोला,  
बेलाया कोरोवा फ्स्येख पोदन्याला”

अर्थात्—काली गैया ने सबको दबोच लिया  
सफ़दे गैया ने सबको उठा दिया । (रात और दिन)

“द्वेस्ती ओव्येत्स ओदीन पास्तूख पास्थोत”

अर्थात्—“दो सौ भेड़ों को अकेला चरवाहा  
चराता है । (तारे और चाँद)

“रास्तिपालसा गोरोक  
ना सेमदेस्यात् बोरोग  
निक्तो ने सोबेरयोत ।”

अर्थात्—दाने बिखर गये  
सत्तर रास्तों पर  
कोई नहीं इकट्ठा करता । (तारे)  
“इथील दोल्गोभ्याज  
व सीरु जेमल्यू उव्याज”

अर्थात्—लम्बा-तड़म्बा चला  
भूमि को गीला कर गया । (बर्षा)  
“लेताल पोरखान  
पो फ्स्थेय गोरोबाम्  
व्येज पोल काफतान  
इ बोज पुगोबित्स”

अर्थात्—ऊड़ा पक्षी  
सब शहरों पर  
बिन-पलङ्ग कोट  
ग्रीर बिन बटन । (बर्फ)  
“माल मालीचोक  
मोस्तिल मोस्तोचोक  
व्येज भ्नेरछेव, व्येज कोल्येव, व्येज तोपोरा”

अर्थात्—नन्हें से नन्हें  
पटङ्गी पर फर्श लगा गया  
बिना तैसी, बिना पत्थरफोड़, बिना हथोड़ा (तुषार)  
“व्येज रुक, व्येज नोग, वोरोता मोतवोरयायत”

अर्थात्—बिना हाथ, बिना पाँव  
किवाड़ खोल देती है । (हवा)  
काई, पत्ते और पेड़ भी जीवित प्राणी दिखाई पड़ते हैं :  
“स्तोइत् काज्योल नाव बोदोय  
त्र्यास्योत बोरोदोय”

अर्थात्—पानी पर बकरा खड़ा है,  
दाढ़ी हिला रहा है । (दलदल पर काई)

“पान-पानोविच  
पाल व कोलोद्येत्स,  
साम ने पोतोन्ल—  
इ बोदी ने समतील ।”

अर्थात्—पान-पानोविच

कुए में गिर पड़ा,  
स्वयं नहीं डूबा—

और पानी भी गँदला नहीं किया । (पानी में गिरा पत्ता)

बुभारतों में बर्फ और उसमें पड़े सुराख भी आपस में बोलते हैं । बर्फ पिघल जाती है और किनारे से दूर तैर जाती है । साथ-साथ बर्फ में पड़े सुराख भी गायब हो जाते हैं । जाते हुए सुराख अगली सर्दी को वापस लौटने का वायदा करते हैं । बुभारत ने इसका इस प्रकार चित्रण किया है—

“सुन्दूचिखा पोयेन्नभायत  
कोलपाचिखा परोवोभायतः  
—प्रोस्ती, प्रोस्ती, कुमा,  
ना नोवी गोद बूदू—  
तेब्या ने जाबूदू ।

अर्थात्—सन्दूक वाला जा रहा है

टोपी वाला बिदा कर रहा है :

—क्षमा, क्षमा, समधि,

नव-वर्ष पर आऊँगा—

तुझे नहीं भूलूँगा ।

समस्त जीवन के आधार रूसी पूर्वजों के गृहस्थी के ढाँचे पर भी बहुत सी बुभारतें हैं । व्यापार, शिकार तथा व्यापारिक वस्तुओं के विषय में भी बुभारतें हैं—

“श्योल या पो-तोप-तू,  
उबीबेल बाराख-ताख-तू ।  
येस्ती बी ने मूख-ताख-ता,  
सयेला बी बाराख-ताख-ता ।”

अर्थात्—मैं टप-टप करता जा रहा था

मखमल वाला मिला

यदि कुत्ता न होता  
तो मखमल वाला खा जाता ।

इस जटिल बुभारत को इस प्रकार बूझा जाता है—शिकारी शिकार को जा रहा है । रीछ को देखता है, उसकी रक्षा कुत्ता करता है जो रीछ को भगा देता है ।

“ऊनास व पोवपोल्ये  
पिरोग स मार्कोव्यू ।  
खोच्येत्सा येस्त्य्,  
दा ने खोच्येत्सा लेज्जत्य् ।”

अर्थात्—हमारे भोरे में  
गाजर वाली कचौड़ी है ।  
खाने को जी करता है,  
परन्तु नीचे उतरने को जी नहीं करता । (मछली पकड़ना)

“कलान्यात्सा, कलान्यात्सा  
प्रिव्योत दोमोय-रास्तान्यात्सा”

अर्थात्—भुक-भुक कर नमस्कार करता है  
घर आता है—लेट जाता है । (लकड़ी काटने का कुल्हाड़ा)

“सेला कूरीत्सा ना वेशाला,  
क्लिया दो जेमली पोवेशेन्नी”

अर्थात्—मुर्गी कीले पर बैठ गई,  
पंख भूमि तक लटक गये ।

(बाँस पर सूखने के लिए डाला हुआ मछली पकड़ने का जाल)

रूसी पूर्वजों के मूलाधार खेती-बाड़ी के सम्बन्ध में भी बहुत सी बुभारतों की रचना हुई है—

“लेतेली गूस्की  
दूबोबी नोस्की,  
पेली : ताती-लाती, ताती-लाती”

अर्थात्—उड़ी बतखें  
काठ की चोंचें,  
गाती थीं ताती<sup>१</sup>-लातीं ताती-लातीं । (अनाज कूटना)

१. निरर्थक शब्द ।

“वीरबल्यू तूपेत्स-दूबेत्स  
 प्रिब्यू फ् स्येख तातार-बोयार ।  
 फ् स्ये गोलोबी प्रीबीती ।  
 इचीतोम पोक्रोत्ती ।”

अर्थात्—काट दूँ दूँ ठ-पेड़ को,  
 मार दूँ तातारी-बोयारों को ।  
 सब के सिर टूट गये,  
 ढाल से ढक गये । (कूटी और इबट्टी की गई राई)

“येखाला सक्रिपोलिस्ता  
 बेजला बेजला कोर्मोलिस्तू ।  
 प्रीयेखाला क दोमू :  
 “पुस्ती ना आबेनू नोच नोचेवात्”

अर्थात्—चूँ-चूँ करने वाली चली,  
 पोषण करने वाले को लाई ।  
 आई घर :  
 एक रात काटने दो ।

(गाड़ी पर राई को कूटने के स्थान पर लाते हैं और  
 दूसरे दिन कूटने के लिए रात भर वहीं रहने देते हैं ।)

खेती-बाड़ी एक स्थान पर बसने वालों का पेशा है । कटड़-जमींदारों के पास  
 घर, अनाज के ढेर और गुसलखाने थे । भोंपड़ियों में अंगीठियों पर रोटियाँ पकाई  
 जाती थीं । बुभारतों में इन सब का उल्लेख है—

“त्रीदत्सात् स्रेस्त्रीत्स ना ओदनोय पोदूश्क्ये लेभात्”

अर्थात्—तीस बहनें एक ही सिरहाने पर लेटी हैं ।  
 (छत के फट्टे जो एक सहतीर पर पड़े हैं)

“क्रीवी, कोर्यावी,  
 जालेग्ली, काक पावी,  
 आ काक स्ताली गोर्योची—  
 ओबलिजाली किरपीची”

अर्थात्—टेढ़ी-मेढ़ी  
 लेट गई जैसे मोरनी

और जैसे ही गर्म हुई—  
ईंटें चाटने लगीं । (भंगीठी में लकड़ियां)

“माय् तोलस्ता  
बोच् क्रास्ता,  
ओस्थेत्स गोर्बोवाती,  
सीन कुब्रेवाती ।”

अर्थात्—मां मोटी,  
लड़की लाल,  
बाप कुबड़ा,  
बेटा घूंघरदार बालों वाला ।

(भंगीठी, अग्नि, आग हिलाने का बेलचा और चिमनी का धुआं)

“पोदपाश्, पोदपाश् बिस्तोये पोत्ये  
नापूश्चू, नापूश्चू बेलोबो स्कोता”

अर्थात्—जोतूंगा, जोतूंगा खुला खेत,  
छोड़ दूंगा, छोड़ दूंगा सफेद पशुओं को । (भंगीठी में रोटी लगाना)

“कापन्योश् ना पल्योश्,  
पल्योश् ओबदेरयोश्—  
इ ना स्तोल् प्रिनेस्योश् ।”

अर्थात्—गंज पर टपकता है  
गंज फाड़ता है—

और मेज पर ले आता है । (कढ़ाही में पूड़े पकाते हैं)

खाना बनाने के काम आने वाली चीजों के बारे में बुभारतों के पश्चात्  
स्वयं खाने के बारे में बुभारतों पर आना स्वाभाविक था—

“चेतीरये चेतीरनूशकी,  
प्याती—कारानवूशका ।  
बोलोकली ओनी क्लिबूलीनकू  
चेरेत्त तीन दा उलेन्कू ।”

अर्थात्—चार की चौकड़ी,  
पांचवीं—पेंसिल ।

ले गये वे मुड़ी लड़की को  
बाड़ में से गढ़े में ।

(पाँच उँगलियाँ लकड़ी के चम्मच को दाँतों में से मुँह में ले जाती हैं)

“सेबका सेच्योत,  
देरेध्याइका बेच्योत,  
कुवशिन-मुवशिन पोवोराचीवायत ।”

अर्थात्—कुल्हाड़ा काटता है  
काठ-कठाड़ा ले जाता है,  
कुवशिन-मुवशिन उलटाता है ।

(चाकू काटता है, लकड़ी का चम्मच मुँह में ले  
जाता है और जिह्वा चबाने में सहायता करती है)

गाँव के कारोबार में सब्जियों की बड़ी महत्ता है । और बुभारत उसका  
भी चित्रण करती है—

“ने शित्तो, ने क्रोयेनो, आ फ्स्ये व रुबत्साख”

अर्थात्—न सिला है, न कटा है, परन्तु बखियों से भरा है ।  
( बंद गोभी )

“क्रूरलो, क्रूरलो—  
आ ने मेस्यात्स,  
जेलेनो, जेलेनो—  
दा ने वेनोक,  
येस्त्य् खवोस्त—  
दा ने मोश्”

अर्थात्—गोल, गोल—  
पर चाँद नहीं,  
हरा-हरा—  
पर हार नहीं ।  
पूँछ है—  
पर चूहा नहीं । (शलजम)

“ब्येज ओकोन ब्येज द्वेरेयेय  
पोलना गोरनीत्सा ह्युदयेय ।”

अर्थात्—बिन खिड़की, बिन किवाड़,

कमरा लोगों से भरा है । (खीरा)

किसान चिरकाल से भूमि में हल चलाते आये हैं, पशु पालते आये हैं । पशु खेती-बाड़ी में बहुत काम आते हैं । फिर भला बुभारत भी मनुष्य के घनिष्ठतम भिन्न पालतू-पशुओं का वर्णन किये बिना कैसे रह सकती थी—

“द्वोर बीरोवात,

ल्यूदी गोमोन्यात—

बीइत्ती ने भोगूत ।”

अर्थात्—किवाड़ छेदयुक्त,

लोग गुल मचाते हैं ।

बाहर नहीं निकल सकते । (बाड़े में भेड़ें)

“द्वा-स्ता बोदास्ता,

चेतीरये-स्ता खोदास्ता,

द्वा युखतारया, द्वा तुखतारया,

ओदीन तुकतार दा द्वा स्तेक्लीशका ।”

अर्थात्—दो से टक्कर मारती है,

चार पर चलती है,

दो युखतार हैं दो तुखतार हैं

एक तुखतार है, और दो शीशे हैं । (गाय-सींग, टांगें, कान, पूंछ और आँखें)

“शार-कोकशार पोइयोळ व शोन-गोरोब ना ग्रेमी-गोरोब

ज्वेरया मिखेया लोवित्य”

अर्थात्—शार-कोकशार शोन-शहर और ग्रेमी-शहर गया

मूसे जन्तु पकड़ने । (बिल्ली चूहे पकड़ती है)

बहुत सी बुभारतों में खेती के काम का वर्णन किया गया है—

“इचूका-वेलूगा

फस्ये पोलये ओबस्काकला,

दोमोय प्रीस्काकाला”

अर्थात्—इचूका<sup>१</sup>-सफेद

सारे खेत में कूद गई

कूद कर घर आगई । (हँसिया घास काटने के पश्चात्)

“इच्छा-पोन्यूरा  
खबोस्तोम विलनुला ।

लेसा पाली  
आ गोरी बस्ताली ।  
बोदा पोदोशला  
आ इच्छा उशला”

अर्थात्—इच्छा—पोन्यूरा  
पूँछ हिलाता गया ।  
जंगल गिर गये  
और पहाड़ खड़े होगये ।  
पानी आया,  
और इच्छा चला गया ।

( हँसिया घास को गिराती है और घास के ढेर लग जाते हैं, ओस पड़ती है और घास काटने वाले शाम को काम बंद कर देते हैं । )

“लेताल तेन्  
ना पेन्नोन देन् ।  
बोलोसी बेयेत  
दुब्रावा शुभीत ।”

अर्थात्—तेन उड़ गया  
पीतर के दिन ।  
बाल उड़ाता है,  
दुब्रावा शोर करता है ।

(घास काटना—तेन-हँसिया, बाल-घास, दुब्रावा-कटा हुआ घास)

प्राचीन गाँव में लोग घर पर बुने कपड़े पहनते थे । सन को अपने हाथों से बोना पड़ता था, काटना पड़ता था, कातना पड़ता था और बुनना पड़ता था तथा उससे कपड़े सीने पड़ते थे । बुझारतें कल्पित चित्रों में इन सब कामों का वर्णन करती हैं ।

“प्यात्प् प्यात्प् ओवेच्योक  
सेनो पोदयेदायत्त,

प्यात्पू प्याल्य ओवेणोक,  
नाञ्जाव ओतेबेगायूत ।”

अर्थात्—पाँच पाँच भेड़ें,  
घास खा रही हैं,  
पाँच पाँच भेड़ें  
पीछे भाग रही हैं ।

(कातना—पाँच उँगलियों से तकली घुमाई जाती  
है और दूसरी पाँच से घागा निकाला जाता है ।)

“व पोवपोल्ई ना लीभाख खोछात ।”

अर्थात्—भोरे में स्कीम्रो' पर चलता है ।

(बुनना—पाँवों से बुनने की मशीन का फटा हिलाते हैं ।)

“स कायू म्योरज्जन्योत  
स द्रूगोवो तायोत,  
आ वे सरेदीन्ये उत्का लेतायत ।”

अर्थात्—एक सिर से जम जाता है  
दूसरे सिर से पिघल जाता है,  
और बीच में बत्तख उड़ रही हैं ।

(बुनना—कपड़ा एक ओर से बढ़ता  
जाता है और ढरकी बीच में घूम रही है)

“कोन् स्तालनोय, खबोस्त लन्यानोय”

अर्थात्—घोड़ा लोहे का है और पूँछ कपड़े की । (सूई-घागा)

“ऊत्का नीरयाला, नीरयाला—  
आ खबोस्त पोतेरयाला ।”

अर्थात्—बत्तख गोते पर गोता लगाती गई,  
और पूँछ खो बैठी । (सूई से सीना)

बहुत सी बुभारतों में गाँव की घरलू चीजों का चित्रण है : जैसे बर्तन, कपड़े  
और फरनीचर :

१. बर्फ पर चलने की लकड़ी की फट्टियाँ ।

“कुरोच्चका स नोसकोम,  
फस्याकोमू पोबलोन्”

अर्थात्—नाक वाली मुर्गी,  
सब को नमस्कार करती है । (हाथ धोने का लोटा)

“ऊल्का व मोरये,  
खबोस्त न उगोरये ।”

अर्थात्—बत्तख सागर में  
पूँछ तलहटी पर ।  
(कड़छी पतीले में तैरती है और हथी बाहर होती है)

×

×

×

“नोगी, द्वा ऊल्का,  
ओवनो ब्रयूखो ।”

अर्थात्—तीन टाँगें, दो कान  
एक पेट । (नहाने का टब)

“बेला कूरीत्सा  
ना क्रास्नीख यायत्साख सीदीत ।”

अर्थात्—सफेद मुर्गी  
लाल अण्डों पर बैठी है ।

(चाय की केतली सामोवार पर—अर्थात् लाल कोयलों पर)

“चघोरनी कोन्  
स्काच्येत व ओगोन”

अर्थात्—काला घोड़ा  
आग पर कूदता है । (आग ठीक करने का बेलचा)

“पाल देम्यान स कोलोकोल्नी  
येबो कोस्ती जाग्रेमेलो,  
बीवेला भ्नेन्का-जारेवेला ।”

अर्थात्—देम्यान गिरजे की मीनार से गिर पड़ा  
उसकी हड्डियाँ घड़ाम से टूट गईं,  
स्त्री ने देखा—रोने लगी । (मिट्टी का बर्तन टूट गया)

“नेवेलीचोक-मुभीचोक,  
नोभकी तोनेन्की,  
पोदपोयासान कोरोतेन्को”

अर्थात्—छोटा-सा जवान,  
टाँगें पतली पतंग  
घेरा छोटा-सा । (भाड़ू)

“ढ्वा अयूइका  
चेतीरये रोभका”

अर्थात्—दो पेट,  
चार सींग । (सराहना)

“देस्यात्य मालचिकोव,  
ऊ काभदोवो स्वोय चुलानचिक”

अर्थात्—दस लड़के  
सबके पास अपनी-अपनी कोठड़ी है । (दस्ताने)

“स बोकामी, दा ब्येज रेबेर,  
स नोगामी, दा ब्येज गोलोवी”

अर्थात्—बाजूओंवाली पर रीढ़ की हड्डी नहीं,  
टाँगोंवाली पर सिर नहीं । (कुर्सी)

“चेतीरये आत्सा  
पोद ओदनाम् क्रीशेय स्तोयात्”

अर्थात्—चार भाई

एक ही छत के नीचे खड़े हैं । (मेज)

स्वयं मनुष्य के शरीर के विषय में भी बहुत सी बुभारतें हैं ।

“ढ्वा आत्सा चेरेज बोरोभकू भ्नीवूत,  
द्रुग-द्रुगा ने विद्यात् ।”

अर्थात्—दो भाई सड़क के आर-पार रहते हैं,  
एक दूसरे को नहीं देखते । (आँखें)

“पोलनो पोदपोल्ये बेलीख लेबेद्येय”

अर्थात्—भोरा सफेद बतखों से भरा है । (दाँत)

“ना मोरये बोश्चेचका लेभीत—

ने सोखन्योत, ने मोकन्योत,

ने रभावेयेत ।”

अर्थात्—सागर में एक छोटा-सा तख्ता पड़ा है—

न सूखता है, न गीला होता है ।

न जंग लगती है । (जिह्वा)

“स्तोयात द्वा दूबा,

ना दूबाक बोचका,

ना बोंचकये कोचका,

ना कोचकये त्रावा रास्त्योत ।”

अर्थात्—दो पेड़ खड़े हैं,

पेड़ों पर एक ढोल है,

ढोल पर एक छोटी-सी पहाड़ी है

पहाड़ी पर घास उगती है । (टाँगें, शरीर, सिर, बाल)

एक ऐसी हँसी-मजाक की बुभारत प्राचीन ग्राम-जीवन की अभिव्यक्ति करती है ।

“चतो पोद नामी येस्त्य् ई नाव नामी येस्त्य् ।”

अर्थात्—हमारे नीचे क्या है और ऊपर क्या है ?

उत्तर—“खटमल !” वे छत पर भी भागते हैं और फ़र्श पर भी । उन दुष्टों से छुटकारा नहीं ।

अपने आकार-प्रकार के अनुसार बुभारतें तरह-तरह की होती हैं, छोटे से प्रश्न और छोटे से ही उत्तर से लेकर एक लम्बी मोड़-तरोड़ की गई कहानी तक । उदाहरण के तौर पर एक ऐसी जटिल बुभारत इस प्रकार है—

“बील या ना कोपान्ये,

बील या ना श्लेपान्ये,

बील ना कुभालये

इ बील न पोभारये ।

मोलोद बील-सेम्यू कोरमील

स्तार स्ताल-बीकीनूली ना जाद्वोरकी  
बोरोन ने कल्पयेत इ उवेर ने येस्थ ।”

अर्थात्—पहले खोदा गया,

फिर मसला गया,

चाक पर चढ़ा

और आग पर चढ़ा

जवान था—परिवार पालता था,

बूढ़ा होगया—द्वार पर फेंक दिया ।

कौवा चोंच नहीं लगाता, और जानवर नहीं खाता ।”

(टूटा हुआ मिट्टी का बर्तन)

इस बुभारत में बर्तन बनाने की सब बातों का वर्णन है, मिट्टी खोदना, मसलना और उसको चाक पर चढ़ाना, यहाँ तक कि टूटे हुए टुकड़ों के साथ जो बीतती है उसका भी वर्णन है ।

बुभारत में केवल दिखाई देने वाली चीजों का ही वर्णन नहीं परन्तु भावों का भी वर्णन है । उदाहरण के तौर पर विद्या और पढ़ाई के विषय में बुभारतें हैं—

“बेलोये पोल्ये, चेरनोये सेम्या ।

कतो येवो स्येत तोत राजुमेयेत ।”

अर्थात्—सफेद खेत, काला बीज,

जो उसे बोता है, वह बुद्धिमान हो जाता है । (विद्या, लिखाई)

“ओविन जावारील, हुगोय नालील

स्कोल्कों नी खलेबाई-ना फस्येख ख्वातीत ।”

अर्थात्—एक ने उबाली, दूसरे ने उँडेली,

कितनी भी पीयो—पर सबके लिए काफी है ( पुस्तक )

प्राचीन गाँव में रूसी बुभारतें हजारों की तादाद में लिखी गई हैं । उनमें वर्णित चित्रों से जानकारी प्राप्त करके हमें पता चलता है कि उनमें पुरातन ग्राम-जीवन और कारोबार विषयक कितने प्रमाण सुरक्षित हैं और उनमें कितनी कल्पना और उड़ान भरी है ।

परन्तु बुभारत एक सजीव प्रकार है और सदा ताजा सामग्री से परिपूर्ण होता जा रहा है । अब भोपड़ी में खटमलों, पुराने हाथ धोने के मिट्टी के बर्तनों के विषय में भले ही बुभारतें न गढ़ी जाती हों । अब रूसी बुभारतों के लिए नये विषय हैं जो वर्तमान जीवन से लिये गये हैं ।

सोवियत बुभारत में राजनीतिक और जीवनविषयक प्रश्नों का भी वर्णन होता है। उनमें उस नयी संस्कृति तथा नयी कला की वस्तुओं का वर्णन मिलता है जो वर्ष-प्रतिवर्ष आज के रूसी गाँव में फैलती जा रही है।

“ने रोजा ने मोरकोवा,  
आ क्रास्नाया गोलोवका।”

अर्थात्—न गुलाब है, न गाजर है,  
पर लाल सिर है। (पाइनियर लड़का लाल रुमाल बाँधे)

“बिसीत प्रूशा,  
आ नेलइया सकुशात् ।”

अर्थात्—नाशपाती लटक रही है,  
पर खाई नहीं जा सकती।” (बिजली का बत्त)

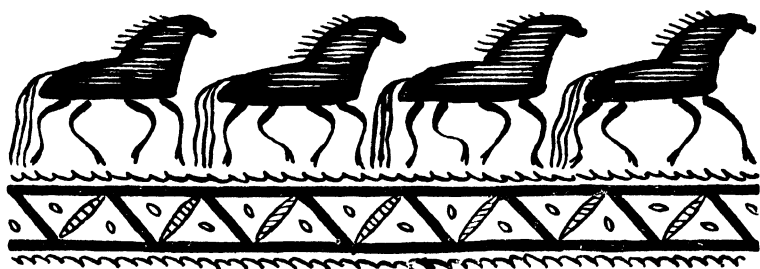
महायुद्ध ने जहाँ बिलीनों, गीतों, कहानियों, चास्तूष्काओं और कहावतों के लिए विविध विषय प्रस्तुत किये, वहाँ छोटी बुभारतों को भी बड़ा बढ़ावा मिला।

—“बूफो, क्या है ?” : “कौन कोवान्नी, खबोस्त बोरोवान्नी ?” (घोड़े की खुरियाँ लगी हैं और पूँछ गायब है)—गाँव के बच्चे बुभार पूछते हैं और दूसरे इसका निम्न उत्तर देते हैं:—

“जर्मन टैंक-हमारी सेना द्वारा तोड़े गये।”

आधुनिक विषयों पर बुभारतें निरन्तर बन रही हैं और सोवियत लोक-साहित्यिक उनको बड़ी दिलचस्पी से लिखते हैं, क्योंकि उस छोटी सी बुभारत में कूजे में सागर की भाँति सोवियत जनता के वे समस्त विचार, भावनाएँ और कल्पनाएँ प्रतिबिम्बित हैं जो हमें रूसी लोक-साहित्य के अन्य बड़े-बड़े प्रकारों में मिलती हैं। बुभारतों से भी हमें सोवियत गाँव की लोक-रचनाओं का अध्ययन करने के लिए उतनी ही सामग्री मिलती है जितनी कि बिलीनों, गीतों और नयी कहानियों से।





१३

## बाल लोक-साहित्य

लोक-साहित्य के अन्य प्रकारों के साथ-साथ रूस में बाल लोक-साहित्य की ओर भी उचित ध्यान दिया जाता है। इसमें बच्चों की खेलों में गाये जाने वाले गीत, चिट्ठे, बाल-कथाएँ और लोरियाँ आती हैं। ये बाल-साहित्य के छोटे-छोटे प्रकार हैं जिनका प्रयोजन केवल बच्चों का मन बहलाना है। इनमें 'बाल लोक-साहित्य' का नाम देने का एक और भी कारण है। इनकी रचना स्वयं बच्चे करते हैं और बड़े भी इनकी रचना केवल इसलिए करते हैं कि बच्चों का मन बहलाया जाय। इनमें बच्चों की कल्पना-शक्ति की झलक मिलती है। इनमें बच्चों की रुचि, दृष्टिकोण और सहानुभूति का प्रतिबिम्ब मिलता है। रूस के लोक-गीतों, कहानियों, बिलीनों और रूसी लोक-साहित्य के अन्य प्रकारों की तरह इनका भी उसी प्रकार दिलचस्पी और सावधानी से संग्रह किया जाता है।

### गिनती के गीत

इनको रूसी में "श्चीतालका" कहते हैं। बच्चों ने कोई खेल खेलना आरम्भ करना होता है। परन्तु खेल में पहले बारी कौन देगा इसका निर्णय वह गिनती के गीत गाकर करते हैं। गिनती के गीत गा-गा कर एक-एक करके बच्चे निकलते रहते हैं और अन्त में रह जाता है एक। वही खेल में बारी देगा। उदाहरण के तौर पर—

“इयोल बारा न  
 पो कूतीम गोराम,  
 बीरवाल ब्रावकू,  
 पोलोजील ना लावकू  
 स्तो येयो बोझ्म्यीत—  
 तो इ बीन पोइछीत.....”

अर्थात्—“भेड़ चली  
 ढलवान पहाड़ों पर से,  
 उखाड़ी घास  
 दूकान पर रख ली,  
 जो कोई इसको लेगा—  
 वह ही निकल गया”  
 “जायात्स बेली,  
 कुदा बेगाल ?  
 व लेस दूबोवी ?  
 च्त्तो ताम बेलाल ।  
 लीको ब्राल ।  
 कुदा कलाल ?  
 पोद् कोलोदू ।  
 वतो उक्राल ?  
 मीशा-शीशा  
 स्येला लीको,  
 पोबेभाला  
 ना बोयारस्की कोर  
 क त्सार्यू दा का त्सारीत्स्ये  
 क क्रास्नोय देवीत्स्ये  
 कोलेन्कोम मोलेन्कोम,  
 मेदोक, साखारोक  
 पोदी बीन, कोरोलोक ।”

अर्थात्—“सफेद खरहा  
 कहीं भाग गया ?

बलूत के जंगल में ।  
 वहाँ क्या किया ?  
 छाल उतारी  
 कहाँ रखी ?  
 तख्ते के नीचे ।  
 किसने चुराया ?  
 मीसे-मीसे ने ।  
 छाल खा गया  
 भाग गया  
 बोंयार (सौदागर) के सहन में  
 राजा और रानी के पास,  
 लाल सुन्दरी के पास ।  
 घुटनों के बल, प्रार्थना करते,  
 शहद, शक्कर,  
 निकल जा, बादशाह ।”

### चिढ़ें

बच्चे आपस में खेलते-खेलते लड़ पड़ते हैं और गुस्से में आकर एक दूसरे को चिढ़ाते हैं। इन चिढ़ों में केवल शब्दों के तालमेल का ध्यान रखा जाता है। उदाहरण के तौर पर एक लड़का तीन्का नामक लड़की को चिढ़ाता है—

“तीन्का स्वीन्का,  
 से पेचकी उपाला,  
 गोरशोक स्तोमाला”

अर्थात्—“तीन्का सूअरी,  
 अंगीठी पर से गिर पड़ी,  
 तोड़ डाला बर्तन ।”

तीन्का उस लड़के की चिढ़ का उत्तर देती है—

“फ्रेछा-ब्रेछा  
 स्येल मेदवेछा ।”

अर्थात्—“फेद्या-ब्रे द्या  
खागया भालू ।”

निकोलाय नामक लड़के के विषय में दो चिट्ठें निम्न प्रकार हैं—

“कोल्या कोल्या निकोलाय  
कीनूल शापकू ना साराय  
शापका बेरतीत्सा  
कोल्या सेर्दोत्सा ।”

अर्थात्—“कोल्या-कोल्या निकोलाय  
फेंक दी टोपी छप्पर पर ।  
टोपी हिलती है  
कोल्या गुस्से होता है ।

“कोल्या कोल्या, निकोलाय  
वोरोबीशोक ने पुगाय ।  
वोरोबीशकी बोयकी  
ने बोयात्सा कोलकी ।”

अर्थात्—“कोल्या, कोल्या, निकोलाय,  
चिड़ियों को मत डरा ।  
चिड़ियाँ डरपोक हैं  
कोल्या से नहीं डरतीं ।”

### गीतमय कथाएँ

बच्चों का मन बहलाने के लिए बूढ़ी अम्मा गीतमय कहानियाँ सुनाती है जो प्रायः लम्बी होती हैं । एक कथा निम्न प्रकार है—

“तूव तूव पास्तूशोक,  
ओसीनोवी बातोभोक,  
बालेको ली येछोश् ?  
ओत मोर्या वो मोर्या,  
वो कीयेवा गोरोदा ।  
चतो त्सार देलायेत ?  
ग्रामोतो पीदयेत ।

चतो त्सारीत्सा देलायेत ?

सीना स्नार्याभ्हायेत ।

काक सीना ज्वात्य ?

कोशयेम-लोकत्येम

पारयेम कोन्स्तांतीनोम ।

बूबेन तूलूबेन,

वीदाय स्वीयू बोचकू

जा मोयेवो सीना ।

ऊ त्सारया कोन्स्तांतीना

त्रोई वीरोता

इयोलकोम ओबीती

जोलोतोम पोकीती ।

कोजा ने प्रोस्कोचीत

रोगा ने प्रोलोमीला ।

कोजा प्रोस्कोचीला

रोगा प्रोलोमीत- ।

गछे का रोगा ?

नीकोल्का उग्योस ।

गछे-का नीकोल्का ?

व बलेत्कू उपाल ।

गछे का बलेत्का ?

वोदोय जालीलास् ।

गछे-का वोदा ?

बीकी बीपीली ।

गछे-का बीकी ?

व गोरू बीस्काकाली ।

गछे का गोरा ?

चेर्वी पोदतोचीली ।

गछे का चेर्वी ?

गूसी पोक्लेवाली ।

गछे-का गूसी ?

जा मोर्ये उलेतेली ।  
 गछे का मोर्ये ?  
 त्स्वेत्कामी ओबरोसलो ।  
 गछे का त्स्वेत्सी ?  
 देवकी पोरवाली ।  
 गछे का देवकी ?  
 जामूङ्ग बीस्काकाली ।  
 गछे का मूङ्गोवया ?  
 ना बोयनू उइली  
 नेमेत्स्येव बीट् ।

ति—“तूरू-तूरू चरवाहा  
 ओसिन<sup>१</sup> की लाठी  
 क्या दूर जायेगा ?  
 —एक सागर से दूसरे सागर को,  
 कीव शहर तक ।  
 जार क्या कर रहा है ?  
 लिख-पढ़ रहा है ।  
 मलका क्या कर रही है ?  
 लड़के का शृंगार कर रही है ।  
 लड़के का क्या नाम है ?  
 कोगत,<sup>२</sup> लोक्त  
 जार कोनस्तातीन ।  
 बूबेन,<sup>३</sup> तुलुबेन,  
 दे दो अपनी लड़की  
 मेरे लड़के को ।  
 जार कोनस्तातीन के  
 तीन दरवाजे हैं  
 सिलक से ढके हुए  
 सोने से मढ़े हुए ।  
 बकरी नहीं कूदती,

---

१. एक पेड़ । २. निरर्थक शब्द । ३. तोड़ा-मरोड़ा नाम ।

सींग नहीं तोड़ती ।  
 बकरी कूद गई ।  
 सींग तोड़ लिया ।  
 कहाँ है सींग ?  
 —निकोलका<sup>१</sup> ले गया ।  
 कहाँ है निकोलका ?  
 पिजरे में फँस गया ।  
 कहाँ है पिजरा ?  
 पानी में बह गया ।  
 कहाँ है पानी ?  
 बैल पी गये ।  
 कहाँ है बैल ?  
 पहाड़ पर चले गये ।  
 कहाँ है पहाड़ ?  
 कीड़े घसीट ले गये ।  
 कहाँ हैं कीड़े ।  
 बत्तखें खा गईं  
 कहाँ है बत्तखें ?  
 सागर की ओर उड़ गईं ।  
 कहाँ है सागर ?  
 फूल उग आये ।  
 कहाँ हैं फूल ?  
 लड़कियों ने तोड़ लिये ।  
 कहाँ हैं लड़कियाँ ?  
 शादी कर ली ।  
 कहाँ हैं पति ?  
 लड़ाई पर चले गये  
 जर्मनों को मारने ।”  
 अन्तिम तीन पंक्तियाँ कथा को दिलचस्प बनाने के लिए जोड़ दी गई हैं ।

इसी प्रकार की एक और कथा है—

“झिल्ला बिल्ला बाबीत्सा  
व तिशीन्ये पोद डूबोम ।  
पोशला बाबा पारीत्सा,  
स स्वोइम बोलनीम जूबोम ।  
नो काक बाबा चीन्नाया  
बड्याला पूक मोचाली—  
एतो स्काजका बलिन्नाया  
नाचिनाई सनाचाला”

अर्थात्—“एक बुढ़िया रहती थी  
शान्ति से भोजपत्र पेड़ के नीचे ।  
बुढ़िया भाप में नहाने चली  
अपने पीड़ायुक्त दाँतों के साथ ।  
परन्तु बुढ़िया कैसी भली है  
छाल का गठड़ ले गई  
यह कहानी लम्बी है,  
शुरू से आरम्भ करो ।”

और शुरू से आरम्भ करना पड़ता है, जब तक जी न भर जावे ।

### लोरियाँ

पालने में पड़ा बच्चा रो रहा है । बूढ़ी अम्मा बच्चे को पालना भुला रही है और लोरियाँ देकर बच्चों को चुप्प कराने और सुलाने की कोशिश कर रही है—

“बायू-बाई । बायू-बाई ।  
क नाम परियेखल मामाई,  
परोसित बासेन्कू ओतदाई ।  
आ मी वास्यू ने बाबीम  
परिगोवित्सा नाम सामीम”

अर्थात्—बायू-बाई । बायू-बाई ।  
हमारे यहाँ आई मामाई,  
हमारे यहाँ आई मामाई,  
कह रही है, वास्या दे दो ।

और हम वास्या नहीं देंगे,  
हमें स्वयं चाहिये .....”

वास्या रोता रहा । बुढ़िया दूसरी लोरी देती है ।

“इश्चयो वासेन्कू ब्र भूक्का  
उकाचायू ब्येज रोभूक्का  
ब्येज रोभूक्का, ब्येज बुवोचकी,  
बिसीपायसा व ल्यूलेचक्ये ....”

अर्थात्—“और वास्या की दोस्त  
भुनाती हूँ दूध की शीशी बगैर  
बगैर दूध की शीशी, बगैर भुनभुना,  
सो जा पालने में ....”

परन्तु जिद्दी बालक गला फाड़-फाड़ कर रोता जा रहा है । लोरियों की ओर वह तनिक भी ध्यान नहीं देता । बराबर टाँगें चलाता जा रहा है ।

ओहो ! तू तो बहुत बुरा बालक है । बुढ़िया ने बालक को पालने से उठाते हुए एक लम्बी साँस भरी । वास्या को गोद में लेकर वह भोंपड़ी में इधर-उधर टहलने लगती है और नयी से नयी लोरियाँ देती है—

“बायू-बायू-बायू-बाई ।  
पोइवी, बूका, ना साराई ।  
पोइवी, बूका, ना साराई,  
बूका, वास्यू ने पुगाई ।”

अर्थात्—“बायू-बायू-बायू-बाई ।  
जारे, होआ, घास की कोठड़ी में ।  
जारे, होआ, घास की कोठड़ी में,  
होए, वास्या को मत डरा ।”

“बायू-बायू-बायू-बाई ।  
ने लोभोस्, वास्या ना कराई ।  
वास्यू स करायू उपाछोश,  
मनोगो वेव नावेलायश ।  
लोभोस ता सेरेवोचकू,  
वेरभोस ना वेरेवोचकू ।”

अर्थात्—“वायू-वायू-वायू-वाई ।

वास्या, तू किनारे पर मत लेट ।

वास्या किनारे पर से गिर जावेगा,

बहुत नुकसान कर लेगा ।

तू लेट जा दरम्यान में,

रस्सी को पकड़ रख ।”

### बच्चों को हँसाने के गीत

जिद्दी बालक आखिरकार चुप हो गया । जब वह सोकर उठा और खेलने लगा तो बुढ़िया उसको पालने से उठाती है । बुढ़िया उसको गोद में लिये बैच पर बैठ जाती है । फिर वह बालक को हाथों पर उछालकर हँसाने लगती है ।

“वास्या, वास्या, मुझ्च्योक

वास्या सेल न सुचोक,

ना बेरयोजोविचोक ।

आ सुचोच्येक पोदलोलिलसा,

ई वास्यूत्का पोकातिलसा ।

वाख ! वाख ! वाख !”

अर्थात्—“वास्या, वास्या, जवान,

वास्या टहनी पर बैठ गया,

भोजपत्र के पेड़ की ।

और टहनी टूट गई,

और वास्या गिर गया ।

वाह ! वाह !! वाह !!!”

और उसने ऐसे किया मानो उसे फेंक रही हो । वास्या खिलखिलाकर हँसने लगा ।

“ऊती, ऊती, पोलेतेली,

ना गोलोवको वास्ये सेली,

ओनी सेली ना बलोचोक,

ना बेरयोजोविचोक ।

बलयू-बलयू-बलयू

भुराबलीनोचकू ।”

अर्थात्—“बत्तखें, बत्तखें, उड़ गईं,  
 वास्या के सिर पर बैठ गईं,  
 वे वास्या की चोटी पर बैठ गईं,  
 भोजपत्र के पेड़ जैसी ।  
 कल्यू-कल्यू-कल्यू  
 सारस ।”

और साथ-साथ वह ऐसे करने लगी मानो बत्तख वास्या के सिर पर चोंच मार रही हो । बच्चा इस पर खिलखिलाकर हँसता है ।

लोक-साहित्य के ये छोटे-छोटे प्रकार नीरस और छोटा होने के बावजूद भी संग्रहकर्ता के लिए उत्सुकता का कारण हैं । वे प्रायः विभिन्न प्रदेशों के नीरस श्रमिक-जीवन तथा स्थानीय आर्थिक विलक्षणता का चित्रण करते हैं । उदाहरण के तौर पर पोमोर में ऐसी लोरियाँ हैं जो पोमोर के मछेरों के जीवन की विलक्षणता को प्रतिबिम्बित करती हैं । उस प्रदेश में लोग मछली पकड़कर गुजारा करते हैं देखिये एक छोटी-सी लोरी इसका चित्रण करती है—

“बायू-बाई ! बायू-बाई  
 रीबका सेमगा परिपलिबाई ।  
 रीबका सेमगा, परिपलिबाई,  
 ओलेकस्चू पोवभिबाई  
 आलेकस्येका पोवरास्तयोत,  
 स तातोय ना मोरये पोइछोत  
 स्तानयेत रीबकू ओन लोबिस्  
 स्तानयेत मामू ओन कोमिस्”

अर्थात्—“बायू-बाई ! बायू-बाई !  
 सेमगा मछली, तैर आओ ।  
 सेमगा मछली, तैर आओ,  
 आलेकस्ये का इंतज़ार कर ।  
 आलेकस्ये बड़ा होगा  
 पिता के संग सागर पर जावेगा  
 वह मछलियाँ पकड़ेगा ।

उसी प्रदेश की एक और लोरी में कहा गया है ।

“बायू-बाय ! बायू-बाय !  
पोस्कोरयेय जासीपाय ।  
ने तो बीन् ना जीबकी,  
ओशू व मोर्ये रीबक्ये ।  
स्कूशाय रीबका, लीलेन्कू,  
नेपोइलूइनू !”

अर्थात्—“बायू-बाई ! वायू-बाई !  
जल्दी से सो जाओ ।  
नहीं तो पालने से फेंक दूँगी,  
फेंक दूँगी सागर में मछली के आगे  
खाले मछली लीला को ।  
कहना न मानने वाली को ।”

बाल लोक-साहित्य से यह भी पता चलता है कि बच्चों के विषय में रूसी गाँवों में क्या कुछ तब्दीलियाँ आ चुकी हैं । प्राचीन गाँव में जहाँ बड़ा परिवार साधारणतः मालिक और घर के मुखिया के सिर पर एक भारी पहाड़ था, जहाँ प्रत्येक नवजात ‘फालतू जीव’ प्रतीत होता था, वहाँ की सुकुमार और ममता से भरी माताएँ तक भी आवश्यकताओं तथा शक्ति-बाह्य काम से तंग आकर कभी-कभी बच्चों को गालियाँ दिया करती थीं कि वह उस घर में क्यों पैदा हुआ है जहाँ उसके बिना ही कुछ नहीं रखा था ।

आजकल की लोरियों की भंकार दूसरी है । इनके बच्चों को सँभालकर रखने, उनसे प्यार करने और उनसे न बिछुड़ने का वर्णन है—

“और हम वास्या को नहीं देंगे  
हमें स्वयं चाहिये……  
बच्चे—भावी सहायक हैं, परिवार की आशा हैं :  
आलेकस्ये बड़ा होगा  
पिता के संग सागर पर जावेगा  
वह मछलियाँ पकड़ेगा  
और माँ का पालन करेगा……”

अब प्रत्येक बच्चे के सुखी बचपन के लिए परिवार तथा सरकार की ओर से देख-भाल का प्रबन्ध है। आज बाल-लोक-साहित्य जीवन के नये सुख और उज्ज्वल नव-भविष्य का वर्णन करता है।









